सूचीपत्र महाराज साहब के वचनों का

भाग ३-सतगुरू व सतसंग महिमा

भाग ४-मन का रोग और उस की सँभाल और गढ़त ।

नं०	मज़मून वचन	पृष्ठ
	नुक़सान है ...	४०७
११	पहिले परमार्थी चाह होनी चाहिये फिर अभ्यास फिर रस आनन्द फिर नशा सरूर उस के बाद प्रेम इश्क़ पैदा होता है ..	४०९
१२	भजन का आसन ..	४१५
१३	जैसे कि आजकल विद्या वग़ैरा के मदर्से हैं इसी तरह सन्तों ने फ़क़ीरी का स्कूल भी जारी किया है	४१६
१४	अभ्यास से फ़ायदा बराबर होता है गोकि अभ्यासी को कभी २ मालूम न हो ...	४१९
१५	अव्वल दर्जे की दया यह है कि जीव को सतसङ्ग में हर्ष पैदा हो	४२०
१६	सतगुरु के गुप्त होने में भी मसलहत है—सतसङ्गी हो के भी नाजायज़ कार्रवाई करना या करम भरम में अटकना अफ़-सोस की बात है	४२२
१७	जहाँ आपा यानी ख़याल और चाह है वहाँ मौज की गुंजाइश नहीं है ..	४२६
१८	जो मालिक की मौज है वही संतों की मौज है और मौज की परख पहिचान ...	४२८

भाग ७-सवाल व जवाब

१	सवाल व जवाब	४३२

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

बचन

परमपुरुष पूरनधनी महाराज साहब के

भाग पहिला

चितावनी

॥ बचन १ ॥

॥ तन का बन्धन ॥

१—तन का बंधन बड़ा भारी है बड़ी गिरफ़्तारी है अजब पर्दा है द्वारे जो इसमें हैं वह भी बहिरमुख हैं और जो अंतरमुख द्वारे हैं उनके पट बंद हैं बज्र किवाड़ लगे हैं इनका खोलना मुश्किल है बड़ी भारी क़ैद है। सुर्त जो कि कुल मालिक की अंस है वह इसमें आके फंसी है और तन मन का रूप हो रही है मन जो कि जुगान जुग से सोया हुआ है वह जब जागे तब अलबत्ता उसका निरवार हो सक्ता है।

॥ कड़ी ॥

दे मदद बढ़ावें आगे, मन जुग २ सोया जागे ।
चढ़ बंक चले त्रिकुटी में, फिर सुन्न तके सरवर में ।
जहाँ सोभा हंसन भारी, वह भूमि लगे अति प्यारी ।

क़ैद में एक दो सुरत नहीं पड़ी हैं अनन्त सुरतें आकर फँसी हैं बल्कि मण्डल का मण्डल क़ैद में पड़ा है कालने यह क़ैद लगाई है, जितनी इसकी रचना है सब गिरफ़्तार है, सत्तदेश का बासी जब यहाँ आवे और वहाँ का पता बतावे और साथ ले चले तब अलबत्ता इस क़ैद से छुटकारा हो सकता है वरना किसी की ताक़त नहीं है कि अपने बल पौरुष से इस बन्दीख़ाने से बरी हो यानी रिहाई पावे ।

२—ऐसा जो सत्त देश का बासी है उसको सन्त अवतार कहते हैं जब यह पृथ्वी सत्तलोक के सनमुख आती है तब संत औतार होते हैं तब ही जीवों का उद्धार होता है। यह देश परदेश है काल का थाना है यहाँ से हटो चित्त अन्तर में जोड़ो बिरह और प्रेम बल से तिल को फोड़ो चरनों से मेल करो शब्द को सुनो अमृत रस पान करो इस देश को छोड़ो उस देश में पहुँचो यह सन्त मत है और सब काल मत हैं मन मत हैं ।

काल की अंश और वकील यानी मन इसके साथ है इससे पीछा छुड़ाना आसान बात नहीं है जब तक

सन्त सरन नहीं लेगा तब तक काम नहीं होगा और जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये धीरे धीरे तरक़्क़ी होती है, असल में तरक़्क़ी होती बड़ी तेज़ी से है मगर इसका जो ख़्याल है कि फ़िलफ़ौर काम हो जावे इस से समझता है कि देरी होती है—चाहिये कि धीरज से सतसंग और अभ्यास करे—संसार की आसा बासा जब दूर होगी और वहाँ की चाह पैदा होगी तब भौसागर से छुटकारा हो सक्ता है।

३—काल ने अजब तरह से जीवों को भरमा रक्खा है बहिरमुख कार्रवाई में सब को फँसा रक्खा है और जो कहीं अन्तर का भेद बतलाया तो वह भी अपने हद्द के अन्दर, इसके परे सत्त देश का पता थोड़ा बहुत जो इसको था वह छिपा के रक्खा—तीरथ ब्रत मूरत पूजा और विद्या बुद्धी में सब जीव अटक रहे हैं और पच रहे हैं और निज देश कहाँ है और कैसे वहाँ पहुँचना होगा उसकी किसी को ख़बर नहीं है। ऐसी हालत जीवों की देखकर राधास्वामी दयाल परम संत औतार धारन करके आये और अपना भेद आप खोल कर गाया—

॥ शब्द ॥

काल ने जगत अजब भरमाया। मैं क्या ? करूँ बखान ॥

॥ वचन २ ॥

॥ परमार्थी चाह ॥

परमार्थी कारस्वाई दुरुस्ती से बनने के लिये किस अंग की ज़रूरत है इसका जवाब ज़ाहिर है और वह यह है कि परमार्थी चाह इस के अंतर में होवे संसार में भी रहे तन मन की कार्रवाई भी करे मगर कैफ़ियत परमार्थी चाह की बनी रहे ऐसा न हो कि संसारी चाह ग़ालिब हो जावे। महज़ समझौती से कुछ नहीं होगा दरहक़ीक़त इसकी ज़रूरत समझे—मसलन स्त्री की प्रीत पति से है मगर घर में सास है ससुर है जेठ और ननद है तो उनसे भी उसका ख़िदमत ख़ातिरदारी और मुहब्बत का रिश्ता है लेकिन मुख्य प्रीत पति की है— उन से जो प्रीत है वह बदौलत पति की प्रीत के है— अगर पति कहे कि परदेश चलो तो फ़ौरन तइयार हो जाती है और सब का तअल्लुक़ छोड़ देती है— इसी तरह भक्त जन गो संसार में रहता है मगर चित्त में मुख्यता मालिक की प्रीत की रखता है और किसी चीज़ की लाग या बंधन नहीं रखता है—

अन धन और सन्तान भोग रस। जगत भोग और मिला जोग रस॥
पर किरपा सतगुर अस रहई। मोह न व्यापे जग नहिं फसई॥
रहे सुरत निर्मल गुरु साथा। शब्द मिले रहे चरनन माथा॥
अपनी दया से गुरु दियो दाना। सेवक तो कुछ माँग न जाना॥

२—संसारी चाह और वासना के सबब सुरत देह में फसी है फिर परमार्थी चाह जब इस में ग़ालिब होगी तब निरबंध निरलेप और देही से रहित होगी और विदेह हो कर अरूप में जा समायगी—बहुतेरे यहाँ सतसंग में भी संसारी चाह लेकर आते हैं कि बेटा होवे ब्याह होवे मत्था टेकते हैं तो अन्तर में यही कहते हैं कि बेटा होवे भेंट करते हैं तो भी ऐसी ही मन में माँग होती है यानी धन संतान वृद्धी की चाह अंतर में समाई हुई है तो फिर बतलाओ ऐसे जीवों को सतसंग से क्या फ़ायदा होगा ।

ऐसी दिवानी दुनियाँ, भक्ति भाव नहिं बूझै जी ।
कोइ आवै तो बेटा माँगै, यही गुसाईं दीजै जी ॥
कोई आवै दुख का मारा, हम पर किरपा कीजै जी ॥
कोइ आवै तो दौलत माँगै, भेंट रुपइया लीजै जी ।
कोइ करावै ब्याह सगाई, सुनत गुसाईं रीझै जी ॥
साँचे का कोइ गाहक नाहीं, झूठे जगत पतीजै जी ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, अंधों को क्या कीजै जी ॥

३—अगर किसी से न भजन दुरुस्ती से बनता है न ध्यान बनता है और न सुमिरन होता है मगर चित्त में चाह परमार्थ की लगी हुई है तो बस वह मालिक का हो गया और वही अपनाया हुआ है. दया और हिफ़ाज़त हमेशा उस के संग हैं । राजपूताना में बाज़ औरतों का ब्याह पति की कटारी या दुपट्टे से

हो जाता है और हरचन्द कि पति को देखा भी नहीं है तौ भी वह पतिब्रता का प्रन पूरा और प्रबल धारन करती है ऐसे ही भक्त जन का अगर भगवन्त से मेला नहीं हुआ है तौ भी उस को सिवाय अपने प्रीतम से मिलने के और कोई चाह नहीं रहनी चाहिये अगर और चाह है तो पतिब्रत पूरा नहीं है बिभचार का अंग मौजूद है।

॥ साखी १ ॥

पतिब्रतां के एक है, बिभचारिन के दोय।
पतिबर्ता बिभचारिनी, कहो क्यों मेला होय॥

॥ साखी २ ॥

पतिबर्ता पति को भजे, और न आन सुहाय।
सिंह बच्चा जो लंघना, तौ भी घास न खाय॥

॥ साखी ३ ॥

पतिब्रतां के एक तू, तुझ बिन और न कोय।
आठ पहर निरखत रहे, सोइ सुहागिन होय॥

॥ साखी ४ ॥

पतिबर्ता पति को भजे, पति भज धरे बिश्वास।
आन दिशा चितवे नहीं, सदा जो पिव की आस॥

४—संसारी लोगौं का इष्ट क्या है धन संतान वृद्धी। जिन को कि देवता औतारौं का इष्ट है उन को यह सिखलाया जाता है कि जिस के बेटा नहीं है उसको गत नहीं होगी। मुए पीछे भी यहाँ की आसा बासा बंधवाते हैं और बेटा होने के लिये अपने इष्ट से

इक़रार करते हैं कि पाँच रुपया भेंट करूँगा जो बेटा होगा—आज कल जितने मत मतान्तर हैं निपट स्वार्थी और फँसाने वाले हैं।

५—कौन कौन संसारी अंग अन्तर में मौजूद हैं उन की परख भजन व ख़्वाब में होती है—मसलन मोह की परख करनी है, अगर स्त्री से प्रीत है तो अक्सर ख़्वाब या भजन में ज़रूर याद आवेगी और जब सफ़ाई होगी तब किसी की याद न आवेगी और न किसी के हर्ज मर्ज में रंज होगा। इस तरह चाह की परख हो सक्ती है—बिलकुल लापरवाही भी अच्छी नहीं है क्योंकि संसारी कारोबार भी करना है। जैसे तराज़ू में तौल करते हैं वैसे एक पलड़े में परमार्थी चाह और दूसरे में संसारी चाह की तौल करनी चाहिये अगर दोनों पलड़े ऊपर नीचे डगमगाते हैं तो वह ठीक हो जायेंगे और जो कहीं संसारी चाह का पलड़ा नीचे हो गया तो वह धोखा खायगा, उस का अंतर चाह से भरा हुआ है। जिसके कि अन्तर में संसारी चाह भरी हुई दिन रात भजन और सतसंग करे तो भी दीदार से ख़ाली है वह चाहे और महरूम है अगर लड़ाका है या और कोई ऐब है तो भी कुछ मुज़ायक़ा नहीं है—जैसे बहुतेरी औरतें हैं अनाप शनाप उनकी कारवाई होती है और बड़ी लड़ाकी होती हैं लेकिन पतिव्रत में

बड़ी ज़बर हैं ऐसेही अगर कोई लड़ाका है मगर चाह परमार्थ की सच्ची है यानी सिवाय मालिक से मिलने के और कोई चाह नहीं है तो पतिबर्त पूरा है और वही प्यारी नार है यानी मालिक का प्यारा भक्त है—

॥ साखी १ ॥

पतिवर्ता मैली भली, काली कुचिल कुरूप।
पतिवर्ता के रूप पर, वारूँ कोटि सरूप॥

॥ साखी २ ॥

पतिवर्ता मैली भली, गले काँच की पोत।
सब सखियन में यों दिपे, ज्यों रवि शशि की जोत॥

॥ साखी ३ ॥

विभचारिन विभचार में, आठ पहर हुशियार।
कहें कबीर पतिवर्त बिन, क्यों रीझे भरतार॥

६—भूल चूक सब से होती है किस से नहीं होती अगर इस जन्म में कोई बुरा काम नहीं किया है तो अगले जन्म में किया होगा इस लिये भूल चूक सब माफ़ है। बालमीक देखो बहेलिया थे बहेलियापन से बढ़का और कोई पाप कर्म नहीं है तौभी क्या दर्जा उन्हों ने पाया हर कोई जानता है रामायन उन्हों ने बनाई। कहने का मुद्दा यह है कि अगर चाह परमार्थी है और कोई ऐब है तौ भी अपनाया हुआ है और जो चाह परमार्थी नहीं है कोई और ही चाह अंतर में है वह चाहे दिन रात सतसंग में रहे और सेवा करे

यानी सनमुख रहै तौ भी दर्बार से ख़ारिज है वहाँ उस का दख़ल नहीं है ॥

पुरुष सेव यह नित्त करती रही। वले मन में कुछ चाह धरती रही ॥
किया उसने इस तरह इज़हार हाल। कि हे सतपुरुष मेरे दाता दयाल ॥
छुटे दीप में राज दीजे मुझे। सुरत अंश का बीज दीजे मुझे ॥
मुझे यहाँ का रहना सुहाता नहीं। तुम्हारा मुझे देश भाता नहीं ॥
यह सुनकर दिया पुर्ष ने अस जवाब। निकल जाय तू यहाँ से ख़ाना ख़राब ॥

॥ वचन ३ ॥

॥ उपाशना की महिमा ॥

उपाशना का दर्जा वड़ा भारी है—प्रीत के साथ अपने इष्ट का ध्यान करना इसको उपाशना कहते हैं। अगर सुरत मन का सिमटाव भी है, रस आनंद भी आता है, पर भक्ती यानी प्रेम नहीं है तो सब कार-वाई कर्म में दाख़िल है उपाशना नहीं है। शुरू में कर्म की ज़रूरत है कर्म यानी करतूत मूल है मगर नतीजा उसका उपाशना होना चाहिये, इस में दर्जे हैं, पहले कर्म वाद उस के उपाशना। हर कोई अपनी परख पहिचान कर सकता है कि परमार्थी कारवाई जो वह करता है वह आया कर्म है या उपाशना—अगर इश्क़ है तो उपाशना का दर्जा है नहीं तो कर्म है—मौज की परख पहिचान भी पूरे तौर से तब ही आती है जब

कि उपासना शुरू होती है—भक्तजन हमेशा ऐसी कार्रवाई करता है जिस में कि मालिक की प्रसन्नता होवे।

२—जतन करना ज़रूरी और लाज़िमी है। सीपी का काम मुँह खोलना है और मालिक का काम बरखा करना है अगर मुँह ही न खोलेगा यानी जतन नहीं करेगा तो दया कैसे आवेगी। जब चरन धार से मेला होता है तब जैसे मीन जल में केल करती है वैसे ही भक्त की सुरत अमृत की धार में कलोल करती है-कहने का मुद्दा यह है कि सिवाय प्रेम के जितनी परमार्थी कार्रवाई हैं सब रूखी फीकी हैं—

प्रेम बिना सब करनी फीकी। नेकहु मोहि न लागे नीकी।
घट धुन रस दीजै॥

३—मालिक जिस पर निज बख़्शिश फ़रमाते हैं उसको प्रेम का किनका दान देते हैं यह दात मालिक ने अपने हाथ में रक्खी है सिवाय राधास्वामी दयाल के किसी की ताक़त नहीं है कि प्रेम की दौलत बख़्शिश करे—प्रेम में रस और आनंद है जिसको कि प्रेम का सरूर आता है उस को कुछ ख़याल करनी वग़ैरह का नहीं रहता है उसकी करनी क्या है—मुन्तज़िर रहना, जैसे सीपी स्वाँत बुन्द के लिये मुन्तज़िर

रहती है—ग़रज़ कि मुन्तज़िर रहना यही भक्त जन की करनी है।

४—जब प्रेम प्रगट होता है काम क्रोध वग़ैरह सब अंगों पर पटरा पड़ जाता है एक प्रीतम ही रह जाता है और बाक़ी सब भस्म हो जाता है। जब तक कि प्रेम नहीं है तब तक बाँबी का ठोकना है साँप बिल में बैठा हुआ है उसको मारना चाहिये जब तक इश्क़ नहीं है तब तक साँप याने मन नहीं मरता जब इश्क़ आता है तब घट के सब दूत नाश हो जाते हैं।

इश्क़ वह शोला है जिस घट में वो रोशन हो गया।
एक प्रीतम रह गया, और बाक़ी सब जल भुन गया॥

प्रेम जब आया सभी को रद्द किया।
एक प्रीतम रह के बाक़ी दह गया॥
वाह वाह है प्रेम तू है निरमला।
ग़ैर को प्यारे सिवा दीना जला॥

५—जब तक जिसके मन में मान है तब तक उपासना नहीं है वह गोया अभी प्रेम रूपी बाज़ के पंजे में आया ही नहीं है।

॥ साखी १ ॥

मन पंछी तब लग उड़े, विषय वासना माहिं।
प्रेम बाज की झपट में, जब लग आयो नाहिं॥

॥ साखी २ ॥

जहाँ बाज़ बासा करे, पंछी रहे न और।
जिस घट प्रेम प्रगट भया, नहीं कर्म को ठौर॥

६—मान अंग कई एक क़िस्म का होता है—ज़ात बिरादरी का, हसब नसब का, उहदे हकूमत का, गुन जौहर और हुनर का और परमार्थी करनी का—तीन लोक तक किसी को ताक़त नहीं है सिवाय राधास्वामी दयाल कुल मालिक के कि मान को मरदन कर सके।

॥ साखी १ ॥

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह।
मान बड़ाई ईर्षा, दुर्लभ तजनी येह॥

॥ साखी २ ॥

माया तजी तो क्या हुआ, मान तजा नहिं जाय।
मान बड़े मुनिबर गले, मान सबन को खाय॥

॥ साखी ३ ॥

काला मुँह कर मान का, आदर लावे आग।
मान बड़ाई छाँड़ कर, रहे नाम लौ लाग॥

॥ साखी ४ ॥

मान बड़ाई कूकरी, धर्मराय दरबार।
दीन लकुटिया बाहिरा, सब जग खाया झार॥

७—भक्तजन में अगर गुन जौहर या बल पौरुष है तो अपने प्रीतम का है और जिस में कि आपा है उसका आपा नदारद किया जाता है—जीव की ताक़त नहीं कि आपे को वह आप मार सके—राधास्वामी दयाल हर तरह लड़ा भिड़ा के हिला हिला के मार मार के इसका आपा खोसते चले जाते हैं।

सतगुरु तोहि छिन छिन पोसें। हंसना तेरी सब विधि रोसें॥
तू कर उन चरनन होसें। सतगुर से मत कर रोसें॥

८—जैसे जब तक दरख़्त की जड़ नहीं काटी जाती है उस में नई नई डालियाँ और पत्ते निकलते हैं लेकिन जो पेड़ का नाश करना मंजूर है तो पहिले जड़ काटनी चाहिये, या जैसे माला का सुमेर निकाल दो तो सब दाने माला के आप गिर पड़ेंगे ऐसेही आपा जो विकारों का मूल है पहिले राधास्वामी दयाल उसको काटते हैं उसी पर हमेशा नज़र उनकी रहती है क्योंकि और दूसरे विकारी अंगों में जब जीव का बर्ताव होता है तब अंतर में वह पछताता है और अपने को नालायक़ समझता है इससे मसाला ख़ारिज होता है लेकिन जो कोई इसकी मान बड़ाई करता है तो फूलता है इसमें उलटा सुर्त का बाहर बखेर होता है और इसका कोई इलाज नहीं है सिवाय नज़र इनायत राधास्वामी दयाल के—अगर दूसरा इसको नालायक़ कहे तो लड़ने को तइयार होता है और आप अपने को जो वाक़ई नालायक़ समझता है तो उसे ग़ुस्सा न होना चाहिये—असल में पूरे गुरू जब इसको मिलते हैं तब मान मर्दन होता है और जो झूठा गुरू मिला वह इसकी ख़ुशामद और ख़ातिरदारी करेगा—जो सच्चे गुरू हैं वह कभी प्यार भी करते हैं और कभी

भींचा भाची करते हैं यानी फटकारते हैं—कहने का मुद्दा यह है कि जब भक्ती अंग जगता है तब यह नोच नोच के दोनों हाथों से मान अंग को दूर फेंकता है और धीरे धीरे उपाशना का दर्जा हासिल करता है ॥

॥ बचन ४ ॥

सुरत की चढ़ाई सहज नहीं है और अभ्यास यानी भजन से सुमिरन ध्यान में ज़ियादा आसानी है

१—अक्सर सतसंगी समझते हैं कि जैसे और संसारी मामूली कारोबार करते हैं वैसे ही परमार्थी कार्रवाई भी कर लेंगे मगर उनकी ग़लती है—ज़रा बुख़ार में सुरत का खिंचाव होता है तो पटरा हो जाता है और अभी अँतःकरन से सुरत नहीं खिंची है—और जब वहाँ से हटाव और खिंचाव होगा वह तो ठीक मौत के रास्ते पर चलना है—उसमें क्या तकलीफ़ होगी उस की अभी इसको ख़बर भी नहीं है। शब्द का सुनना या रस का मिलना या कभी कुछ झलक का नज़र आना अच्छा है मगर इस से यह न समझना

चाहिये कि काम हो गया । ए. बी. सी. सीखने से बड़ी किताब के पढ़ने में मदद मिलती है. ऐसा नहीं कि ए, बी, सी, सीख लिया और काम बन गया और शान्ती आगई—ऐसे ही शब्द के सुनने वगैरह से मदद मिलती है मगर काम यह ही करना है कि जैसे मौत के वक्त सुरत मन का सिमटाव और खिंचाव अंग २ रग २ में से होता है वैसे ही जीते जी करना होगा, और एक रोज़ सब की ऐसी हालत होगी। और मौत के वक्त क्या तकलीफ़ होती है सिर्फ़ वही जानता है जो कि सच्चा परमार्थी है वही हर तरह की ज़ेर-बारी उठाता है बल्कि अपना तन छोड़ने के लिये भी तइयार रहता है ।

२—संसार में धन या हुकूमत हासिल कर के शाँती आवे तो कोई बात नहीं है मगर परमार्थ में ज़रासा रस आने या शब्द सुनने में शांती का आना बड़ा मुश्किल है, बड़ा विकट और बेड़ा रास्ता है. जीतेजी मरना पड़ेगा तब साध बनेगा, अपना बल पौरुष जब छोड़ेगा और हारेगा तब कहेगा कि हे मालिक मेरे में कोई ताकत नहीं है अगर तू मेरी मदद नहीं करता तो मैं एक कदम आगे नहीं चल सकता—यह जब आजिज़ होता है तब तहेदिल से पुकार प्रार्थना करता है और जैसे समुद्र में डूबता हुआ आदमी

पुकारता है वैसे ही यह भी मदद के लिये पुकारता है। अभ्यासी को जो तकलीफ़ होती है उस से वही वाख़बर है और सब बेख़बर हैं।

॥ शेर हाफ़िज़ ॥

शबे तारीको बीमे मौजो गिर्दाबे चुनीं हायल।
कुजा दानंद हाले मा सुबुक्साराने साहिलहा ॥

यानी रात अंधेरी और खौफ़ लहरों का और उस पर भँवरें पड़ रही हैं यह कैफ़ियत हमारी ऐसे लोग जो कि किनारे पर रहते हैं और ऐसी आफ़त नहीं झेली है क्या जान सकते हैं।

३—संसारी तो उस तकलीफ़ से बिलकुल बेख़बर हैं और जो कि सतसंगी हैं वह भी बहुतेरे नहीं जानते हैं कि सुरत की चढ़ाई में क्या तकलीफ़ होती है मन ऐसा शरीर है कि अभ्यास में बैठना नहीं चाहता है, भजन के वक़्त कहीं खुजली होती है कहीं मच्छड़ काटते हैं या और कोई काम सूझ पड़ता है, इसको चाहिये कि मन पर किसी क़दर सख़्ती करे और जिस रोज़ मन ज़ियादा शरारत करे आध घन्टे के बदले दो घन्टे अभ्यास में जमकर बैठे या सिर्फ़ आंखें बन्द करके बैठा रहे, सो न जावे, तौ भी मन के इञ्जर पिञ्जर टूट जावेंगे।

४—ध्यान में सीतलता, निर्मलता, निर्बिघ्नता है

और प्रेम अङ्ग जागता है, गुरु स्वरूप गोया घट का ताला खोलने की कुञ्जी है।

॥ कड़ी १ ॥

गुरु कुञ्जी जो बिसरे नाहीं। घट ताला छिन में खुल जाहीं॥

॥ कड़ी २ ॥

ताते शब्द किवाड़, खोलो गुरु कुञ्जी पकड़।

॥ साखी ॥

कहैं कबीर निरभय हो हंसा। कुञ्जी बताऊँ ताला खुलन की॥

बग़ैर प्रीत के ध्यान नहीं बन सकता है इसलिये नाम के सुमिरन पर ज़ियादा ज़ोर दिया गया है—नाम के संग नामी मौजूद है—नाम से नामी मिलता है—

॥ शब्द ॥

जब देगा तेग मैं ने जो मालिक के नाम का।
दिल और जान भेंट हुए गुरु के नाम का॥
प्यासों की प्यास बुझ गई धार से नाम के।
ऐसा है आबे शीरीं अमी रूप नाम का॥
नामी व नाम में है नहीं फ़र्क़ देख ले।
छवि यार की दिखाता है यह तेज नाम का॥
हिरदे में तुझ को दीख पड़ेगा जमाले यार।
जो रगड़ा उम्र पै नित्त किया जावे नाम का॥
मालिक का संग तुझ को मिला यह मर्हाद ज्ञान।
जो दिल में तेरे लाग रहा ध्यान नाम का।
कर मग्न नाम का जो तू दीदार को चहे।
मालिक का मेल है जो दूजा मेल नाम का॥

मालिक के लोक में तेरा हो जायगा गुज़र।
जो तू उड़ेगा ऊँचे को बल लेके नाम का॥
सुमिरन से नाम गुरुके तू गुमगी न हो कभी।
मालिक का प्यार आवे जो हो प्यार नाम का॥

५—भक्त जन को चाहिये कि नाम को स्वाँसौं में जज़्ब कर ले और निरन्तर नाम की आराधना यानी जाप करता रहे—नाम का सुमिरन जब पक्का हो जावेगा तब ध्यान भी अच्छी तरह से बन सकेगा फिर इसको इख़्तियार है चाहे सुमिरन अलग करे चाहे ध्यान सुमिरन दोनौं मिला कर करें, सतगुरु शब्द स्वरूप हैं इस लिये गुरु स्वरूप का ध्यान करने से गोया शब्द का भी संग साथ साथ हो जावेगा और स्थान स्थान पर नाम रूप और शब्द तीनौं एक हो जाते हैं, और साफ़ साफ़ कह भी दिया कि—

गुरु की मूरत बसी हिये में। आठ पहर गुरु संग रहाये॥
अस गुरु भक्ति करी जिनपूरी। ते ते नाम समाये॥
स्वाँत बूँद जस रटत पपीहा। अस धुन नाम लगाये॥
नाम प्रताप सुरत अब जागी। तब घट शब्द सुनाये॥

यानी पहले नाम का सुमिरन जब करेगा तब गुरु की प्रीत जागेगी और फिर शब्द खुलेगा।

६—अक्सर लोग सुमिरन नहीं करते शुरू ही में अभ्यास पर ज़ोर देते हैं, नतीजा यह होता है कि अहंकार के पुतले हो जाते हैं या आप बन बैठते हैं

या रूखे फीके होके छोड़ देते हैं—ग़रज़ यह है कि इस के जतन से कुछ नहीं होगा शब्द भी गुरू की मेहर से खुलेगा और जब तक गुरुमुखता नहीं होगी सुरत की चढ़ाई हर्गिज़ नहीं होगी—

गुरुमुखता बिन शब्द में पचते, सो भी मानुष मूरख जान।
शब्द खुलेगा गुरू मेहर से, खैंचे सुरत गुरू बलवान।
गुरुमुखता बिन सुरत न चढ़ती, फूटे गगन न पावे नाम।
गुरुमुखता है मूल सबन की, और साधन सब शाखा जान।

॥ बचन ५ ॥

तजरबा जो शुरू में होता है वह काफ़ी नहीं है

सुमिरन ध्यान और भजन के शुरू में जो तजरबा होवे उस को पूरा समझना नहीं चाहिये बल्कि और ज़ियादा तजरबा हासिल करने की उम्मेद रखना चाहिये। अगर कुछ भी तजरबा नहीं है तो वाचक ज्ञान है, इल्म है अमल नहीं है, आलिम है अमल नहीं है। जिस क़दर अभ्यास बढ़ता जावेगा नया २ तजरबा होता जावेगा—बानी में जान बूझ के पूरा भेद नहीं खोला है—जिस क़दर तरक़्क़ी होगी आप से आप सब भेद दर्जे बदर्जे खुलता जावेगा और

जुज़वी तजरबा काफ़ी नहीं है ज़ियादा तजरबे की चाह और उम्मेद रखनी चाहिये।

२—और बानी में जो कुछ कहा गया है वह कोई शाइरी नहीं है, जिस क़दर हो सकता है इख़्तसार से बयान किया गया है बिस्तार और मुबालिग़ा नहीं है, मुरीद जब होगा तब ख़बर पड़ेगी—मुरीद नाम मुरदे का है तीसरे तिल में जब सुरत की धार धसती है तब मुरदा होता है—तन से और थोड़ा बहुत कर्मों से जब न्यारा होके तीसरे तिल में परवेश करेगा तब मुरीद होगा। बाज़े सन्त मत के अभ्यासी मुख़्तलिफ धुनें सुनकर आप बन बैठते हैं जैसे कई एक साधू अपने को पुजवाते हैं सन्त मत में सिद्धि शक्ति की भी सख़्त मुमानिअत है जैसे कि और मतों में बाज़ करते हैं—यह काल का अंग बड़ा झीना है अभ्यासी को तजरबा कर के इस से क़तई बचना चाहिये।

३—दूसरा फन्दा काल या यह है कि दो चार तारीफ़ करनेवाले खड़े कर देता है और वह उस मान बड़ाई और तारीफ़ में कुप्पे के मुवाफ़िक़ फूल जाता है इस से बृत्ति उस की बहरमुख और फैली हुई रहती है इसी पर कहा है कि—

॥ कड़ी ॥

गुरु की ताड़ और मार सह धर कर पियार।
मूर्खों की अस्तुती पर खाक डार॥

॥ कड़ी ॥

जो नज़र अपने क़सूरों पर करे।
जल्द पूरा होवे रस्ता तै करे॥
आप को जाने है पूरा जो अजान।
थक रहा रस्ते में हक़ के वह निदान॥

४—कहने का मुद्दा यह है कि सन्त मत सत्त मार्ग है निज मार्ग है अटपट है सटपट कोई लख नहीं सक्ता है—कहा है कि—

॥ कड़ी ॥

पिंड का सब भेद पोशीदा मुझे ज़ाहिर हुआ।
मेहर से पूरे गुरु के काम मेरा बन रहा॥
सुर्त ने जब धुन को पकड़ा आसमाँ पर चढ़ गई।
हो गई फ़ाथिल वहाँ पर फिर न कोई गम रहा॥

यानी पहिले जब पिण्ड का पोशीदा भेद मालूम हुआ तब सुरत आवाज़ को पकड़ के चली। अब पूछो उन लोगों से कि तुम को पिण्ड की क्या ख़बर है किस तरह रचना हुई और कौन शक्तियाँ कारकुन हैं कुछ भी ख़बर नहीं है—ज़रा सी सिद्धि शक्ति चहे वहे का खेल सीख के महात्मा बन जाते हैं जैसे एक हज़रत ने किसी को कह दिया कि इम्तिहान में पास हो जावेगा और वह पास हो गया बस उसका यक़ीन आ गया और वह सिद्ध बन बैठे। वह लोग

सब नादान हैं सन्त मत की ज़रा भी इन को ख़बर नहीं है।

॥ बचन ६ ॥

॥ कड़ी ॥

जो कोइ समझे सैन में, ता सों कहिये बैन।
सैन बैन समझे नहीं, ता सों कुछ नहिं कहन॥

जो कि स्याना है वह इशारे में समझ लेता है और जो गँवार है उस को बहुतेरा समझाओ तौ भी नहीं समझता है, ऐसे मूरखों के साथ मौन रहना बेहतर है। हाकिम के साथ जिस तरह बरताव करना चाहिये उस के लिये मौक़ा और उस के मिज़ाज का ख़याल जिस को नहीं है वह नादान है, हमेशा हाकिम का मिज़ाज और मौक़ा देख कर बोलना चाहिये।

दृष्टान्त—एक राजा था उससे एक बार उसकी रानी ने कहा यह क्या अन्धेर है कि बिचारा दरबान दिन रात पहरा देता है और काम करता है उस को चार रुपया महीना तनख़्वाह मिलती है और जो वज़ीर है कुछ काम नहीं करता है एक आध घण्टे इधर उधर थोड़ा सा काम कर लिया उस को दो हज़ार रुपया मिलता है इस का क्या सबब है। राजा ने कहा

अच्छा रानी हम तुम को इस का तमाशा दिखाते हैं हुक्म हुआ कि दरवान को बुलाओ। दरवान हाज़िर हुआ राजा ने कहा हम ने सुना है कि कुतिया जो दरवाजे पर बैठी है उस के बच्चा हुआ है, जाओ देख आओ। दरवान देख के आया और कहा हाँ बच्चा हुआ है। राजा ने पूछा कै बच्चे हुए हैं—कहा यह नहीं कह सकता। राजा ने कहा अच्छा जाओ फिर देख आओ। उस ने आ के कहा चार बच्चे हैं। राजा ने पूछा कै नर हैं और कै मादा। दरवान ने कहा यह नहीं देखा। फिर भेजा गया, आके जवाब दिया कि दो कुत्ते और दो कुतियाँ हैं। राजाने पूछा क्या रंग उनका है, कहा यह नहीं देखा। फिर भेजा गया आके कहा सफ़ेद और काले हैं। राजाने पूछा कै सफ़ेद और कै काले हैं, कहा यह नहीं गिना फिर भेजा गया आके कहा दो सफ़ेद और दो काले हैं। राजा ने पूछा कुत्ते सफ़ेद हैं या काले, दरवान ने कहा यह नहीं देखा। ग़रज़ कि इसी तरह कई बार वह आया गया। बाद इसके राजा ने वज़ीर को बुलाया और कहा, सुना है कि कुतिया के बच्चा हुआ है जाके देख आओ वज़ीर गया और आ के अर्ज़ किया—चार बच्चे हुए हैं, दो कुत्ते और दो कुतिया हैं कुत्ते सफ़ेद और कुतिया काली हैं और इन इन

तरह उन के पालन पोषन का इन्तिज़ाम कर दिया गया है—तब राजा ने रानी से कहा देखा फ़र्क़, वह बैल के मुआफ़िक़ था, जैसे ठेला जाता था वैसे चलता था, और वज़ीर ने बिना कहे सब सवालों के जवाब दे दिये और बन्दोबस्त भी सब कर दिया। रानी बोली बेशक सैन और बैन समझने का बड़ा फ़र्क़ है—स्याने के लिये सैन काफ़ी है मूरख के लिये बैन भी बेफ़ायदा है।

२—चरचा जो की जाती है वह जिस के लिये है अगर वह स्याना है तो सैन में समझ लेता है और जो अयाना [नादान] है तो औरों से पूछता है कि चरचा किसके लिये थी—वैसे तो चरचा की रौशनी हर जानिब फैलती है मगर बाज़ दफ़े ख़ास किसी के मुतअल्लिक़ की जाती है पर बहुत कम लोग सैन में समझते हैं। असल में कुल कारख़ाना सैन का है, हम लोग कमज़र्फ़ हैं इस वास्ते नहीं समझ सक्ते हैं। हुज़ूर साहब जब कोई बात सैन में कहते थे तो सुनने वाले पहिले कहते यह ठीक है, फिर जब अलहिदा होते थे तब मन उनका अनेक सूरतें पैदा करता था और फिर वही करते थे जो उन के मन में था इसका नाम समझ नहीं है और ऐसे जीवों पर दया कैसे नाज़िल हो सक्ती है—

गुरु की मरज़ी कभी न परखी।
मेहर कहो आवे कैसे धुर की।

३—जब तक अन्तर ज्योति है तब तक यह मन के कहे में है, जो प्रेमधार जागे तो सब कार्रवाई ठीक होवे और तन मन की भी सुद्ध भूल जावे, नहीं तो बिलकुल हालत रूखी फीकी रहती है।

दृष्टाँत—गुरु अमरदास को उन की बेटी जो कि भक्त थी एक रोज़ नहलाती थी, चौकी में कोई कील निकली हुई थी लड़की के ऐसी चुभी कि नाखों के मुआफ़िक़ खून बहने लगा पर लड़की इस क़दर सेवा में मशगूल थी कि उस को ख़बर भी न हुई। गुरु ने यह हाल देखा और निहायत प्रसन्न हुए और फ़रमाया कि जो तेरी ख़्वाहिश हो माँग ले। लड़की ने कहा गुरवाई अपने ख़ानदान में रहे यहीं दूसरे को न मिले। गुरु ने कहा कमबख़्त क्या तू ने माँगा अच्छा तेरी ख़्वाहिश पूरी होगी और उस के दामाद को गद्दी मिली। दृष्टान्त का एक अंग लेना चाहिये—मतलब यह कि गुरु की सेवा ऐसी करनी चाहिये कि तन मन की भी सुध बिसर जावे और गुरु राज़ी हो जावें।

४—साथ अनेक रीति से इन के अन्तर में निर्मलपता पैदा करना है मसलन अगर कोई कुत्ते से डरता

है तो काल के दूत कुत्ते का रूप धारन करके उसको डराते हैँ उस वक़्त उस को चाहिये कि गुरु स्वरूप का ध्यान करे और दृष्टि उस मैँ जमा दे तो काल के दूत भाग जायँगे।

दृष्टान्त—एक बहेलिया था उसको एक वक़्त जंगल मैँ तूफ़ान ने आकर घेर लिया वहाँ एक साधू की कुटी थी और उस साधू की ब्रह्मलोक तक रसाई थी। वहाँ बहेलिया जाके दो घण्ठे बैठा और दरशन साधू के करता रहा—जब वह मरा जमदूत उस को ले गये और कहा तू ने दो घण्टे साधू के दरशन किये हैँ और बाक़ी सारी उमर पाप कर्म किया है चाहे पहिले पाप कर्म का दण्ड भुगत ले चाहे दो घन्टे ब्रह्म का दर्शन करले। उस ने जवाब दिया पहिले हम ब्रह्म का दर्शन करैँगे पीछे देखा जायगा। जमदूत उस को वहाँ ले गये—अन्तर मैँ उसको प्रेरना हुई कि खूब दृष्टि जोड़ कर दर्शन कर तो वहाँ ही बैठा रहेगा और नरक के दुक्खौँ से बच जावेगा। उस ने ऐसा ही किया—हरचन्द जमदूतौँ नें बाहर से बहुत कुछ शोर ग़ुल मचाया पर उस ने एक न सुनी आख़िर लाचार होकर वह सब भाग गये।

५—जब कोई बिघन पेश आवे उस वक़्त नाम का सुमिरन और गुरु स्वरूप का ध्यान करना चाहिये

मगर हाल ऐसा है कि जो अभी यहाँ कोई भयंकर रूप आ जावे सब पेशाब पाख़ाना कर देंगे और भाग जायँगे और गुरु का ज़रा भी भरोसा नहीं करेंगे, बानी में कहा है—

धिक्कारो मन उन्हें हर बार। कुफ़्र और कुफ़्रा रहो उन पार॥

मुनासिब यह है कि अपनी समझ बूझ और अक़्ल को ताक़ पर रख दे और गुरु की याद, लाग, सरन और प्रीत प्रतीत को दृढ़ करे, गुरु सब तरह सम्हालेंगे। अगर कोई चटोरा है तो जिस वक़्त उस के चाट की चीज़ सामने आवे उस वक़्त नाम का सुमिरन करे तो बच जावेगा और जो आप चाह उठाता रहेगा और उस में रस लेगा तो फिर क्या किया जावे—

॥ साखी ॥

खट्टा मीठा चरपरा जिह्वा सब रस ले।
चोर और कुतिया मिल गईं पहरा किस का दे॥

जब यह ख़ुद हथियार छोड़ देता है फिर लड़ाई कौन करेगा।

फ़रांस का बादशाह [लुई चौदहवाँ] बड़ा बुज़दिल था जब लड़ाई का मौक़ा आया जरनैल ने उन से कहा लड़ाई करना चाहिये सिर्फ़ हुक्म दरकार है— नहीं माना और अपने ऐश इशरत में मशगूल रहा.

जब आधा लश्कर क़तल होगया तब हुक्म दिया, नतीजा यह हुआ कि हार गया। जैसे कृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि लड़ाई करूँगा मैं, मगर करानी तुम्हारे हाथ से है—ऐसे ही गुरू मन माया से लड़ाई करते हैं मगर कराते इस के हाथ से हैं। जो यह ख़ुद हथियार छोड़ देगा और दुश्मन से मिल जायगा तो फिर गुरू कुछ नहीं करेंगे, गुरू सैन बैन में हर तरह समझाते हैं जो किसी तरह भी नहीं समझता है लाचारी है।

॥ वचन ७ ॥

जब तक चेतन शक्ति नहीं जागी हुई है तब तक नींद में ख़्वाह अभ्यास में ग़फ़लत रहती है।

गहरी नींद में जितने इसके अंग हैं सब ग़ायब हो जाते हैं और ग़फ़लत छाई रहती है—इसी तरह अभ्यास में हर एक स्थान से जब उत्थान होता है अगर इस की चेतन शक्ति जागी हुई नहीं है तो ग़फ़लत आ जाती है और अन्तर में जो छिपी हुई चाह है वह अयाँ और परघट हो जाती है—जैसे एक

नीचे दरजे का अभ्यासी था, एक दफ़े वह सक्ते की हालत में हो गया। लोगों ने समझा कि मर गया और ज़मीन में उसको दफ़न कर दिया। दो बरस बाद वह ज़मीन खोदी गई उसके सिर में चोट लगने से वह चेतन हो गया और "वही घोड़ा" पुकारने लगा क्योंकि किसी घोड़े की चाह उसके अन्तर में धरी थी और उसी हालत में बेहोश हुआ था। ग़रज़ कि जब तक चेतन शक्ति नहीं जागेगी चाल नहीं चलेगी, मारग में अटक जायगा। सहसदलकँवल के नीचे जो सुन्न है वह भी चेतन है वहाँ जब सुरत जाती है तब इस में जो वासना धरी हुई है वह नमूदार हो आती है और उसी अनुसार फिर देही धारन करना पड़ता है, और वहाँ पहुँचने से इस पर ग़फ़लत आ जाती है, वहाँ की सुद्ध बुद्ध भूल जाती है और इस की कुछ पेश नहीं चलती है, लय की हालत हो जाती है।

२—पूरे गुरु की सरन जब लेगा और जब उन का सतसंग करेगा और सुरतवन्त होगा याने चेतन शक्ति जब इस की जागेगी तब ग़फ़लत दूर होगी बाहोश और बा अख़्तियार घट में चल सकेगा, और जब तक पुरुषारथ यानी अपना बल पौरुष है तब तक झटके और झकोले खाने पड़ेंगे और मंज़िल तय

नहीं होगी। दुनिया के जो और मज़हब हैं सब बहिरमुख हैं अन्तर का पूरा भेद कहीं नहीं बतलाया है और न किसी को उस की ख़बर है। यह तन भाँडा है, इस में रास्ता चलने का है, अन्तर इस के द्वारे हैं—जैसे यहाँ पिण्ड में बाहरी द्वारों पर जब धार आती है तब यहाँ का ज्ञान होता है इसी तरह जब अन्तर के द्वारे में घसेगा तब वहाँ का ज्ञान होगा। अन्तर ही से यह जीव पैदा होने के वक़्त आया है और अन्तर ही में मरने के वक़्त ख़्वाह अभ्यास के वक़्त चलना होता है। इन द्वारों को बन्द करो उन द्वारों को खोलो, चलने वाला संग लो, काल कर्म का दल दलन करो, फिर जीते जी मुक्ति अपनी आँखों से देख लो—

॥ कड़ी १ ॥

जो तू घट में चालन हार। चलने वाला संग ले यार ॥

॥ कड़ी २ ॥

गुरु बिन घट में राह न चलना। डर और बिघन अनेकन मिलना ॥
गुरु रक्षा जाके सँग नाहीं। उस को काल करम भरमाहीं ॥
याते सतगुरु ओट पकड़ना। झूठे गुरु से काज न सरना ॥

॥ बचन ८ ॥

॥ चितावनी ॥

यह देस परदेस है कोई चीज़ यहाँ ठहराऊ नहीं है जैसे पतझड़ के मौसिम में पत्ते झड़ते जाते हैं ऐसे ही जीव मरते चले जाते हैं, यहाँ का सामान कुछ भी संग नहीं चलता सब यहाँ ही रह जाता है, दुख और संताप छाय रहा है कोई भी सुखी नहीं है-

॥ कड़ी १ ॥

तन धर सुखिया कोई न देखा जो देखा सो दुखिया हो।

॥ कड़ी २ ॥

न जग में चैन और न स्वर्ग सुख है, न ब्रह्म पद में अमर अनन्दा।
जहाँ तलक हैगा माया घेरा, वहाँ तलक हैगा काल का फन्दा।

जो कि सच्चे भक्त जन हैं वह इस परदेस में मिस्ल मुसाफ़िर के रहते हैं, ज़मीनी और आसमानी कैफ़ियत को मालूम करके इस बात का सोच बिचार करते हैं कि वह कुल करतार जिस ने कि यह रचना रची है, सूरज चाँद और तारा गन बनाये हैं, ब्रह्मांड और निर्मल चेतन देश और हंस रचे हैं जो कि नित्त अमी अहार और किलोल कर रहे हैं वह कुल करतार कैसा मुनव्वर होगा, उन का दरशन जिन ने कि नर शरीर में आकर हासिल न किया वह जैसा

दुनिया में आया वैसा न आया, ऐसा समझ कर सच्चे परमार्थी के मन में दुनिया से बैराग और मालिक के चरनों में अनुराग पैदा होता है।

२—पढ़ना गुनना सहज है मगर मन जो कामनाओं से भरा हुआ है उस को बस करना और अन्तर में चलना और चढ़ना यह निहायत ही कठिन काम है—

॥ साखी ॥

पढना गुनना चातुरी यह तो बात सहल।
काम दहन मन वस करन गगन चढ़न मुश्किल॥

जैसे लोहा चुंबक के सन्मुख आता है तो जब तक पूरी तरह वह नज़दीक और सन्मुख नहीं है तब तक चुंबक की तरफ़ खिंचता भी है और हटता भी है, और चुंबक में दो धारें हैं एक तो पहिले आकर बाहर लोहे से मिलती है फिर दूसरी अपनी तरफ़ कशिश करती है—ऐसे ही शब्द की धार में भी दो क़िस्म की ताक़त है एक अन्तरमुख दूसरी बहिरमुख जिस को सेनसरी (Sensory Current) और मोटार (Motor Current) कहते हैं। जब तक सुरत पूरे तौर से शब्द के सन्मुख नहीं आई है तब तक यह अभ्यास में गिरता भी है मगर जब कि पूरे तौर से शब्द के सन्मुख आ जाता है तब वह धार कशिश कर के इस को बख़ूबी खैंचती है।

३—अभ्यास में खैंचा तानी हरगिज़ नहीं करनी चाहिए जैसे कोई आँखों को ज़ोर लगा के पुतलियों को तानते और खैंचते हैं यह फ़ज़ूल है इस से कुछ नहीं होगा सुरत ख़ुद कशिश रूप है वह जब कि मरकज़ के निकट आ जायगी तब आप ही द्वारे में धसेगी, ज़ोर लगाने से अन्तर द्वारे में नहीं प्रवेश करेगी, इसको चाहिये कि सुरत और मन को तीसरे तिल में सहज सुभाव से जोड़े यानी जमा के चित्त को एकाग्र करे तो आप ही सिमटाव और खिंचाव होगा और सुरत अन्तर में धसेगी, जैसे चुंबक लोहे को खैंचता है ऐसे ही शब्द की धार आप ही सुरत को खैंचेगी इस को सिर्फ़ उस धार के सन्मुख होना चाहिये, जैसे कि लोहा जब तक सन्मुख नहीं होगा चुंबक कैसे उसको खैंच सक्ता है।

४—जब धार से मेला होगा तब प्रेम प्रगट होगा प्रेम गोया भाप है—जैसे बग़ैर स्टीम के एंजिन नहीं काम करता है ऐसे ही बग़ैर प्रेम के अंतर में चाल नहीं चलती है। प्रेम मालिक की दात है जिसे मालिक चाहे उसे बख़शे, सब को चाहिये कि उस दात के हासिल करने की चाह पैदा करें। जितनी परमार्थी कार्रवाई की जाती है वह सब उस दात के हासिल करने के लिये की जाती है, जब प्रेम रूपी

पंख निकलेंगे। तब इस मर देश को छोड़ के अमर अजर देश में उड़ जावेगा।

॥ बचन ६ ॥

सुरत चेतन्य में रस और आनन्द है और चलने का रास्ता घट में है।

जड़ चेतन्य के मेल से दुख होता है जहाँ तक जड़ता यानी माया है वहाँ तक दुख सन्ताप और जनम मरन है और जहाँ माया का लेश नहीं है वहाँ अबिनाशी सुख आनन्द और अमर अजर हर्ष हुलास है। जब तक बासना की जड़ मौजूद है तब तक इस मर देश में आवागवन के चक्कर में घूमता फिरता है जैसे कटे दरख़्त में डाली पत्ते फिर निकल आते हैं वैसे ही बासना का जब तक नाश नहीं होता मनके बिकार फिर जाग उठते हैं और बासना अनुसार फिर देह धारन करना पड़ता है और वही पापड़ बेलने पड़ते हैं।

२—मन रसों का रसिया है यहाँ संसारी रसों में फँसा हुआ है फिर जब परमार्थी रस मिलेगा तब यहाँ से हटेगा और उस तरफ़ मुख़ातिब होगा। असल में यहाँ को भी जो रस है वह संसारी चीज़ या

पदार्थ में नहीं है वह भी सुरत में है मगर यह समझता है कि पदार्थ में है। जैसे कुत्ता हड्डी चूसता है और उस के दाँत से जो ख़ून निकल आता है उसे चाट कर समझता है कि हड्डी में रस है। सोते हुए आदमी को लड्डू खिलाओ या घर में कोई मरा हो या खाना खाते वक़्त किसी से बात चीत करता हो या चित्त कहीं दूसरी जगह हो तो कुछ भी मज़ा नहीं आता है इस से ज़ाहिर है कि रस चेतन्य में है और किसी पदार्थ में नहीं है और यहाँ का जो रस है वह मिलौनी का है निर्मल नहीं है, माया देश के परे यानी निर्मल चेतन्य देश में निर्मल रस और आनंद है उस के हासिल करने के लिये जतन और कोशिश करना चाहिये।

३—जोकि जिग्यासू और मुतलाशी है वह ज़रूर खोज और तलाश करेगा कि निर्मल चेतन्य देश कहाँ है कौन उस का रास्ता है किस सवारी के ज़रिये से चलना होता है और कहाँ चलने वाला है—जिस मत में इस का निर्णय नहीं है वह झूठा है। संत फ़रमाते हैं कि रास्ता घट में है. जैसे जागृत से स्वप्न और सुखोपत में जाते हैं मगर वहाँ ग़ाफ़िल हो जाते हैं ऐसे ही अभ्यास में चाइतन्यधार और बाहोश उसी रास्ते चलना होता है। शब्द की धार को पकड़ो

गुरु स्वरूप का ध्यान करो नाम का सुमिरन करो यही संतमत की युक्ति है—सहज योग है हठ योग नहीं है—बेशक गृहस्थ आश्रम में रहो अपना रोज़-ग़ार पेशा करो जंगल में जाने की कोई ज़रूरत नहीं है सिर्फ़ चित्त की वृत्ति को मोड़ो और जक्त की वासना को छोड़ो ।

॥ बचन १० ॥

॥ तवज्जह ॥

जहाँ तवज्जह है वहाँ रस है और जहाँ तवज्जह नहीं है वहाँ रूखा फीकापन है ।

२—तवज्जह लगने से कार्रवाई प्यारी मालूम होती है और नहीं लगने से भारी हो जाती है जैसे जुवारी शराबी और तमाशबीन होते हैं इस क़दर तवज्जह उन की अपने काम में लग जाती है कि खाना पीना पेशाब पाख़ाना तक भूल जाते हैं और जब उस कार्रवाई के ख़तम होने का वक़्त आता है तब यही चाहते हैं कि ख़तम न होवे, और भी ज़ियादा वक़्त तक चले, और वाक़ई उस को छोड़ते रंज और अफ़-सोस उन को होता है। पारमार्थियों का क्या हाल है

अभ्यास में बैठते ही घड़ी सामने रख लेते हैं—तीन मिनट में आँख खोलते हैं और समझते हैं कि तीन घण्टे हुए और बड़ा बोझ मालूम होता है और तबीयत घबराने लगती है—सबब यह है कि तवज्जह नहीं लगती है। जैसे जुआरी शराबी और तमाशबीन को उन का काम ख़तम होने पर रंज और अफ़सोस होता है वैसे परमारथी का सतसंग और अभ्यास ख़तम होने पर जब रंज अफ़सोस होवे तब समझना चाहिये कि मन इन्द्रियाँ जो बाहर भोगों में रस लेती थीं वह अब उलट कर अन्तर में रस लेने लगीं।

३—देखा देखी हिरसा हिरसी और ज़बरदस्ती का काम नहीं है, प्रेम उमंग और उत्साह से परमारथ बनता है। अगर भाव हो सेर भर तो कारवाई पाव भर करनी चाहिये और जो भाव है पाव भर और कारवाई करेगा सेर भर तो जल्दी टूट जायगा और छोड़ देगा।

४—तवज्जह जैसी जुआ खेलने में जुआरियों की लगती है वैसी किसी की नहीं लगती है जुआ खेलने के लिये जुआरी बाक़ई हाथ जोड़ते हैं पांव पड़ते हैं अपना रुपिया पैसा देते हैं कि कोई जुआ खेले—ऐसी ही चाट जब परमारथ की लगे तब

यह मुस्तैदी के साथ कार्रवाई करेगा और कामयाब होगा।

सवाल—ख़याल और तवज्जह में क्या फ़र्क़ है।

जवाब—ख़याल मन का स्वरूप है और तवज्जह सुरत का स्वरूप है और वह ख़याल के परे है।

दृष्टान्त—अमरीका में एक औरत खेत में काम करती थी उस का बच्चा ज़मीन पर सोता था। इत्तिफ़ाक़ से उक़ाब आया बच्चे को ले गया। औरत को मुहब्बत का ऐसा जोश आया कि बिना सोच बिचार के उक़ाब के पीछे दौड़ी और इस क़दर बच्चे में उस की तवज्जह लग गई कि उस को और कोई ख़याल नहीं रहा और बेतकल्लुफ़ ऊँची नीची जगहों पर हवा की तरह कोसों चली गई और आख़िर को एक ऊँचे पहाड़ पर चढ़ गई जहाँ कि बच्चे को उक़ाब ने जाकर रक्खा वहाँ से उस को ले आई जब ज़मीन पर उतरी तब कहने लगी मेरा बच्चा, मेरा बच्चा कहाँ है, लोगों ने कहा बच्चा तो तेरी गोद में है—जब होश आया तब यक़ीन हुआ—मतलब यह है कि इस क़दर तवज्जह उस की बच्चे में आ गई थी कि ख़याल भी नहीं गुज़रा कि क्या करती हूँ इस से ज़ाहिर हुआ कि तवज्जह ख़यालात के परे है॥

॥ बचन ११ ॥

॥ चाह ॥

जब तक चाह की जड़ मौजूद है तब तक आवा-गवन नहीं छूटता और वह किसी वक़्त ज़रूर अपना इज़हार करती है ।

२—जिस क़दर हो सके अपने चित्त की वृत्ति को संसार से हटाते रहना चाहिये। जनमानजन्म के करम फल और वासना इस के संग लगे हुए हैं उसी अनु-सार भटकता और भरमता है और देह धारन करता है—यहाँ की आसा बासा जब दूर होगी और पर-मारथ की तरफ़ चित्त मुख़ातिब होगा तब इस जीव का गुज़ारा हो सकता है नहीं तो जब तक चाह और वासना का तुख़्म मौजूद है तब तक आवागवन नहीं छूटता और चाहही के सबब से दुख सुख भोगता है—

॥ कड़ी ॥

तेरे मन में जो नहीं वासना तन संग भोग बिलास की ।
तब कौन तुझ को भेजता कि तू जग की जोर ख़ाना में था ॥
तेरी चाह दुख सुख रूप है तेरा मन ही काल और जाल है ।
तेरी आस जग की पुकारे है कि तू फेर में दुख में फंसा ॥

३—चाह की परख पहिचान स्वप्न में हो सक्ती है वहाँ यह आज़ाद है जो कुछ सच्ची हालत इस की है

स्वप्न मेँ परघट होती है क्योँकि वहाँ कोई दाब यानी दबाव नहीँ रहता जब तक जाग्रत अवस्था मेँ यहाँ समझ बूझ के साथ रोक टोक कर रहा है तब तक इस की सच्चाई और सफ़ाई क़ाबिल एतबार नहीँ है— स्वप्न में ज्योँ की त्योँ जो हालत है उस का बे-तकल्लुफ़ इज़हार होता है—इस के सिवाय बीज रूप छिपी हुई चाहैँ ऐसी अन्तर में धरी हुई हैँ जिनकी अभी इसको ख़बर भी नहीँ है मरने के बाद भी चाह और बासना इस के संग जाती है। जब कोई आदमी मरता है और उस वक़्त किसी खाने की चीज़ पर ख़्वाहिश करता है वह ज़रूर इस को खिलाते हैँ इस ख़याल से कि चाह उस की सङ्ग न जावे नहीँ तो फिर जनम धरना पड़ेगा ॥

४—मन रसोँ का रसिया है यहाँ संसारी पदारथोँ मेँ इस को रस आता है तब इस तरफ़ मुख़ातिब रहता है ऐसे ही जब अन्तर मेँ इस को चाट लगती है तब परमारथ की तरफ़ रागिब होता है जैसे यहाँ की चीज़ोँसे इन्द्री द्वारे जब सुरत की धार का मेला होता है तब रस आता है इसी तरह अन्तर मेँ जब सुरत का चेतन्य धार से संयोग होता है तब अन्तर का रस आनन्द मिलता है। जुवारी और शराबी को जुए और शराब मेँ इस क़दर रस आता है कि खाना

पीना पेशाब पाखाना भी भूल जाता है अगर परमारथ में इस क़दर तवज्जह नहीं आती तो वह परमारथ कैसा है। जिस में कि सरूर और आनन्द दिन दिन बढ़ता जावे वही सच्चा परमारथ है—तब रोज़ बरोज़ संसार से इस की तवज्जह हटती जावेगी और परमारथ में विशेष होती जावेगी और फिर जैसे जुवारी या शराबी को जब ज़रूरत पड़ती है तब अपना काम काज भी कर लेते हैं मगर चित्त उन का जुए या शराब में रहता है ऐसे ही भक्तजन ज़रूरत के मुवाफ़िक़ अपना रोज़गार पेशा भी कर लेते हैं मगर चित्त उनका अपने भगवंत में मशग़ूल रहता है।

५—जैसे तन मन इन्द्री बुढ़ापे में शिथिल और ज़ईफ़ हो जाते हैं ऐसे ही भक्ती करने से चाह और वासना दुबली और कमज़ोर होती है मगर जब तक जड़ उन की मौजूद है तब तक क़ाबिल एतबार नहीं फिर इस में पत्ते और नई नई डालियाँ निकलती हैं और चाह हरी और सरसब्ज़ हो जाती है जैसे कि कितने ही ऋषि मुनियों का हाल हुआ था—

दृष्टान्त १—श्रृङ्गी ऋषि अकेले बन में रहते थे पवन का अहार करते थे और एक बार दरख़्त पर ज़बान मारते थे। राजा दशरथ के औलाद नहीं होती थी

बशिष्ट जी जो कि उन के कुल के परोहित थे उन्हों ने कहा कि बिधि पूर्बक यज्ञ कृया और हवन होगा तब बेटा होने की उम्मेद हो सकती है और ऐसी कृया सिवाय श्रृङ्गी ऋषि के और कोई नहीं करा सकता है। राजा दशरथ का हुक्म हुआ कि जो कोई श्रृङ्गी ऋषि को यहाँ लावेगा उस को हीरे जवाहिर का थाल भर कर मिलेगा। एक बेश्या ने कहा मैं ले आती हूँ वह वहाँ गई देखा कि ऋषि जी बड़ी समाधी में बैठे हैं। जिस दरख़्त पर कि ज़बान लगाते थे वहाँ एक उँगली गुड़ की लगा दी ऋषि जी ने जब ज़बान लगाई चाट लग गई पहिले एक दफ़ा ज़बान मारते थे उस रोज़ दो दफ़ा मारी दूसरे रोज़ तीन बार मारी इसी तरह रस बढ़ता गया और ताक़त आने लगी। वह बेश्या जो छिपके बैठी थी उस ने हलुवा पेश किया तब थोड़ा थोड़ा हलुवा खाने लगे बदन जो दुबला था वह पुष्ट होने लगा ताक़त आई माई पास थी सब कार्रवाई जारी हो गई दो तीन लड़के हुए किसी बहाने श्रृङ्गी से बेश्या ने कहा चलो राज दरबार में यहाँ जङ्गल में लड़के भूखे मरते हैं बिचारे उस के साथ हो लिये दो लड़कों को दोनों कन्धों पर उठाया और एक का हाथ पकड़ा पीछे वह माई साथ चली। इस दशा

में राजा दशरथ के दरबार में पहुँचे और वहाँ कृया हवन वग़ैरह की कराई। जब वहाँ किसी ने ताना मारा तब होश आया एक दम लड़कों को वहीं पटक के भागे और तब चेत आई कि माया ने लूट लिया।

॥ शब्द ॥

रमैया की दुलहिन ने लूटा बज़ार ॥ टेक ॥
सुरपुर लूटा नागपुर लूटा तीन लोक पड़ा हा हा कार।
ब्रह्मा लूटे महादेव लूटे नारद मुनि के पड़ी पिछार ॥ १ ॥
श्रृङ्गी की मिंगी कर डाली पाराशर का उदर विदार।
कनफूंका चिदाकाशी लूटे योगीश्वर लूटे करत विचार ॥ २ ॥
हम तो बच गये स्वामी दया से शब्द डोर गह उतरे पार।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो इस ठगनी से रहो हुशियार। ३ ॥

॥ साखी ॥

माया तो ठगनी भई ठगत फिरे सब देश।
जा ठग ने ठगनी ठगी ता ठग को आदेश ॥ १ ॥
माया ऐसी मोहनी मोहे जान सुजान।
भागे हू छोड़े नहीं भर भर मारे बान। २ ॥
कबीर माया मोहनी जैसे मीठी खांड़।
सतगुरु की किरपा भई नातर करती भांड़। ३ ॥
कबीर माया मोहनी भई अन्धियारी लोय।
जो सोते सो मुस गये रहे वस्तु को रोय। ४ ॥
कबीर माया डाकिनी सब काहू को खाय।
दांत उपाड़ें पापिनी जो सन्तों नेड़े जाय। ५ ॥

नैनों काजल देय कर गाढ़े बाँधे केश।

हाथों में हदी लाय कर बाघिन खाया देश ॥ ६ ॥

दृष्टान्त २—पाराशर ऋषि ने मछोदरी से नाव में भोग किया उस गनिका ने कहा अभी दिन है लोग देखते हैं उन्हों ने अपनी सिद्धि शक्ति से रात का अँधेरा कर दिया आकाश में बादल आ गये फिर गनिका ने कहा मेरे बदन से मच्छी की बदबू आती है ऋषि ने बदबू को बदल के ख़ुशबू कर दिया नतीजा यह हुआ कि ब्यासजी उस मछोदरी से पैदा हुए ॥

दृष्टान्त ३—कोई महा ऋषि थे बन में तपस्या करते थे—एक रोज़ माया स्त्री का रूप धारन करके उनके पास आई और कहा मेरे पति को जङ्गल में शेर खा गया अब मैं अकेली बन में डरती हूँ दया करके रात को यहाँ रहने दो सुबह को मैं चली जाऊँगी। उन्हों ने कहा अच्छा और एक कोठरी में किवाड़ भीतर से बन्द कराके बैठा दिया और कह दिया कि अगर मैं भी आकर कहूँ खोलो तौ भी किवाड़ मत खोलना। उस ने कहा अच्छा—ऋषि जी बैठे भजन करने तो ध्यान में वही माई सन्मुख आने लगी उसका नक्श हृदय पर पड़ गया था बार बार उसी का रूप नज़राई पड़ने लगा, धार नीचे उतरी, भजन से उठ

बैठे, आवाज़ दी कुंडी खोलो, उस ने कहा हम नहीं खोलेंगे तुम ने मना किया था अपना वचन क्यों तोड़ते हो। फिर बेचारे ऐसे काम बस हो गये कि छत तोड़ के कोठे में कूद पड़े। दूसरे रोज़ दरिया के पार उस को कंधे पर बैठा कर ले जाना पड़ा उस ने खूब एड़ लगाई और कहा बड़ा टर्रा घोड़ा था इस के लिये मैं ने लोहे की लगाम बनवाई थी यह तो हाथ नहीं आता था अब देखो मैं उसके सिर पर सवार हूँ। सुनते ही होश आया तब माया रूपी माई को छोड़ के भागे।

दृष्टान्त ९—मुछन्दरनाथ का ज़िक्र है कि एक रोज़ किसी ने कहा कि राज्य का रस और आनन्द बड़ा मीठा है मुछन्दरनाथ ने कहा अच्छा तजरबा करना चाहिये। जोगी गति तो थी ही दूसरे क़ालिब में अपनी रूह को प्रवेश करने की ताक़त रखते थे, एक राजा मरता था उस की देह में अपनी रूह को प्रवेश किया और अपने चेले गोरखनाथ को कह दिया कि भोग विलास में अगर हम भूल जावें तो तुम यह मन्त्र आके पढ़ना। ग़रज़ कि राजा जो मरता था उठ खड़ा हुआ। रानी सब ख़ुश हुईं। एक बरस उन के संग भोग विलास किया मगर खौफ़ था कि किसी वक़्त गोरखनाथ आ जायगा इस

लिये हुक्म दिया कि कोई कनफटा जोगी शहर में न आने पावे। राग सुनने का उन को बड़ा शौक़ था गोरखनाथ गाना बजाना सीख कर गाने वालों के संग दरबार में गये और जब मन्त्र पढ़ा तब मुछन्दरनाथ को होश आया फिर अपने पुराने चोले में आ गये। ग़रज़ यह है कि भोग बिलास की चाह अन्तर में धरी थी उस ने अपना इज़हार किया।

दृष्टान्त ५—गौतम की स्त्री पर राजा इन्द्र मोहित हुए वह उन के हाथ नहीं आती थी इन्द्र ने सोचा कि गौतम पिछली रात नदी में नहाने जाते हैं चाँद को एक रोज़ हुक्म दिया कि तुम रात को बारह बजे के वक्त जहाँ कि तीन बजे निकलते हो निकलना और मुर्ग़ को कहा कि तू बारह बजे रात को आवाज़ देना दोनों ने ऐसा ही किया। गौतम धोखा खाकर १२ बजे उठे और माफ़िक़ दस्तूर के नदी को चले गये। इन्द्र बिल्ली का रूप धारन करके भीतर गौतम के घर में गये जब गौतम लौट के आये तब सब हाल मालूम हो गया चाँद को स्राप दिया कि तुम को कलंक लगेगा और अपनी स्त्री अहिल्या को स्राप दिया कि पत्थर हो जायगी मुर्ग़ को कहा कि हिन्दू तुझ को अपने घर में नहीं रक्खेंगे और इन्द्र को स्राप दिया कि एक काम इन्द्री के बस तू ने

ऐसा अत्याचार किया तेरे शरीर में हज़ार वैसी ही इन्द्री हो जाँयगी।

दृष्टान्त ६—इसी तरह नारद मुनि का हाल हुआ। उन को अहंकार हुआ कि हम इन्द्रीजीत हैं बिश्नु जी के पास जाकर कहा। बिश्नु बोले हम बड़े खुश हुए, नारद जी लौटे तो देखा कि एक स्वयम्बर रचा है उस में शरीक हुए ख़्याल गुज़रा कि राज कन्या हमारे गले में हार डालेगी कहने लगे कि हमारी तरफ़ तो देख मगर उस ने दूसरे के गले में हार डाला और उन पर तवज्जह भी न की। नारद जी को अपने सुन्दर स्वरूप का फ़ख़्र था किसी ने वहाँ उन को आईना दिखलाया देखा तो सुअर का मुँह हो गया है बड़े शरमिन्दा और नाराज़ होके भाग गये।

दृष्टान्त ७—शिवजी का भी यही हाल हुआ था। पारबती ऐसी सुन्दर और मोहनी स्त्री थी उन को छोड़के मोहनी स्वरूप माया का देखा उन के पीछे दौड़े जब देखा माया का चरित्र है तब अपने इष्ट-देव को श्राप दिया कि जैसे हम स्त्री के पीछे दौड़े हैं वैसे ही तुम भी दौड़ोगे—इसी से त्रेतायुग में राम अौतार हुआ सीता के पीछे बन बन दौड़ना पड़ा। ब्रह्मा का भी यही हाल हुआ सावित्री उन की बेटी

थी वह पीछे स्त्री हुई इसी लिये ब्रह्मा की पूजा नहीं होती है।

६—आज़ वक्त़ अभ्यास में अजीब और ग़रीब तरंगें और चाहें नमूदार होती हैं और यह घबराता है कि क्या मामला है पेश्तर तो मेरे में ऐसी चाह और बासना नहीं थी अब कैसे नज़राई पड़ती है लेकिन घबराना नहीं चाहिये अन्तर में जो छिपी हुई चाहें धरी हुई हैं वह प्रगट कर के ख़ारिज को जाती हैं। जिस क़दर अभ्यास और गुरु स्वरूप का ध्यान करता है उतनी ही मलीनता दूर होती है जैसे छाज में नाज फटकने से कूड़ा करकट झाड़ा जाता है ऐसे ही गुरू का ध्यान करने से गोया गुरु रूपी सूप से चाह और बासना रूपी कूड़ा करकट निकल जाता है। जब तक चाह और बासना का बीज अंतर में मौजूद है तब तक वह ख़तरनाक और ख़लल-अंदाज़ है क़ाबिल इतमीनान नहीं है। कहने का मुद्दा यह है कि चाह की जड़ जो अंतर में मौजूद है किसी वक्त़ ज़रूर सरसब्ज़ होती है—

॥ शब्द ॥

चमरिया चाह बसी घट माहिँ। गुरू अब कैसे धारें पायँ॥ १॥
दुक्ख सुख नितही आवें जायँ। कर्म फल भोगत मन के माहिँ॥ २॥
शुद्धता सब ही भागी जायँ। प्रेम और भक्ति नहीं ठहरायँ॥ ३॥

बिरह अनुराग निकासे जावें । करूँ क्या कोई जतन अब नाहिं ॥ ४ ॥
बहुर फिर गुरही लेहिं बचाय । नाम बिन करै न कोई सहाय ॥ ५ ॥
करूँ अब सतसंग सरन समाय । शब्द में निस दिन गगन लगाय ॥ ६ ॥
राधास्वामी कीन्हा दृष्टि भुमाय । चमरिया घट से भागी जाय ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

चाह चमारी चूहरी, अति नीचन की नीच ।
तू तो पूरन ब्रह्म था, जो चाह न होती बीच ॥

॥ शब्द ॥

काहू न मन बस कीना जग में काहू न मन बस कीना ॥ टेक ॥
शृङ्गी ऋषि से बन में छूटे बिषे बिकार न जाने ।
परई नारि भूप दशरथ ने पकड़ि अयोध्या आने ॥ १ ॥
सूखे पत्र पवन भखि रहते पाराशर से ज्ञानी ।
भरमे रूप देख गनिका को काम फन्दना ठानी ॥ २ ॥
सोइ सुरपति जा की नार सुची सी निस दिन ही संग रानी ।
गौतम के घर नार उरबसी निरख काम हैं मारी ॥ ३ ॥
पारबती सी पतनी जाके ता का मन क्यों डोले ।
भ्रसित भये लखि देख मोहनी हा हा करिके बोले ॥ ४ ॥
एके नाल कमलसुत ब्रह्मा जग उपराज बढ़ावे ।
कहैं कबीर इक मन जीते बिन जिव आराम न पावे ॥ ५ ॥

॥ बचन १२ ॥

जिस को सच्ची चाह मालिक से मिलने की है उस को देर सवेर वह ज़रूर दरशन देता है ।

२—जो कोई भोला भाला है और हृदय में सच्ची चाह मालिक से मिलने की रखता है उस के सामने कितने ही झगड़े बखेड़े उलझेड़े आवैं कोई भी उस को रोक नहीं सकता है फ़ौरन दया की धार उसकी रक्षा और सम्हाल के लिये नाज़िल होती है। अगर कोई सच्चा मालिक है तो जो कोई सचौटी के साथ हृदय से पुकारेगा वह उस को एक रोज़ ज़रूर सुनेगा जैसे बच्चा अपनी मैया को पुकारता है तो मैया फ़ौरन उस को दूध पिलाती है वैसेही चरन धार अपने बच्चे को अमृत पिलाने के लिये हरदम तैयार है सिर्फ़ सच्ची चाह से पुकारने की देर है—

॥ कड़ी ॥

खोज री पिया को निज घट में।

जो तुम पिया से मिलना चाहो तो भटको मत जग में।

३—जहाँ भक्ती है वहाँ भगवन्त है भक्त जन उलटी सुलटी हालत में मालिक की मौज पर राज़ी रहता है और समझता है कि जो कुछ होता है मालिक की मौज से होता है मुझ में कुछ ताक़त नहीं है, और अपने को नीच और निबल समझता है। इस तौर से कार्रवाई करने के लिये संसकार की ज़रूरत है संसकार से यह मतलब है कि जैसे भूसा तैयार है सिर्फ़ चिनगी लगाने की देर है, बीज धरा है सिर्फ़

बोने की देर है, और जो हृदय पत्थर सा कड़ा है यानी असंसकारी है तो उस को मुलायम करना, बीज डालना, इस में अलबत्ता अरसा लगता है और गुरू के संग की भी ज़रूरत है—

॥ कड़ी ॥

जो मन करड़ा पत्थर होवे। गुरु से मिलत जवाहिर होवे॥
जो मालिक का चहे दीदार। जा तू बैठ गुरू दरबार॥

४—सतगुरु की मौजूदगी में जो कुछ उन की सेवा की जाती है वह निज सेवा राधास्वामी दयाल की है और जब देह सरूप में सतगुरु न मिलें तब उनके साधू और प्रेमीजनों की सेवा करना यह भी राधास्वामी दयाल की सेवा में दाख़िल है।

५—सतगुर के गुप्त होने में भी फ़ायदा है क्योंकि प्रेमी जन आपस में मिलकर नये नये नुक़्ते निरनय करते हैं और प्रेमीजन के संग से प्रेम भी पैदा होता है—जब तन मन धन अरपन करेंगे तब मालिक का दरशन होगा।

दृष्टान्त—एक भक्त था उस को मालिक के दरशन की बड़ी अभिलाषा थी उस ने मन किया कि जो कोई मुझ को मालिक का दरशन करावेगा उस को तन मन धन सब अरपन करूँगा। एक चोर था उस ने आकर उस से कहा मैं तुम को मालिक का

दीदार कराऊँगा। वह बेचारा सुनकर बहुत ख़ुश हुआ अपना असबाब वग़ैरह जो कुछ उस के पास था बेच कर रूपया इकट्ठा किया। चोर ने कहा सब रूपये की एक पोटली बाँध कर उठाके बाहर एक खुले मैदान में ले चलो जब शहर के बाहर एक कुए पर पहुँचे तब चोर ने उस से कहा इस कुए के अंदर झाँको तो तुम को दरशन मिलेगा। भक्त जन बड़ी ख़ुशी और उमङ्ग के साथ कुए में झाँकने लगा तो चोर ने धक्का दे कर उस को गिरा दिया, पर मालिक की दया ऐसी हुई कि झटका लगने से उस की सुरत खिंच गई और अंतर में दरशन मिला। चोर उस का धन लेकर चलने लगा, मालिक अन्तरजामी उसी वक़्त घोड़े पर सवार का रूप धर कर प्रगट हुआ और उस चोर को पकड़ के कुए के पास ले गया और कहा कि जिसको तू ने गिराया है उसे आवाज़ देकर पुकार। भक्त जन उसकी आवाज़ पहिचान कर निहायत मगन हुआ और हाथ जोड़ कर प्रनाम करने लगा। मालिक ने कहा यह तो चोर है तुम को कुए में गिराके तुम्हारा धन इस ने छीन लिया है इस को तुम प्रनाम करते हो। भक्त जन बोला यह मेरा गुरू है अगर यह न मिलता तो मालिक का दरशन भी न होता। ग़रज़ कि भक्त

जन बाहर निकाला गया और दोनों के अंतर में प्रेरना हुई कि मालिक सवार का रूप धारन करके आया है और दोनों को हुक्म हुआ कि फ़लाँ जगह जाकर पूरे गुरू का सतसंग करो तब उद्धार होगा। कहने का मुद्दा यह है कि जिस को सच्ची चाह मालिक से मिलने को है उस को देर सबेर ज़रूर दरशन होता है और जो करम बाक़ी रह जाते हैं वह सतसंग और अभ्यास कराके साफ़ कर दिये जाते हैं, बाद इसके मालिक अपने देश यानी निरमल चेतन्य धाम में बासा देता है।

॥ वचन १२ ॥

सुरत की धार किस तरह देह में कार्रवाई करती है और गुप्त तौर पर धीरे धीरे उसकी चेतन्यता विशेष होती जाती है इस की ख़बर नहीं पड़ती है इस वास्ते धीरज के साथ सतसंग और अभ्यास करते रहना चाहिये और उलटी सुलटी हालत में मौज से मुआफ़क़त करनी चाहिये एक रोज़ सब का कारज बन जावेगा यानी उद्धार हो जावेगा।

२—सुरत मन की तीन धारें देह में फैल रही हैं-दो आँखों में—इन में समझ बूझ और ज्ञान है, और

तीसरी पीठ में जहाँ कि रीढ़ की हड्डी है वहाँ से आती है। इन तीनों धारों को इंगला पिङ्गला और सुखमना कहते हैं। दो धारें जो आँखों में आ-रही हैं वह गोया दोनों कर यानी हाथ हैं—इन को उलटा कर तीसरे तिल के परे जो चेतन्य धार आ-रही है उस को स्पर्स करना यही चरन को छूना है और यही सच्ची विनती या बन्दगी है—

॥ कड़ी ॥

करूँ बीनती दोउ कर जोरी। अर्ज़ सुनो राधास्वामी मोरी ॥

सिर्फ़ बाहर से हाथ जोड़ने से मतलब नहीं है। बीच की जो मुख्य धार है उस ने पिण्ड की रचना की है और चक्र बनाये हैं और पिण्ड की कार्रवाई इसी धार के वसीले से होती है। देह में किस तरह उस की कार्रवाई होती है इस की ख़बर अभी नहीं पड़ती जब छठे चक्र में रसाई होती है तब ख़बर पड़ती है।

३—जैसे कोई बीमारी होती है तो पहिले से आ-हिस्ता आहिस्ता गुप्त मसाला इकट्ठा होता जाता है जिस की इस को ख़बर नहीं पड़ती जब मौक़ा आता है तब फ़ौरन वह बीमारी प्रगट हो जाती है मसलन तपेदिक़ की बीमारी है कि आहिस्ता आ-हिस्ता बदन और ख़ून सूखता जाता है और सुरत

सिमटती जाती है जिस की बीमार को ख़बर नहीं पड़ती वैसे ही गुप्त तौर पर सुरत की ताक़त विशेष होती जाती है जब मौक़ा आता है तब मालूम होता है—यहाँ नीचे घाट पर अगर प्रगट की जावे तो यह उस को यहाँ ही बाहरमुखी करतूत में ख़र्च कर डाले इसलिये इसको ख़बर भी नहीं पड़ती और अपने को बिल्कुल ख़ाली और रूखा फीका देखता है, मगर जब सुरत के घाट पर इस की पहुँच होती है तब विशेष चेतन्यता की और राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत परतीत की ख़बर पड़ती है और तब पिण्ड की भी कैफ़ियत इस को मालूम होती है कि किस तरह मध्य की धार कार्रवाई करती है।

४—जैसे बच्चा है कि दिन दिन यहाँ की ख़ुराक पाकर पुष्ट होता और बढ़ता जाता है और काम अंग भी जागता जाता है जिसकी इस को ख़बर नहीं पड़ती, जब जवानी आती है तब काम अंग प्रगट होता है, वैसे ही सतसंग और अभ्यास करने से इस की चेतन्यता विशेष होती जाती है जब भक्ती की तरुन अवस्था आती है तब वह ज़ाहिर होती है। जो कि राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं सब पर ऐसी बख़्शिश होगी और हो रही है गुप्त तौर पर सब की तरक़्क़ी और सम्हाल बराबर जारी है,

करम का चक्कर अलबत्ता भोगना पड़ता है सो इस में भी दया और रक्षा शामिल है किसी को घबराना नहीं चाहिये मालिक आप निज रूप से सब की सम्हाल कर रहा है ।

५—परदों के भीतर जब सुरत धसेगी तब चेतन्य धार से मेला होगा और प्रेम प्रतीत जागेगी व बढ़ेगी, अभ्यास से यह परदे तोड़े जायँगे बिला नाग़ा अभ्यास और सतसंग करते रहना चाहिये और दया मेहर का भरोसा रखना चाहिये, धीरे धीरे काम होता है । सुरत की चाल निहायत ही तेज़ है, जो सूरज चाँद तारागन यहाँ नज़राई पड़ते हैं सब तीसरे तिल के नीचे हैं, ज्योतिषी कहते हैं कि ऐसे भी तारे हैं जिन की रोशनी तीन सौ बरस में यहाँ पृथ्वी पर आती है और रोशनी की चाल ऐसी तेज़ है कि एक पल में १९५ लाख मील तै करती है और जितनी कि मायक शक्तियाँ हैं उन सब से बिजली की चाल ज़ियादा तेज़ है फिर सुरत की चाल तो अंधाधुन्द है जिस का कोई हद व हिसाब नहीं है मगर उस की ख़बर नहीं पड़ती है ।

६—जैसे रेल गाड़ी पर सवार हो और सब दरवाज़े बंद हों तो सिर्फ़ गाड़ी की घनघनाहट सुनाई देती है और चाल की ख़बर नहीं पड़ती वैसेही अभ्यासी

की चाल चलती है, सूरज चाँद अगर नहीं दिखलाई दें तो कुछ हर्ज नहीं है बल्कि बड़ी दया है कि कुछ नहीं दिखाई देता, जो कि सच्चे भक्त और ऊँची सुरतें हैं उन की ऐसी हालत होती है यानी दरपरदे चढ़ाई होती है जब माया देश के परे सत्तलोक में रसाई होती है तब सब पट खुल जाते हैं, जो कुछ रचना की कैफ़ियत है वह कुल नज़र आई पड़ती है और एक दम भक्काटा हो जाता है।

७—अकसर सतसंगी शिकायत करते हैं कि तरक़्क़ी नहीं होती है। उन को चाहिये कि औरों की हालत देखें कि किस क़दर बदली हुई है, तरक़्क़ी बराबर होती रहती है और मसाला जैसे इकट्ठा होता है वैसे चेतन्यता इकट्ठी होती जाती है जब वक़्त आता है तब अंतर में चढ़ाई होती है। आँखों में जो धार आ रही है वह अभ्यास में सिमटती है मध्य की जो धार है वह नहीं सिमटती, सर्व अंग कर के जब चढ़ाई होती है या जब मौत होती है तब बीच की धार में हलचल होती है यानी वह जब सिमटती और खिंचती है तब मौत हो जाती है। जब अभ्यास पूरा होगा यानी चैतन्य विशेष होगा और बीच की भी धार सिमटेगी और सुरत के घाट पर इस की रसाई होगी तब पिण्ड का सब

भेद ज़ाहिर होगा और सब चक्रौं की कैफ़ियत मालूम होगी—

॥ कड़ी ॥

पिण्ड का सब भेद पोशीदा मुझे ज़ाहिर हुआ।
मेहर से पूरे गुरू के काम मेरा बन रहा॥
सुरत ने जब धुन को पकड़ा आसमाँ पर चढ़ गई।
हो गई क़ाबिल वहाँ पर फिर न कोई ग़म रहा॥

८—जब इस को मालूम होगा कि करता धरता राधास्वामी दयाल हैं और जिस तरह चाहते हैं नाच नचा रहे हैं और जो कुछ हो रहा है उन्हीं की मौज से हो रहा है बिना उन की मौज के कुछ नहीं होता है तब उलटी सुलटी हालत जो कुछ होगी उस में मौज से माफ़क़त करेगा और राज़ी रहेगा बल्कि शुकराना अदा करेगा और अपना बल पौरुष और बुद्धि को छोड़कर सर्व अंग से सरन लेगा—जब बल हारेगा तब बलहार होगा—बलहार से मतलब ही यह है कि बल का हारना—जतन करते रहना चाहिये, जैसे संसार में जतन करते हैं वैसे ही परमार्थ में जतन ज़रूर करना चाहिये, दुखी रक्खें चाहे सुखी रक्खें जिस तरह और जिस हालत में रक्खें वही ठीक और दुरुस्त है और उसी में नफ़ा है, उलटी सुलटी हालत जो कुछ होवे उस में राज़ी रहना चाहिये

जल्दी का काम नहीं है अगर जल्दी में यह वहाँ पहुँचाया भी जावे तो फिर नीचे गिर पड़ेगा क्योंकि मसाला धरा हुआ है इस लिये धीरज के साथ कार्र-वाई करते रहो राधास्वामी दयाल हैं एक रोज़ सब का घेड़ा पार करेंगे ॥

॥ बचन १४ ॥

अभ्यास का मतलब क्या है

सुमिरन ध्यान भजन और पोथी का पाठ इन चारो युक्तियों का मतलब एक ही है और वह यह है कि सुरत जो देह में फैली हुई है उस को समेट कर तीसरे तिल में प्रवेश करना और ऊपर से जो विशेष चेतन्य धार आ रही है उस को पकड़के अंतर में चलना। सुरत से सुमिरन करने से जिस वक्त कि सिमटाव होगा फ़ौरन सुरत तीसरे तिल में धसेगी शब्द आप से आप गाजने लगेगा और रूप दरसेगा यह सहज जुक्ति है और राधास्वामी परम मन्त्र है।

२—स्वरूप का ध्यान बेठिकाने न होवे—गुरु स्वरूप को एक ठिकाने यानी तीसरे तिल पर जमा कर ध्यान करना चाहिये। जिस वक्त सिमटाव होगा फ़ौरन शब्द गाजेगा और स्वरूप दरसने लगेगा।

३—शब्द को इस तरह सुनना चाहिये जैसे कोई दूर से आवाज़ आती है तो कान लगाके यानी चित्त देकर उस को सुनते हैं ऐसे ही अन्तर में शब्द को सुनना चाहिये। शब्द अभ्यास के वक़्त स्वरूप का भी ध्यान करने से चित्त एकाग्र नहीं रहेगा इस लिये स्वरूप का ध्यान उस वक़्त मुल्तवी करना चाहिये। लेकिन अगर स्वरूप का ध्यान पक गया हो तो फिर अभ्यास के वक़्त गुरु स्वरूप का ध्यान करने में हर्ज नहीं है बल्कि मदद मिलेगी। जब तरगेँ उठें तब ध्यान और सुमिरन करना चाहिये।

४—सतगुरु के सन्मुख चित्त लगाके पाठ सुनने या किसी ऊँचे मुक़ाम पर चित्त लगा के पाठ सुनने से भी वही फ़ायदा होता है जैसा कि सुमिरन ध्यान या शब्द के अभ्यास से होता है। सुरत की धार यानी तवज्जुह की धार जो कि अन्तरगत है उस को संकल्प विकल्प वाली धार में यानी काल की धार में बहने नहीं देना चाहिये सुमिरन ध्यान से तरंगौं को दूर करना चाहिये—जब संकल्प विकल्प वाली धार का ज़ोर कम होगा तब तवज्जुह एकाग्र होगी।

५—इस का इलाज यह है कि कम खाना और दुख तकलीफ़ बीमारी तंगी वग़ैरह का होना—जैसे गरमी

में रौशनी है पर बग़ैर रगड़ने के रौशनी प्रगट नहीं होती वैसे ही तवज्जुह की धार मन की धार के अन्तरगत है पर जब तक दुख तकलीफ़ भींचा भींची कूटा पीसी और आधे पेट रहने का रगड़ा इस पर नहीं दिया जायगा तब तक वह तवज्जुह की धार इस से न्यारी नहीं होगी यानी तब तक मन जो सुरत को निगल गया है उसे नहीं उगलेगा।

६—तीसरा तिल गोया जंतरी है उस में पैठना तब होगा जब तन तोड़ा जायगा और मन पीस कर महीन हो जावेगा—

॥ कड़ी ॥

तन तोड़न मन अकुलाना।
क्या बरन बताऊँ जंतरी ॥

अगर कोई चाहे कि परमारथ भी करता रहूँ और स्वारथ भी अच्छी तरह से बनता रहे तो यह नहीं हो सकता—

॥ कड़ी ॥

दुनिया को चाहे तू और दीदार को।
यह है मुश्किल [illegible] ॥

। शेर ।

हम ख़ुदा ख़्वाही व हम दुनियाए दूँ।
ईं ख़याल अस्तो मुहाल अस्तो जुनूँ ॥

७—अगर कोई दिन रात अभ्यास करे और कुछ

दुनिया का काम काज न करे तो उस मैं भी ज़रूर हरज और नुक़सान होगा क्योंकि सुरत की जब चढ़ाई होती है तब उस के संग ख़ून वग़ैरह फ़ासिद मसाला भी जाता है, उस को अगर बाहेर का स्थूल काम काज करके नहीं झाड़ैंगे तो वह अन्तर में ऊपर रह कर ज़रूर फ़िसाद मचावेगा—इसी सबब से संतों ने तन की सेवा क़ायम की है और गृहस्थ आश्रम मैं रहना रवा रक्खा है—सिर्फ़ संसार की तरक़्क़ी की चाह अन्तर मैं न होनी चाहिये बल्कि चित्त में सच्चा वैराग और चरनों का अनुराग होना चाहिये ॥

॥ बचन १५ ॥

॥ धीरज और गम्भीरता ॥

जिस की सुरत जागी हुई है वही सकारी अंगों मैं बरताव कर सक्ता है ।

२—धीरज और गम्भीरता की परमार्थ में बड़ी ज़रूरत है—लड़कपन, चोचलापन, नख़रेबाज़ी, परमार्थ में मुज़िर और हारिज हैं—बाहर में जो चंचल है वह अन्तर मैं कैसे थिर हो सक्ता है, चाहिये कि

तन मन दोनों थिर होवें तब यह घट में पैठ सक्ता है—

॥ साखी ॥

तन थिर मन थिर बचन थिर सुरत निरत थिर होय।
कहैं कबीर इस पलक को कलप न पावे कोय॥

बाज़ी क़ौम की क़ौम चंचल होती है, जैसे अँगरेज़ हैं कि ज़रा भी उन से चुप करके बैठा नहीं जाता, कुछ न कुछ अंग हिलाते रहते हैं। ऐसे लोगों से संत मत का अभ्यास भला किस तरह बन सक्ता है। जब तक चंचलता और चपलता चित्त में है तब तक भटकता और भरमता रहता है, बाहरमुख धार की कार्रवाई जब कम होगी तब अन्तरमुख वृत्ती और सतोगुनी सुभाव होगा और सबर और धीरज के साथ उस का बरताव होगा।

३—बाजे ऐसे तुनुक-मिज़ाज होते हैं कि ज़रासा मिज़ाज के ख़िलाफ़ होता है तो बिगड़ जाते हैं और भड़क उठते हैं। चाहिये था कि सबर और धीरज के साथ बरदाश्त करते और मालिक की मौज समझ कर उस से मुवाफ़क़त करते, मुफ़्त अपने को ज़ेरबारी और तकलीफ़ में डालते हैं, मगर बहुतेरा समझाओ बुझाओ कभी मानते ही नहीं, ख़ून में उन के फ़िसाद भरा हुआ है। कहने का मुद्दा यह है

चंचलता और चपलता स्थूल और सूक्ष्म दोनों मसले और रगड़े जायँगे, उलटी सुलटी हालत करके और अभ्यास करा के इस का मन निर्मल और निश्चल किया जायगा, वरना अन्तर में ज़रा भी नहीं ठहर सक्ता और इन्द्री द्वारे भटकता और भरमता रहेगा। सम दम का घाटा असल में है—तन और इन्द्रियों का रोकना इस को सम कहते हैं और मन के रोकने को दम कहते हैं—

॥ कड़ी ॥

चंचल चित चपल मन नित जग में भरमावत ।

४—बुर्दबारी और गंभीरता भक्तजन का ज़ेवर है। अक्सर जो कि बड़े ख़ानदान के हैं उन के लड़कों में भी बचपन से बुर्दबारी और गंभीरता नज़र आई पड़ती है, इसी तरह सुरत भी सत्तपुरुष की अंस है चाहिये कि अपने कुल की लाज करे मन के संग न भरमे और न भटके। अगर कोई बड़े ख़ानदान का लड़का चण्डूबाज़ जुआरी और शराबियों के संग जाकर बैठे तो किस क़दर बुरी बात समझी जाती है, वैसे ही सुरत तन मन और इन्द्रियों के संग ख़राब हो रही है जब तक उन से अलहदगी नहीं होगी तब तक उलटी सुलटी हालत में दुखी होगी और उस का रूप हो जावेगी।

५-जिसका संसकार यानी भाग नहीं है वह चाहे सतसंग में हो ख़्वाह पास रहता हो कुछ नहीं होता है। जहाँ हुज़ूर साहब रहते थे उस गली में बहुतेरे रहते थे, भाग नहीं था ख़ाली रह गये, और जो कि सतसंग में रहते हैं वह सतसंग की झटक नहीं झेल सक्के। तुलसी साहब ने कहा है—

॥ कड़ी १ ॥

सतसँग करना मन मोह सरन सन्तन की।
अन्तर अभिलाषा लगी रहै चरनन की॥

॥ कड़ी २ ॥

जुगत जेठ की रीति करै कोइ किंकर जब होवै।
मन के विषम विकार झाड़ के तुलसी सब खोवै॥

भर्म तज भक्ति भजन करना।

मन सूरत को बाँध पकड़ पर जीवन ही मरना॥

विफल मद त्यागी होय फटकै।

हर दम पिया की पीर दरस बिन मन मोरा अटकै।

मगर कहिये क्या—जेठ की तपन कोई तपने नहीं देते हैं जब तोड़ फोड़ की जाती है तब संसारी सहारा और मदद का आसरा और ओट लेते हैं और भागने को तइयार हो जाते हैं।

६—उलटी सुलटी हालत में उलझन का आना और मुख़ालिफ़त करना परमार्थ के ख़िलाफ़ है, इस से ज़ाहिर होता है कि अभी विनोद के चाट पर चढ़ा

हुआ है। जिस क़दर बन पड़े उलझन के एवज़ सुलझन करनी चाहिये–

॥ साखी ॥

अपने उरझे उरझियाँ दीखे सब संसार।
अपने सुरझे सुरझियाँ यह गुरु ज्ञान बिचार॥

बंधन भारी है इस लिये उलटी हालत में घबराता है। जो कहीं बरदाश्त करने की आदत डाले, धीरज और गंभीरता के साथ झेले, और समझौती ले लेवे कि इस में फ़ायदा है, तो बंधन ढीले होंगे, आपा दूर होता जायगा, और जिस जानिब से कि उलटी हालत पैदा होती है या जो इस के ऐब ज़ाहिर करता है उस का शुकरगुज़ार होगा और उस को अपना हितकारी जानेगा–

॥ शब्द ॥

मेरी प्यारी सहेली हो दया कर कसर जता दो री।

जब धीरज के साथ बरदाश्त करने की आदत पड़ती है तब अगर कोई तान और तंज़ के साथ कहता है तो भी प्यारा लगता है और इस से दीनता चित्त में आती है, लेकिन ऐसा न होना चाहिये कि बाहर बरदाश्त करे और अंतर में ज्वाला की आग जलती रहे, पर जो कि सच्चे हैं वे अंतर और बाहर यकसाँ होते हैं।

७—अपनी तारीफ़ को यह मन बहुत ही पसन्द करता है, संसारी लोग कुप्पे जैसे फूल जाते हैं, और जो भक्त हैं मगर कच्चे हैं वह रो देते हैं यानी डरते हैं और अपने को बचाते हैं, और जो साध महात्मा हैं वह सावधान रहते हैं यानी उन में न रग़बत है न नफ़रत है तारीफ़ ख़ाह निन्दा का उन पर असर नहीं होता। मन पर दाब होना मुफ़ीद है, स्त्रियाँ जो स्वतन्त्र यानी ख़ुद-मुख़्तार हैं और लड़के जो कि पर-तंत्र नहीं हैं वह अक्सर मुजस्सिम बद-तमीज़ और मिस्ल बन्दर के होते हैं। चाहिये कि उन पर ताड़ मार होती रहे, इससे मन ढीला होता है और चंचलता छोड़ता है—

॥ कड़ी ॥

ढोल गँवार शूद्र पशु नारी। यह सब ताड़न के अधिकारी।

८—जैसे नाना प्रकार के लोग होते हैं ऐसे भाँत ७ के मन हैं, यानी सब का मन अलाहिदा है और वक़्तन फ़वक़्तन प्रथक प्रथक सूरतें नज़र आई पड़ती हैं मसलन किसी में काम किसी में क्रोध वग़ैरह अंग ज़बर होता है और मौक़े पर नमूदार होता है। क्रोधी के चेहरे और दिमाग़ पर ख़ून का ग़लबा होता है इस लिये चेहरा लाल नज़र आई पड़ता है, और जिस

में सतोगुनी अंग मौजूद है उस के चेहरे पर मालिक का नूर झलकता है।

कहने का मुद्दा यह है कि जिस की सुरत जागी हुई है उस की बोली कोमल, हिरदा सीतल, दयावान धीरजवान और गहिर गंभीर होता है, किसी से बैर बिरोध नहीं रखता क्योंकि उस की निगाह और रुख़ सुरत पर है मन माया यानी ख़ोल पर नहीं है, कुमत उस की दूर होती है और सुमत जागती है, और पहिले जैसे संसारी अंगों में बृत्ती उठती थी यानी चाह होती थी वैसे अब सुमत रूपी अंगों में बरताव करने की हिरदय में चाह उठती है। पहिले तो समझौती से शील, छिमा, संतोष, दया, दीनता, बरदाश्त, धीरज और गंभीरता के साथ बरताव करता है मगर जब सुरत जागती है तब न सिर्फ़ समझौती याद करके सकारी अंगों से बर्तता है बल्कि उसके अन्तर में यही चाह उठती है कि सील छिमा और धीरज से बरताव करूँ—

॥ कड़ी ॥

तन नगरी विच बजत ढंढोरा। भागे चोर ज़ोर भया थोड़ा॥
सील छिमा आय थाना गाड़ा। काम क्रोध पर पड़ गया धाड़ा॥

॥ वचन १६ ॥

परमार्थ में दुख तकलीफ़ और उलटी सुलटी हालत का होना
निहायत ज़रूरी है और इस में दया है।

मुसीबत में निज दया है इससे निर्णय करने की शक्ती जागती है और दुनिया की जो असली कैफ़ियत है वह मालूम होती है और उस का दुखदाई हाल देखकर नफ़रत आती है और मालिक के देश में चलने की सच्ची चाह हिरदे में पैदा होती है. तो जिस पर मालिक दया फ़रमाता है उस पर उलटी सुलटी हालत पैदा करके उस के मन को खिंच खिंच करता है और यहाँ की चीज़ों और भोगों से हटाता है। अगर कोई अभ्यास भी करता है और उलटी सुलटी हालत उस पर नहीं गुज़री है तो वह अभ्यास कूड़ा है, उस से जो असल मतलब इस का दुनिया से नफ़रत पैदा कराने का है वह नहीं होता, बल्कि अभ्यास में थोड़ा बहुत रस और आनन्द हासिल करके और कुछ शान्ती पाकर जहाँ का तहाँ रह जाता है। इस से मालूम हुआ कि दुख मुसीबत और उलटी सुलटी हालत का होना निहायत ही ज़रूरी है।

२—जब जब मालिक दया फ़रमाता है तब दुख

और तकलीफ़ देता है, इससे उस को अपने अभ्यास का नतीजा भी मालूम होता है कि किस क़दर बंधन ढीले हुए हैं और आया दुख तकलीफ़ के वक़्त मुस्तैद होता है या नहीं इसकी परख होती है, बग़ैर उलटी सुलटी हालत और दुख तकलीफ़ के न अभ्यास दुरु-स्ती से बनेगा और न मन की गढ़त और सफ़ाई होगी। जब तक मन पर भीचा भीची नहीं होगी तब तक इस में जो छिपी हुई मलीनता धरी हुई है वह दूर नहीं होगी। जब यह मन दुखा होगा तब संसार से उपराम होगा और मालिक के देश में चलने की सच्ची चाह पैदा होगी, इस लिये मालिक दया कर के अमूमन जीवों को दुख और मुसीबत देता है और जो कि बड़-भागी हैं उन को बिरह और तड़प देता है, पर ऐसे कोई बिरले संसकारी होते हैं जिन को बिरह की बख़्शिश होती है, उन का तो गोया काम बन गया।

३—असल में जो दुख होता है वह अक्सर मानन का है। जब इस को समझौती आ जाती है कि दुख तकलीफ़ में फ़ायदा है तब जो क़ुदरती चोट लगती है मसलन तन में जिस में कि इस का बन्धन है तो उस को बदरजे लाचारी झेलता है—और तकलीफ़ मानन की है जैसे दुनिया के सामान का न होना

जिस को यह सहज में हटा सकता है इस तरह की समझौती लेने से कि जो कुछ यहाँ का सामान है सब नाशमान है, सिवाय मामूली खाने पीने के और कुछ काम का नहीं है, यह समझ कर ज़रूरत के माफ़िक़ कारोबार और जतन करता है और सब मौज पर छोड़ देता है, इस से भक्तजन बहुत से दुक्खों से बच जाता है और उस पर उन का असर नहीं होता। ऐसा नहीं है कि हमेशा इस को दुख और तकलीफ़ होती रहे और दुनिया का सामान कुछ न मिले, जो ज़रूरी सामान है वह तो देते हैं मगर जो सामान कि परमार्थ में हारिज हैं वह खोस लेते हैं या असल में नहीं देते हैं। भक्तजन कहता है–

॥ कड़ी ॥

साहिब इतना माँगूँ जा में कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ साध न भूखा जाय॥

कहने का मुद्दा यह है कि जिन चीज़ों में इसका बंधन यानी पकड़ है वहाँ से इसको छुड़ाने के लिये राधास्वामी दयाल दुख और तकलीफ़ देते हैं सो इसी को निज दया समझना चाहिये।

४–तजरबा मुक़द्दम है और जो और कार्रवाई है वह लवाज़मा और जतन है। अगर समझौती है

और अभ्यास नहीं है या बात चीत सुन ली है और तजरबा नहीं है तो कुछ नहीं है, यानी ज़बानी कहना या बात चीत सुनकर समझ लेना कि दुख तकलीफ़ में फ़ायदा है यह गोया ऐसा है जैसा बही में जमा ख़र्च का होना और हाथ में कुछ नहीं, मगर वाक़ई दुख तकलीफ़ की हालत जो इस पर गुज़रे उस को झेल कर जो तजरबा हासिल होवे वह और बात है—असल फ़ायदा तजरबे में है, जब इस को तजरबा होगा तब यह ख़ुशी से चाहेगा कि दुख तकलीफ़ होवे और दुनिया के सामान के हर्ज मर्ज होने में दुखी नहीं होगा।

५—ऐसा न चाहिये कि दुनिया का सामान जब मुयस्सर न आवे या संसार से दुखी होवे तो कहे कि इस को गोली मारो राधास्वामी दयाल आप ही संभाल करेंगे, यह तो अनमिलते का त्याग है और यही मन की चोरी है क्योंकि अंतर में आसा धरी हुई है—चाहिये कि आसा बासा यहाँ की न रहे और बिलकुल यहाँ की चीज़ों और पदारथों से चित्त उपराम हो जावे, अपना घर तो उजाड़ करे ही पर और भी जो इस का संग करें उनको भी उजाड़ दे-

॥ कड़ी ॥

घर फूँका मैं आपना लूका लीना हाथ।
वाहू का घर फूँक दूँ जो चलै हमारे साथ॥

६—मन जब दुखी होता है तब कहता है चलो जमना में डूब मरें, यह करें और वह करें, यह सब मन की चतुराई है। असल में बरदाश्त की कमी है सो इस में मसलहत है। राधास्वामी दयाल खूब जानते हैं कि कहाँ कहाँ इसके बंधन और पकड़ हैं, आहिस्ता आहिस्ता सब बंधन तोड़ते जायँगे, जल्दी का काम नहीं है, इस मन को खिला खिला के तरसा तरसा के धीरे २ मारेंगे मगर मारेंगे ज़रूर।

कहने का मुद्दा यह है कि दुख तकलीफ़ में फ़ायदा है इसका तजरबा होना यह भी अभ्यास का एक अंग और ज़रूरी अंग है।

॥ बचन १७ ॥

जीवों की कुछ भी हैसियत नहीं है कि मालिक का गुप्त भेद जान सकें, यह सिर्फ़ संतों की ताक़त है—और जो कि सच्चे मालिक का खोज नहीं करते हैं वह नादान हैं—राधास्वामी दयाल जीवों के उद्धार के लिये परम सन्त सतगुरु रूप धारन करके इस संसार में आये और रचना का गुप्त भेद आप प्रगट किया और बिना करनी अपनी मेहर दया से उद्धार

करते हैं। सिवाय संत मत के और जितने मत हैं वह सब उस के आगे हँसी और खेल मालूम होते हैं।

२—मालिक ने सूरज चाँद और तारों को इतनी दूर रक्खा है कि इनसान की ताक़त नहीं कि वहाँ का भेद पूरे तौर से मालूम कर सके। असल में मौज ऐसी थी कि मालिक ने अपने भेद को गुप्त रक्खा। लोगों ने हरचंद कोशिश की कि आकाशी रचना का भेद मालूम करें मगर जैसा चाहिये नहीं कर सके। इसी सूरज चाँद तारागन को देखकर निहायत ही अचरज मालूम होता है तो जो इन सबका करतार है यानी जिस ने इन को रचा है वह कैसा होगा और जहाँ कि उस का देश है यानी निर्मल चेतन्य देश वह कैसा होगा और कैसा वहाँ का रस और आनंद होगा। ऐसे करतार के दरशन की जिस को चाह नहीं उठती वह पशु है, वह जैसा दुनिया में आया वैसा न आया। जो कि ऐसे पुरुष के दरशन के लिये जतन और कोशिश कर रहे हैं और अभ्यास करके जिन्हों ने कुछ रास्ता तय किया है और जिनके हिरदे में उस करतार से मिलने की चाह और प्रेम है वेही सच्चे साध और प्रेमी जन हैं। जो लोग कि दुनिया में कोशिश और तलाश करके कोई नई बात मालूम करते हैं उन की किस क़दर

ताज़ीम होती है तो जो कि मालिक की तलाश और खोज में दिन रात मेहनत और जतन कर रहे हैं और जो कि साध महात्मा हैं जिन को कि ज़ाती और क़ुदरती ताक़त रचना के भेद जानने की है उन की किस क़दर ताज़ीम और महिमा होनी चाहिये।

३—मगर हम लोग गँवार हैं, परमार्थ की कुछ ख़बर नहीं है, जैसे गँवार को जब कोई दिन सिखलाते हैं तब उस को थोड़ी बहुत क़ायदे क़ानून की वाक़िफ़ियत होती है इसी तरह जब कोई दिन सतसंग और अभ्यास करैं तब भक्ती की रीत मालूम होवे। बहुतेरे भिल्ल और जंगली लोग हैं जिन को कपड़ा पहिनने ओढ़ने की भी ख़बर नहीं है और हरचन्द बुला बुलाके उन को कपड़ा देते हैं पर नहीं पहिनते हैं और भाग जाते हैं, ऐसे ही परमार्थ में मालिक दया करके जीवों को लगाता समझाता और बुझाता है और सतसंग में शरीक करता है तौभी यह नहीं मानते और बार बार भाग जाते हैं और हैवानपना नहीं छोड़ते हैं, तो मालूम हुआ कि जीव निहायत ही अभागी और गँवार हैं। जो कि साध महात्मा हैं उन की नज़र में सब जीव एकसाँ हैं और सब पर उन की दया दृष्टि बराबर होती है—

॥ साखी ॥

कोई आवे भाव ले कोई आवे अभाव ।
साध दोऊ को पोषते भाव गिनें न अभाव ॥

और जिस को कि यहाँ दरशन हासिल हुआ है उस को वहाँ मालिक का दरशन होता है—

॥ साखी ॥

जाको दरशन इत्त हैं वाको दरशन उत्त ।
जाको दरशन इत नहीं वाको इत्त न उत्त ॥

४—मालिक जब जीवौं पर निज दया फ़रमाता है तब संत औतार धारन करता है, बड़े भाग उनके हैं जिन्हौं ने कि एक मरतबे भी सतगुरु का दरशन किया है, उनकी बड़ भागता का वार पार नहीं है, दरशन जो उन्हौं ने किया है वह कभी उन को माया देश में रहने नहीं देगा, ज़रूर एक रोज़ सत्त देश में पहुँ-चावेगा। जो कि सोये हुए यानी ग़ाफ़िल हैं उनको ख़बर नहीं है इस लिये क़दर नहीं करते हैं मगर जिनकी सुरत जागी हुई है उन के सुरत मन दरशन करते ही सिमटते हैं, रस और आनन्द आता है, अपने भाग सराहते हैं संसार से नफ़रत आती है और मालिक के चरनौं का प्रेम प्रगट होता है।

५—कहने का मुद्दा यह है कि जिन्हौं ने परम संत सतगुरु राधास्वामी दयाल का या उन के निज अंश का दरशन किया है और जो उन के संग रहे हैं उन

के भागों की अपार महिमा है, उन का गोया काम बन गया, काल करम की ताक़त नहीं कि उन को रोक सकें, उन का उद्धार हो गया, अपनी दया से राधास्वामी दयाल उन को अपने चरनों की प्रीत प्रतीत गहरी बख़्शते हैं और बिना करनी के उनको सत्तदेश पहुँचाते हैं। करनी जीवों से कुछ नहीं बन सक्ती है। हम लोग कुछ करनी नहीं करते हैं, थोड़ा बहुत सतसंग किया, पाठ सुन लिया, जैसा तैसा अभ्यास किया उस में भी तरंग उठाते रहे—यह कोई करनी नहीं है। असल में राधास्वामी दयाल अपनी दया से जीवों का उद्धार करते हैं और जिस क़दर मुनासिब होता है करनी भी आप कराते हैं नहीं तो हम लोगों की क्या ताक़त है कि कुछ भी कर सकें।

६—परम संत सतगुरु जो राधास्वामी दयाल का अवतार हैं और उनके निज अंश यानी मुसाहब जिन में कि राधास्वामी दयाल आप बिराजमान हैं वे दोनों एक ही हैं वे अगर इस रचना में न आते तो रचना का गुप्त भेद इस तरह कभी प्रगट न होता। ख़ुद ब्रह्मा बिष्नु महेश को भी रचना का भेद मालूम न हुआ और न पुरुष का दरशन हुआ. निरंजन ने आद्या से कहा था कि इन तीनों को

हमारा और सत्तपुरुष का पता न देना क्योंकि इन से रचना का काम लेना है—

॥ कड़ी ॥

आप निरंजन हुए नियारे। भार सृष्टि सब इन पर डारे॥
द्वीप रचा इक अपना न्यारा। ता में कीन्हा बहु विस्तारा॥

॥ साखी ॥

दरस निरंजन ना मिला किया ज्ञान अनुमान।
फिर आगे सतपुर्ण का क्यों कर करें प्रमान॥
ता ते यह मत सन्त का रहा गुप्त जग माहिँ।
गुन तीनों मानें नहीं जीवहु मानें नाहिँ॥

७—सच्ची सच्ची बात तो यह है कि काम तब बनेगा जब मोहिनी स्वरूप सतगुरु का इसके हिरदे में प्रगट होगा, इतने में कभी कभी शब्द भी सुनाई देगा और रस भी आवेगा, मगर ऐन करके अंतर द्वारे में प्रवेश तब करेगा जब सतगुरु का मोहिनी रूप प्रगट होगा सतगुरु स्वरूप गोया घट का ताला खोलने की कुञ्जी है—

॥ कड़ी ॥

गुरु कुंजी जो विसरे नाहीं। घट ताला छिन में खुल जाही॥

राधास्वामी दयाल ने दया कर के सब जीवों के उद्धार के लिये नर शरीर धारन किया है बल्कि नीचे के चक्रों तक में भी अपने रूप का अक्स पहुंचाया है—

॥ कड़ी ॥

रूप निरंजन धारा स्वामी। सो मेरे प्यारे राधास्वामी॥
मन के घाट हुए अब कामी। अस मेरे प्यारे राधास्वामी॥
इन्द्री घाट विकार घटामी। सो मेरे प्यारे राधास्वामी॥

सवाल—सतगुरु रूप कैसा होता है और संतों के रूप की पहिचान कैसे होती है।

जवाब—सन्त सतगुरु का रूप महाप्रकाशवान और विशाल होता है—

॥ कड़ी ॥

शोभा देखूं मैं अब गुरु की। नैन निहारूं सिरखी पुर की॥

सन्त सभी एकही घर से आते हैं उन के अन्तरी स्वरूप में कोई फ़र्क़ नहीं है।

॥ कड़ी ॥

सन्त सभी धुर घर से आवें। भेद कुल्ल मालिक का गावें॥

अंधा सुझाके को क्या पकड़ेगा, यह जीव तो अंधा है इस लिये वह मालिक आप इसको अपनी पहिचान कराता है. इस की कोई ताक़त नहीं है।

८—दुनिया के जो और मत हैं कुछ भी उन की हैसियत नहीं है. मसलन ईसाई जो कहते हैं कि इस पृथ्वी को पैदा हुए छःहज़ार बरस हुए हैं सो कैसी हँसी की बात है. या तौरेत में जो लिखा है कि मूसा ने लड़ाई के वक़्त जब हाथ अपना ख़ुदा की तरफ़

उठाया तब लड़ाई में फ़तह हुई पर जब हाथ थक गया तब उसे नीचे किया और तब से लड़ाई में हार होने लगी। इस लिये लोगों ने कहा उठाओ बुड्ढे के हाथ और ख़ुदा के सामने उनका जब हाथ किया गया तब फिर फ़तह होने लगी—क्या मज़े की बात है। हिन्दू कहते हैं सत्तनारायन की कथा नहीं सुनने से नाव डूब गई और जब सुनी तब तिर आई, इस तरह का डर है तो अच्छा मगर इसी को परमार्थ समझना निहायत ही ग़लती है।

॥ बचन १८ ॥

घट में नाम रूपी धन हासिल करने के लिये जतन करना चाहिये, संसारी धन हुकूमत की कुछ भी हैसियत नहीं है, मौत के वक़्त सब यहाँ ही छोड़ना पड़ता है, और पूरे गुरू के संग और सेवा से चेतन रूपी दौलत मुयस्सर होती है।

जिस को कि चेतन जौहर की ख़बर है और उसको घट में हासिल करता है उस के सामने संसार का धन, हुकूमत, मान, बड़ाई, तुच्छ नज़र आई पड़ती है बल्कि वह उनकी तरफ़ तवज्जह भी नहीं करता है, और जैसे मछली जल में केल करती है और बिना उस के तड़पती है और एक छिन भी नहीं रह सक्ती वैसे ही यह निस दिन अंतर में अमीरस में कलोल

करता है और उस को पान करके निहायत ही मगन होता है, अपना भाग सराहता है और मालिक का शुकराना अदा करता है, और जब ऊँचे देश का रस और आनंद आता है तब संसार इसको उजाड़ और जाल सा नज़राई पड़ता है और भोगों और पदार्थों से इस को नफ़रत होती है। जब गहरा प्रेम आता है तब ऐसी हालत होती है, यह सब रूहानी ताक़त का काम है।

२—संग की बड़ी ज़रूरत है और ऐसी हालत बिना पूरे गुरू के संग के हासिल नहीं होती है—

॥ साखी ॥

यह तन विष की बेलरी गुरु अमृत की खान।
सीस दिये जो गुरु मिलें तौ भी सस्ता जान॥

३—भक्त जन को संसार के जीव निहायत ही हक़ीर नज़राई पड़ते हैं और बिलकुल पशू मालूम होते हैं। अगर किसी को गधा कहो तो वह लड़ने को तइयार होगा, यह नहीं जानता कि वाक़ई काल इस से दिल्लगी कर रहा है कि कभी गधा कभी कुत्ता और कभी घोड़ा बनाता है।

४—भक्त जन चेतन रूपी दौलत हासिल करने के लिये जतन करता है और जो संसारी जीव हैं वे माया के पीछे पड़े हैं और दिन रात मिहनत और

मशक़्क़त करते हैं, जैसे सिपाही हैं कि वह धन और मान बड़ाई के लिये अपनी जान दे देते हैं और वेश्या झूठे धन के लिये अपना तन दे देती है तो सच्चे धन यानी परमार्थी दौलत हासिल करने के लिये किस क़द्र जतन और कोशिश करना चाहिये। जो कि सच्चा भक्त जन है उस को सिवाय मालिक के प्रेम और चरन रस के कोई संसारी पदारथ नहीं भाता यानी बग़ैर प्रेम के जो कि मालिक का अंग है और कोई दूसरा अंग यानी संसारी पदारथ पसंद नहीं आता है।

५—जब कोई दिन अभ्यास करेगा तब संसारी बंधन ढीले होंगे, प्रेम आवेगा और संसार से नफ़रत होगी, कहाँ का बादशाह—भक्त जन के सामने कुछ भी हैसियत उस की नहीं है। मौत जब आती है तब धन दौलत हुकूमत सब यहाँ ही छोड़ना पड़ता है।

जब प्रेम पैदा होवे और रस आनन्द आवे तब समझना चाहिये कि दया की शुरूआत है। वैसे दया तो हमेशा है और हो रही है मगर वह जो ऊँची हालत होनेवाली है उसकी गोया शुरूआत है, बढ़की दौलत जब इसको हासिल होगी तब संसार से चित्त उपराम होगा। कहने का मुद्दा यह है कि परमारथ

में इस क़दर इस को रस आनन्द आवे जो संसारी सुख और आनन्द पर हावी होवे तब यह सच्चा हो कर परमारथ की तरफ़ मुख़ातिब होगा।

६–क़ुदरत का जो कारख़ाना है उस को देखकर निहायत ही अचरज मालूम होता है। जैसे यह पृथ्वी है उस के नीचे और ऊपर और लोक हैं, अनंत ऐसी पृथ्वियाँ और लोक हैं, सिर्फ़ यहाँ ही जो कैफ़ि-यत नज़र आई पड़ती है उस को देखकर अक़्ल दंग हो जाती है तो ऊपर की रचना की क्या कैफ़ियत होगी दम मारने की गुंजाइश नहीं है, और कैसा वह मा-लिक होगा जिसने इस कुल कारख़ाने को रचा है उसके दरशन के लिये कोई चाह नहीं करता–लोग बावले हैं, संसारी धन जो कि कौड़ी से भी कम है, कुछ भी जिस की हैसियत नहीं है, उस के हासिल करने में मस्त और मगन हो रहे हैं और परमार्थी धन जो कि हीरा है उस का कुछ भी ख़याल नहीं करते, लाख दो लाख रुपया इकट्ठा करके मस्त हो कर बैठते हैं। पर यह धन यहाँ ही छोड़ना पड़ेगा, अंत समय जैसे जुआरी हाथ झाड़ के उठता है वैसे यह भी दोनों कर रीते करके जायगा इस का कभी सोच बिचार भी नहीं करते।

७–भक्त जन को मालिक थोड़ी बहुत रचना की

कैफ़ियत भी दिखाता है। जब पिण्ड के परे ब्रह्मांड में इस का मेराज होता है तब जो मालिक का गुप्त भेद यानी राज़ और मुअम्मे हैं वह मालूम होते हैं—

॥ कड़ी ॥

भेद मोहिं गुप्त दिया जब ही। हरे मेरे मन बुद्धी तब ही ॥

८—बिद्या वालों ने अभी एक नये उनसर की तलाश की है जिस को रेडियम कहते हैं—कुल चौ-रासी तत्त हैं इनमें से अंगरेज़ों ने पचहत्तर दरयाफ्त किये हैं। अब यह रेडियम छिहत्तरवाँ है। इसमें से हमेशा और हर वक्त गरमी और रोशनी निकलती रहती है।

९—जैसे रेडियम से हर वक्त गरमी और रोशनी बाहर निकलती रहती है वैसे ही जो कि साध और सन्त हैं उन में से हर वक्त प्रेम और चेतन की धारें निकलती रहती हैं, और जैसे जो कोई आग के निकट जाता है तो उस पर आग का असर होता है यानी गरमी होती है वैसे ही जो कोई कि सन्त महात्मा के पास जाता है तो उस में भी ज़रूर प्रेम आता है और चेतनता बढ़ती है।

१०—भाग से जब पूरे गुरू मिल जावें तब तन मन धन से उन की सेवा करनी चाहिये, वह जब दया करेंगे तब नाम रूपी धन की बख़िशश होगी—

॥ कड़ी ॥

यथा सेवा कर गुरु रिझाऊँ। भक्ति भाव धरा दया [illegible]॥

सब से बड़ी सेवा राधास्वामी दयाल की यह है कि प्रीति सहित सुरत से बारम्बार उन के नाम का रटन यानी सुमिरन करता रहे—

॥ कड़ी ॥

स्वाँति बूँद जस रटन पपीहा। तस धुन नाम लगावे॥

नाम प्रताप सुरत अब जागी। तब घट शब्द सुनावे॥

राधास्वामी नाम का सुमिरन करना इस से बढ़ कर और कोई सेवा नहीं है—जिसको कि हर वक्त राधास्वामी नाम याद है उस के हिरदे में गोया मालिक के चरन बस गये और यही चेतन जौहर यानी नाम रूपी धन है—

॥ साखी ॥

नाम रतन धन पाय कर, गाँठी बाँध न खोल।

नाहीं पटन नहिं पारखू, नहिं गाहक नहिं मोल॥

॥ साखी २ ॥

सभी रसायन हम करीं, नहीं नाम सम कोय।

रंचक घट में संचरै, सब तन कंचन होय॥

॥ साखी ३ ॥

जबही नाम हिरदे धरा, भया पाप का नास।

मानो चिनगी आग की, परी पुरानी घास॥

॥ कड़ी १ ॥

सुरत को मिला ख़ज़ाना नाम ॥

॥ कडी २ ॥

गुरु नाम रसायन दीना । दारिद्र हुआ सब छीना ॥

॥ बचन १६ ॥

संसकार का असर स्वारथ ख़ाह परमारथ में और बरनन भूल भर्म संसारियों का

संसारियों की कुल कार्रवाई स्वारथ ख़ाह परमारथ की करम फल अनुसार होती है, जैसा जिस का अगला पिछला संस्कार है उसी अनुसार उस का सुभाव होता है । मसलन कोई बचपन से चोर होते हैं या बाज़े बड़े समझदार और नेक और रौशन ज़मीर नज़राई पड़ते हैं, या कोई ऐसे गँवार होते हैं कि कितना ही उनको समझाओ बुझाओ कुछ नहीं समझते, कभी अपना हठ अंग नहीं छोड़ते, तो इस से मालूम हुआ कि अगले पिछले करमों का यानी संसकार का असर बड़ा भारी होता है ।

२—लोग संसारी कारोबार में अपने नफ़े नुक़सान

की जाँच करते हैं, जिस में नुक़सान होता है वह काम नहीं करते हैं और जिसमें नफ़ा होता है वही काम करते हैं और उस की तरक़्क़ी के लिये जतन और कोशिश दिन रात करते हैं, परमारथ में इस क़दर भी सोच विचार न करना कि जो परमारथ हम कमा रहे हैं उस से आइंदा हम को नफ़ा है या नुक़-सान इस से बढ़कर और अभागता क्या है।

३--जो कि संसकारी हैं वे हमेशा अपनी निरख परख करते रहते हैं और जो असंसकारी हैं उन को कितना ही कोई समझावे तौ भी नहीं समझते और अपनी टेक पक्ष नहीं छोड़ते—जैसे नीम का पेड़ कि उसे कितना ही चाहे कोई घी से या दूध से सींचे तौभी फल उस का हरगिज़ मीठा नहीं होगा इसी तरह अनअधिकारी को चाहे कितना समझाओ हर-गिज़ उस पर असर नहीं होगा—

॥ कड़ी ॥

जितने संसारी और रागी। उन को टेक न चहिये त्यागी॥ १॥
उन को टेक सहारा भारी। टेक बिना कुछ नाहिं अधारी॥ २॥
उन को नहिं उपदेश हमारा। उन को जग कामना मारा॥ ३॥
कोइ कुटुम्ब कोइ धन आधीना। कोइ कोइ मान प्रतिष्ठा लीन्हा॥ ४॥
मारे डर के टेक न छोड़ें। सतगुरु में मन नहिं जोड़ें॥ ५॥

४—संसार के जीव निहायत ही असंसकारी हैं।

जब जब संत आते हैं तब जो ऐसे जीव उनके सन्मुख आते हैं तो उनके भाग का गोया बीज बोया जाता है और वह एक रोज़ ज़रूर अंकुर निकलेगा—

॥ सोरठा ॥

सन्त डारिया बीज घट धरती जेहि जीव के।
को अस समरथ होय जो जारे उस बीज को ॥
कोई काल के माहिं वह बीजा अंकुर गहे।
जब जब आवें सन्त अंकुरी उन सँग रहे ॥ २ ॥
वह सींचें निज पौद होय भक्त वह पेड़ सम।
फल लागें अति से सरस भोगे सतगुरु मेहर से ॥ ३ ॥
कारज कीना पूर सन्त धूर हिरदय धरी।
सूर हुआ मन चूर नूर तूर घट में प्रगट ॥ ४ ॥

५—कोई कहते हैं राम, कृष्न, ख़ुदा और भगवान सब एक ही हैं—क्या मजे की बात है। अब इन से पूछो गुदा, इन्द्री, नाभि चक्र क्या सब एक ही हैं। ईश्वर परमेश्वर ब्रह्म और पारब्रह्म क्यों कहा। ब्रह्म और पारब्रह्म में क्या फ़र्क़ है। ब्रह्म के परे जो है उस को पारब्रह्म कहा है। और तैंतीस करोड़ देवता कहे हैं और लक्ष्मीनारायन कहा है, तो जैसा देवता वैसा नारायन हुआ। इस क़िस्म की ग़लतफ़हमी अक्सर लोगों पर ग़ालिब है—इस का भेद सन्तमत में साफ़ खोल कर कहा गया है।

९—सन्त फ़रमाते हैं कि रास्ता घट में है। जिस रास्ते कि स्वप्न में जागृतसे जाते हैं उसी रास्ते चलना होता है। नींद में बेहोश और बेइख़्तियार जाते हैं, अभ्यास में बाहोश और बाइख़्तियार जाना होता है। रास्ते में कितने ही ठेके और मंज़िलें हैं, हर एक स्थान की ताक़त जुदा है। कुल अठारह दरजे हैं और तीन बड़े मण्डल हैं यानी पिण्ड ब्रह्माण्ड और दयाल देश। हर एक में छः छः चक्र हैं और एक दूसरे का प्रतिबिम्ब है। सब के परे का जो स्थान है वह राधास्वामी धाम है और यही कुल मालिक का नाम है। घट घट में शब्द हो रहा है, इस चेतन धार को पकड़ के अंतर में चलो, नाम का सुमिरन करो, गुरु स्वरूप का ध्यान धरो, अंतर में शब्द का श्रवण करो, और गुरु की सेवा करो, यह सन्त मत है और सब करम भरम है—

॥ शब्द ॥

मेरे गुरु दयाल उदार जी। गत मत नहीं कोई जानता।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

कोइ मौन साधें जप करें । कोइ पंचअगिन धूनी तपें ॥
कोइ पाठ होम और जग करें । कोइ ब्रह्म ज्ञान सुनावता ॥ ४ ॥
कोइ देवी देवा गावते । कोइ राम कृश्न धियावते ॥
कोइ प्रेत भूत मनावते । कोइ गंगा जमुना न्हावता ॥ ५ ॥
कोइ दान पुन्न करावते । ब्राह्मन भेष खिलावते ॥
कोइ भजन गाय सुनावते । कोइ ध्यान मन में लावता ॥ ६ ॥
यह सब जो पिछली चाल हैं । काल और करम के जाल हैं ॥
इन में पड़े बेहाल हैं । सब जीव धोखा खावता ॥ ७ ॥
जो चाहे तू उद्धार को । सच्चे गुरू को खोज लो ॥
कर प्रीत और परतीत तू । फिर चरन सरन समावता ॥ ८ ॥
राधास्वामी नाम सम्हार ले । गुरु रूप हिरदे धार ले ॥
सुत शब्द मारग सार ले । गुरु महिमा निस दिन गावता ॥ ९ ॥
सतसंग कर चित चेत कर । गुरु प्रीत कर हिये हेत कर ॥
मन काल मारो रेत कर । सुत शब्द माहिँ लगावता ॥ १० ॥
गुरु तुझ पै मेहर दया करें । पल पल तेरी रच्छा करें ॥
मन उलट कर सीधा करें । फिर गगन माहीं धावता ॥ ११ ॥
नभ माहिँ दरशन जोत कर । त्रिकुटी चरन गुरु परस कर ॥
सुन माहिँ सारंग साज कर । बेनी में जाय अन्हावता ॥ १२ ॥
व्हाँ से सुरत आगे चली । सोहंग मुरली धुन सुनी ॥
सत पुरुष के चरनन रली । धुन सार शब्द सुनावता ॥ १३ ॥
मन थाल लीन्ह सजाय कर । और सुरत बाती बनाय कर ॥
फिर शब्द जोत जगाय कर । भर प्रेम आरत गावता ॥ १४ ॥
दृढ़ प्रीत वस्तर साज कर । और भाव भक्ती भोग धर ॥
मन चित से आज्ञा मान कर । प्यारे सतगुरु को रिझावता ॥ १५ ॥
फिर अलख अगम को धाइया । घर आदि अन्त जो पाइया ॥
राधास्वामी चरन समाइया । धुर धाम सन्त कहावता ॥ १६ ॥
गुरु महिमा क्योंकर गाइया । राधास्वामी मेहर कराइया ॥
निज देश अपना पाइया । धन धन्य भाग सरावता ॥ १७ ॥

॥ वचन २० ॥

भक्त जन की उलटी बात भी सुलटी होजाती है और उसमें से परमारथी फ़ायदा निकल आता है

जो लोग कि सन्त मत में शामिल हुए हैं और सच्चे हैं यानी सिवाय अपने जीव के कल्यान और उपकार के और कोई मतलब नहीं रखते वे मालिक के अपनाये हुये हैं और उनके लिये जो कुछ कार्रवाई होती है वह मालिक की मौज से होती है। ऐसे संसकारी के लिये बाज़ी संसारी बात जो कि उलटी नज़र आती है वह सुलटी हो जाती है और उस में से परमारथी फ़ायदा निकलता है। जिस पर ऐसी मालिक की दया है उस से बढ़ कर भागवान और कोई नहीं है—

दृष्टान्त—सूरदास जिनकी साध गति थी उन को अपनी स्त्री से प्रीत ज़ियादा थी। एक दफ़ै उन की स्त्री अपने मायके गई और वह घर दरिया के पार था। सूरदास को बड़ी बेताबी हुई और मुहब्बत के जोश में परली पार जाने का इरादा किया। रात का वक़्त था दरिया में उन को एक मुर्दा नज़र

आया जिस को नाव समझकर चढ़ बैठे। जब उस मकान के पास पहुँचे तब दीवार पर एक साँप उन को नज़र आया जिस को रस्सी समझ कर उस के सहारे ऊपर चढ़ गये और मकान में अपनी स्त्री से जाकर मिले। जब उन की स्त्री को इस बात की ख़बर पड़ी तब उस ने कहा कि ऐसी प्रीत अगर मालिक से करते तो सच्चा और हमेशा का लाभ होता, इन्सान के साथ मुहब्बत करने से क्या फ़ायदा होगा। यह सुनकर सूरदास के जिगर में गोया तीर लग गया और स्त्री से कहा कि तू अब मेरी गुरू है और उसी वक़्त सब छोड़ छाड़ के मालिक की तलाश में निकल खड़े हुए। स्त्री और और लोगों ने बहुतेरा उन को समझाया लेकिन किसी का कहना नहीं माना। चलते चलते एक जगह कुआ देखा जिस में से मर्द और औरतें पानी भरते थे। एक स्त्री पर उन की नज़र पड़ गई और उस पर आशिक़ हो गये, उस से पानी पिलाने के लिये कहा और उस ने पिलाया, लेकिन तो भी उन्हों ने उस स्त्री का पीछा नहीं छोड़ा। वह स्त्री और उस का मर्द दोनों भक्त थे और उन को पूरे गुरू मिले थे जिनकी भक्ती करते थे। स्त्री ने अपने पति को सब हाल सुनाया। पति ने कहा कि यह बेचारा ग़रीब है, मालिक की

तलाश से निकला है, तुम हर तरह से इस की सेवा और ख़ातिरदारी करो। पति की आज्ञा पाकर स्त्री सूरदास की सेवा करने लगी। सूरदास इसकी सचाई और भक्ति अंग देखकर निहायत शरमिन्दा हुए और अपनी कुदृष्टि पर ऐसी ग्लानि आई कि स्त्री से एक चूड़ी माँग कर और दो टुकड़े कर के अपने दोनों आखों में चुभा कर अंधे हो गये और स्त्री से कहा कि पहिले मैंने अपनी स्त्री को गुरु किया था अब तुझ को भी अपना गुरु करता हूँ, तूने मुझ को मालिक से इश्क़ करने का सबक़ सिखाया है। फिर उस स्त्री और उस के मर्द ने कहा कि हम ने पूरे गुरु के परताप से ऐसी भक्ति पाई है तुम भी उन की सरन लो तो कुल बिकार दूर हो जायँगे और एक रोज़ मालिक से मेला हो जायगा। सूरदास ने ऐसा ही किया और साध गति को प्राप्त हुए।

२—इस तौर से जब किसी को सच्ची नफ़रत आवेगी और भोगों से उपरान्त यानी उदास होगा तब वह सच्चा होकर परमारथ में लगेगा, मगर मन ऐसा ढीठ, निडर, निलज्ज है कि बहुतेरा पछतावे और शरमावे और क़सम खावे कि ऐसा काम फिर कभी नहीं करूँगा तो भी जैसे कुत्ते की दुम टेढ़ी है कि उस को बहुतेरा सीधा करो फिर टेढ़ी की टेढ़ी रहती

है, पहिले किसी बात से नफ़रत करता है मगर घंटे दो घंटे बाद बेहया वही काम करने को तइयार हो जाता है—यह सच्ची नफ़रत नहीं है, पछताना झुरना और अफ़सोस करना इससे मन की सफ़ाई होती है और जिस को पछतावा करने से भी नफ़रत नहीं आती है वह निहायत मलीन है। जहाँ राधास्वामी दयाल की हुकूमत यानी सतसंग है वहाँ उलटी बात भी सुलटी हो जाती है यानी उस में से परमारथी फ़ायदा निकलता है, पर इस से ऐसा समझना नहीं चाहिये कि अगर कोई सतसंग में जाकर बुरा काम करेगा तो सुलटा हो जायगा, जो जान बूझकर ऐसा काम करेगा वह फटकारा जावेगा। इस वक्त जीवों पर मालिक की भारी दया है कि जा बजा सतसंग जारी हैं और निज रूप से राधास्वामी दयाल आप निगरानी और सम्हाल कर रहे हैं। असल में परमार्थ का मतलब यह है कि सुरत मन सिमटें और बंधन टूटें, और जितने काम हैं सब लवाज़में हैं। जिसका प्रेम अंग जागा है वह जब संत मत में शरीक होता है तब उस की तरक्की तेज़ होती है, रोज़ाना सतसंग और अभ्यास करने से सफ़ाई होती जायगी और एक दिन मालिक के चरनों में पहुँच जायगा।

॥ वचन २१ ॥

संसारियों की कार्रवाई करमानुसार होती है और जो परमार्थी हैं उनकी कार्रवाई में मौज की धार भी शामिल होती है और जिस पर दया है उस की गढ़त होती है

दुनियादारों की कार्रवाई करम फल अनुसार होती है और जो सतसंगी हैं उन के कारोबार में करम फल के साथ मौज शामिल रहती है। चेतन धार जो ऊँचे देश से आ रही है उस को मौज की धार कहते हैं। जो कि सुरत शब्द का अभ्यास करते हैं उन का थोड़ा बहुत सिलसिला उस मौज की धार के साथ लगा हुआ होता है और उपदेश लेने से उन का सूत सत्तपुरुष के चरनों से लगा दिया जाता है। यानी राधास्वामी दयाल का पल्ला पकड़ा दिया जाता है। जिस क़दर जिस का उस धार से मेला होना है उसी क़दर गुप्त या प्रगट मौज की धार उसके कारोबार में शामिल होती है। जहाँ तक माया है वहाँ तक करम फल ज़रूर थोड़ा बहुत चढ़ा रहता है, निरमाया देश में करम नहीं हैं वहाँ जब उनकी रसाई होगी तब

कुल कार्रवाई मौज से होगी, और वहाँ मौज प्रगट नज़राई पड़ेगी। करम फल त्रिकुटी में ख़तम होता है, वहाँ जब यह पहुँचेगा तब निःकरम होगा।

२—अगर मौज शामिल है तो हरचन्द बाहर का सामान मौजूद नहीं है और कोई उम्मैद भी नहीं है तौ भी ऐसी सूरत होती है कि उलटी से सुलटी कार्रवाई हो जाती है, और अगर मौज शामिल नहीं है और बाहर का सामान भी मौजूद है तौ भी सुलटी से उलटी कार्रवाई हो जाती है, याने बन्दे से राजा और राजा से बन्दा हो जाता है। देखो नेपोलियन एक अदना लफ़टेनेन्ट था पर अगला पिछला संस्कार था किस क़दर दरजा हासिल हुआ। ऐसी बहुतेरी मिसालें हैं।

३—सुरत शब्द अभ्यास करने से सख़्त से सख़्त करम कटते हैं और क्रियमान करमों का असर नहीं होता है, अगर होता है तो बिलकुल ख़फ़ीफ़, जैसे खेत में बीज बोया और बरसात बराबर न पड़ी तो छोटे २ पौदे निकलते हैं और फिर जलदी नाश हो जाते हैं वैसे ही क्रियमान करम अगर ज़ाहिर होते भी हैं तो उन का असर ज़ियादा नहीं होता है। जहाँ २ इसका बंधन है वह जब तोड़ा जाता है तो वहाँ से जब सुरत हटती है तब इस को झटका लगता है

इससे तकलीफ़ होती है और यह घबराता है। चाहिये कि उस वक़्त समझौती याद करके मालिक का शुकराना अदा करे कि नाक़िस करम कट रहे हैं और बन्धन से रिहाई हो रही है।

४—जिस पर मालिक की दया है उस को अगर अगले पिछले करमों के सबब बाहरी दुनिया का सामान, नामवरी या मान बड़ाई मिलने वाली है तो इसके साथ बचाव के लिये मौज की धार शामिल रहती है और किसी न किसी क़िस्म की मन को ज़िच बिच लगी रहती है ताकि वह फूलने न पावे। संसारी जीव जिन पर कि दया है और रहनी गहनी जिनकी अच्छी है उन के कारोबार में भी थोड़ी बहुत मौज की धार शामिल होती है मगर जो निपट संसारी हैं और दिन रात दुनिया के कामों में पिल रहे हैं वे तो अपना करम फल भोगते हैं और कर्मों में बह जाते हैं।

५—मुक़द्दम परमार्थ है और स्वार्थ दूसरे दर्जे में है मालिक हमेशा इस की परमार्थी तरक़्क़ी पर पहिले नज़र करता है बाद इसके स्वार्थ का ख़्याल करता है। परमार्थ की तरक़्क़ी हो और इससे अगर स्वार्थ का हर्ज होवे तो कोई मुज़ायक़ा नहीं है, जिस क़दर बन पड़े उतना परमार्थी तरक़्क़ी के लिये जतन और

कोशिश करना चाहिये । संसारी सामान भी कर्मानुसार मालिक देता है इस लिये चाहिये कि स्वार्थ का कुछ ख़याल न करै, अगर इसके घर में आग लगे चाहिये कि चुप करके अन्तर में ढोल बजावै। असल में सच्ची २ बात तो यही है, मगर संसार में इस का बंधन है इसलिये तक़लीफ़ होती है, हरचंद मुसम्मिम इरादा भी करता है कि आइंदा किसी हर्ज मर्ज में दुखी नहीं होऊँगा मगर फिर भी भूल जाता है। अगर इस को यक़ीन है कि कोई सच्चा करतार है और वह सर्व समरथ और हाज़िर नाज़िर है तो दिल में ढारस होनी चाहिये कि जो कुछ वह करेगा बग़ैर परमारथी मसलहत और मुनफ़अ़त के लिहाज़ के हरगिज़ नहीं करेगा, ज़रूर उस में नफ़ा होगा। ऐसी समझौती धारन करने से भी शान्ती आती है और मौज से मुवाफ़क़त होती है और दुख तकलीफ़ कम व्यापते हैं।

६—भक्त जन को तो जो मुनासिब है मालिक आप से आप देता है पर ज़ियादा नहीं देता है ताकि फँसने न पावे। जहाँ अनाज बोया जाता है वहाँ भूसा आप से आप होता है भूसे के लिये अनाज नहीं बोया जाता है, यानी जहाँ परमार्थ है वहाँ स्वार्थ का बन्दोबस्त मालिक आप से आप कर देता

है, और स्वार्थ के लिये परमार्थ नहीं कमाया जाता है, स्वार्थ गोया भूसा है और परमार्थ अनाज है. भूसा बैलों का आहार है और अनाज आदमी का। अगर सिर्फ़ भूसा यानी स्वार्थ है तो मन रूपी बैल को तो खाजा मिला मगर सुरत भूखी रह जाती है।

७—जो कि राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं उन सब की गढ़त यानी सफ़ाई होती है और होगी. गो कि यह नहीं चाहता है कि कोई दुख तकलीफ़ होवे, और कहता है कि सतसंग अभ्यास करूँगा पर गढ़त न होवे, मगर जैसे सुनार नहीं छोड़ता है, वह तो अपनी कार्रवाई शुरू कर ही देता है यानी कूट और पीट के सोने को सीधा करता है तब गहना बनता है, इसी तरह वक़्त पर सब की गढ़त होती है. और जिस की गढ़त होती है वह बड़भागी है। गढ़त में भी दरजे हैं मसलन कोई सोना मिट्टी में मिला होता है और कोई साफ़ है तो उसी अनुसार सफ़ाई की ज़रूरत होती है. पर एक रोज़ सब की दुरुस्ती होगी। अगर परघट मालिक गढ़त करता तो सब लड़ने और गाली देने को तइयार हो जाते बल्कि उस को बैरी समझते. इस वास्ते गुप्त रूप से मालिक गढ़त करता है।

॥ बचन २२ ॥

इस लोक में दुख सुख मिला हुआ है और सब जीव सुख की चाह रखते हैं मगर दुख का होना ऐन मालिक की दया है क्योंकि दुख से जीव चेतता है। इस ज़माने में मालिक की ख़ास दया हो रही है कि इधर परमार्थ में सन्त सतगुरु गुप्त हुए तो परमार्थियों के चित्त में जिन्हों ने अपनी प्रीति बाहरी चोले से लगाई थी उदासीनता छाई और सच्चे परमार्थियों की तड़प और बेकली ज़ियादा हुई जो कि बहुत काम बनाने वाली है सच्चे परमार्थ का मतलब ही यह है कि परदे जो माया के जीव के ऊपर पड़े हुए हैं फाड़ दिये जावैं—छिन भर की तड़प और बेकली सौ बरस के अभ्यास और भजन से बेहतर है क्योंकि परदे इससे जल्दी फटते हैं। उधर संसार में कहीं लड़ाई कहीं अकाल और मरी फैलाई, इस वक्त छः लाख आदमी रिलीफ़ वर्क्स में लगे हैं और प्लेग भी फैलता ही जाता है, कुछ ठिकाना ही नहीं है। ग़रज़ कि इस समय में मालिक की अपार दया है कि तमाम लोक का कारज बना रहे हैं और बनाना मंज़ूर है। ऐसे दुख के वास्ते हज़ार शुकर करना चाहिये बल्कि सच्चे परमारथी प्रार्थना किया करते हैं

कि थोड़ा बहुत दुख बना रहै कि जिस से उन का मन मालिक से मिलने का जतन करता रहै, और संसारी भी तरह तरह के दुख देख कर घबराते हैं और तलाश करते हैं कि कोई ऐसा भी स्थान है जहाँ हमेशा का सुख मिले और इस लगातार दुख भुगतने से बचाव हो जावे।

सवाल—हुजूर महाराज के गुप्त होने के बाद बाज़े सतसंगियों के मन में कोई तड़प या बेकली न हुई साधारन रहे न उन के सामने कुछ शोक निज रूप से मिलने का था न बाद हुआ इसका क्या बाइस है?

जवाब—परमार्थियों के तीन दरजे हैं अव्वल नंबर के परमार्थी वह हैं कि जिनको हुजूर महाराज के चोला गुप्त होने पर तड़प और बेकली बहुत है और दिल से चाहते हैं और प्रार्थना करते हैं कि अगर बाहर से मौज नहीं तो अन्तर में कुछ सहारा और मदद मिलती जावे सो दया से उन को मिल रही है और कारज उन का बन रहा है। दूसरे वह कि जिन्हों ने सच्चे मन से सरन ली है और समझ लिया है कि शब्द सरूप से हुजूर महाराज सब के अंग संग हर वक़्त मौजूद हैं कभी गुप्त नहीं होते, उन को शान्ती हासिल है और कोई खास तड़प और बेकली दरशनों की नहीं है। तीसरे दर्जे पर

निकृष्ट परमारथी हैं कि जिन को न हुज़ूर साहब के वक़्त में कोई तड़प थी न अब है, यह जीव भी धीरे धीरे सँभाले जावेंगे मगर देर लगेगी ॥

॥ बचन २३ ॥

काल शिकारी जो हर दम तीर लिये मारने को तैयार खड़ा है न मालूम छिन में क्या कर दे, इस संहार शक्ति का भी कुछ हाल नहीं मालूम होता तो फिर उस समरथ पुरुष कुल मालिक का जो बचाने वाला है क्या हाल मालूम हो सक्ता है।

सतसंगियों को हाथ पाँव की मेहनत करना ज़रूर है और बाज़ बाज़ सतसंगी जो शिकायत करते हैं कि इस क़दर दफ़्तर वग़ैरह का काम लिया जाता है कि .फुरसत परमारथी कार्रवाई के लिये बहुत कम मिलती है यह मसलहत से है क्योंकि जो कुछ आदमी खाता पीता है उस का .खुलासा मन-आकाश तक पहुँचता है वहाँ पहुँच कर उस का उतार होता है जैसे कि बरफ़ पानी होकर फिर बुख़ार होकर बादल रूप हो जाती है फिर वहाँ से पानी रूप हो कर बरसती है और जम कर बरफ़ बन जाती है। अब इस देह में चन्द मोरियाँ चौड़ी हैं और चन्द तंग मिस्ल हज़ारे फ़व्वारे के और जिस वक़्त उस .खुलासे

का उतार होगा उस के साथ किसी क़दर चेतन भी उतरेगा और अगर वह .खुलासा किसी चौड़ी मोरी की तरफ़ रुजू हो तो उस में चेतन्यता भी ज़ाइल होगी और विकार भी पैदा होगा। इस लिये अभ्यासी को चाहिये कि कुछ मेहनत हाथ पाँव की करता रहे कि जिस से वह .खुलासा तंग मोरियों के ज़रिए से निकल जावे और चेतन कम जाये हो। अलावा इस के बाद मेहनत करने के अभ्यासी जो परमार्थी काम करेगा तो उस में उस का चित्त ज़ियादा लगेगा और दीनता रहेगी।

सवाल—लेकिन दुनियावी कार्रवाई में जिस क़दर वह ज़ियादा की जावेगी बंधन ज़ियादा होगा।

जवाब—बंधन उस काम में होता है जिस में इस को किसी क़िस्म का रस आता है लेकिन जो काम कि फ़र्ज़ समझ कर किया जावे और जिस से अलहदा होने को झटपट दिल चाहे कि किसी तरह यह ख़तम हो जावे उस में बन्धन न होगा। इसलिये परमार्थी को चाहिये कि अपना काम फ़र्ज़ समझ कर मेहनत से करता रहे—उस में कोई हर्ज नहीं है बल्कि थोड़ा बहुत हाथ पांव का काम सब को करना चाहिये. अलबत्ते जो अभ्यास में ज़ियादा मेहनत कर सकते हैं उन की सफ़ाई अभ्यास के ज़रिए से

होना मुमकिन है मगर ऐसा अभ्यास बनना मुश-किल है। कोई ताक़त स्थूल रचना में स्थूल सरूप हुए बग़ैर सीधी कार्रवाई नहीं कर सकती—जैसे पीसने का काम पानी से जब तक कि वह ताक़त चक्की पर न लाई जावै या मारने का काम हवा से जब तक कि हाथ तलवार पर न लाया जावै नहीं ले सकते, इसी तरह सुरत भी सीधे कार्रवाई नहीं कर सक्ती जब तक वह मन-आकाश में न आवै, वहाँ से धारें नीचे उतरती हैं, इस क़दर इहतियात चाहिये कि चेतन धार मोटे दहाने में होकर जैसे काम क्रोध के द्वारा ज़ियादा न बहै।

॥ बचन २४ ॥

इस संसार में जो कोई कि किसी गुन, फ़न या का-रीगरी में मशहूर होता है मसलन जो कोई कि नट विद्या में उस्ताद है या कोई बड़ा बोलने वाला है या कोई बहुत हसीन है या ग़ुब्बारे का उड़ने वाला है या जिसने कोई अजीब चिड़िया कि जिस की आँखें फिरती हैं और चोंच से बोलती भी है या इंजिन को जो किसी आले में बड़ी और छोटी रस्सियों पर होकर ताक़त पहुँचा रहा है बनाया है,

या जो कोई पोलर रीजन्स में जाने वाला है, इन सब को देखने और मिलने को हर शख़्स का दिल चाहता है और बड़ी उमंग और शौक़ उन से मिलने का रखता है, और ऐसे आदमी जो क़ुतुब का हाल वग़ैरह दरियाफ़्त करने का शौक़ रखते हैं अगर कुछ ख़र्च भी पड़े तो करने को तइयार हैं अपना घर बार बाल बच्चे छोड़ देते हैं बल्कि जान की परवाह भी नहीं करते जैसे यहाँ एक साहब सुपरिनटेन्डेन्ट पुलिस ने हाल में लड़ाई में जाने की दरख़्वास्त की और दरख़्वास्त नामंजूर होने पर फट से इस्तीफ़ा दे दिया और बतौर प्राइवेट सिपाही के लड़ाई पर गये। ऐसा गहरा शौक़ इस रचना को देख कर कि कैसी भारी और अजीब इस की कारीगरी है उस के करतार के दीदार का और जुस्तजू इस बात की कि वह कहाँ है और कैसा है अगरचे मालूम है कि वह अन्तरजामी है और हाज़िर नाज़िर है किसी के दिल में पैदा नहीं होता। हम लोगों में से जो परमार्थ में शामिल हुए हैं कोई ऐसा सच्चा शौक़ रखता मालूम नहीं होता. ख़बर नहीं किस पिछले संसकार की वजह से और सन्त सतगुरु की दया से खींच लिये गये। इस में शक नहीं कि जो सतसंग में आये हैं उन का कारज धीरे धीरे ज़रूर बनेगा और एक दिन

धुर धाम में पहुँचाये जावेंगे—मगर पूरा और गहरा शौक़ मालिक से मिलने और उस के दीदार का तो किसी विरले ही जीव सुरतवन्त को होगा और वही सच्चा भक्त और आशिक़ है मगर जो थोड़ा भी ख्याल कभी कभी उस के मिलने का आता रहै तो बहुत जल्द तरक्क़ी परमार्थ की हो सक्ती है। इलाज इस शौक़ के पैदा होने का यही संतौं की जुगत की कमाई और सतसंग है। हम लोग तो परमार्थ में मिस्ल गँवारौं और कुत्ते बिल्लियौं के हैं जैसे कि उन के सामने अगर कोई इल्म या कारीगरी का हाल बयान किया जावे या कोई अजीब कल रख दी जावे तो वह उस को क्या समझ सक्ते हैं इसी तरह हम लोगौं की समझ में यह अजीब कारख़ाना नहीं आता और न उस के चलाने वाले से मिलने का शौक़ पैदा होता है वजह इस फ़र्क़ की कि मालिक के दीदार का इतना कम शौक़ बल्कि बिलकुल नहीं और संसार के तमाशौं के देखने की ऐसी ज़बर चाह और शौक़ है यह है कि यहाँ की रचना में यह जीव फ़ौरन लग जाता है अगरचे असल में कुछ इस को प्राप्त भी नहीं होता मगर फ़ौरन रस आता है और परमार्थ में गो कि मालिक ने क़ुदरत की किताब खोल रक्खी है और सब कुछ दिखा रक्खा है मगर बाहरमुख

होने से प्रतीत उसकी मौजूदगी और हाज़िर नाज़िर और आनन्द का भंडार होने की नहीं आती। अगर यह जीव इस दुनिया और सूरज और तारागन नीज़ अपने आपे का ख्याल करे तो मालूम होगा कि कैसे क़ानून से सब कार्रवाई चल रही है और इस भारी कल यानी इंजिन के क्या क्या पुरजे हैं और एक एक ज़र्रे में कैसी कैसी शक्ती और सुख मौजूद हैं कैसा भारी इरादा और कारीगरी और मतलब समरत्थ बनाने वाले का हर चीज़ में पाया जाता है ख़ुद आदमी के जिस्म में किस किस तरह कार्रवाई हो रही है किस तरह उसके हर हिस्से एक दूसरे के साथ काम करते हैं कौन सी धार तमाम जिस्म को चला रही है एक एक चक्र में कैसी बेशुमार रचना है, इस जिस्म का हाल जानने में अक़्लमन्द दुनिया के और डाक्टर लोग हैरान हो गये सब कुछ लिखा पढ़ा और समझा मगर असल में कुछ नहीं मालूम हुआ, न उन के पास ऐसा औज़ार है कि भेद रचना का और इनसान के चोले का मालूम कर सके यह तो जब तक अनुभव न जागे किसी को मालूम नहीं हो सक्ता। सन्तों ने ही रचना का सब भेद बताया, और जीवों के उस वक़्त जब कि सुना कुछ समझ में भी आया मगर फिर भूल गये, अगर अनुभव जागे

तो आप से आप सब हाल मालूम हो जावे कुछ सिखाने समझाने की ज़रूरत न रहे। सतसंग करने से यह ताक़त धीरे धीरे हासिल हो सक्ती है और जब दृष्टि अन्तर की खोल दी जावेगी छिन मेँ सब हाल मालूम हो जावेगा। मगर जो कभी कभी ख़याल इस भारी रचना को देख कर और उस के क़ानून और कारीगरी को सोच कर उस के करता के दर्शन पाने का दिल मेँ पैदा हो तो यह बहुत अच्छा है और इस से जल्द तरक़्क़ी परमार्थी हो सकती है। इलाज इस शौक़ दीदार के पैदा होने और बढ़ने का यही संतौँ की जुगत का अभ्यास करना और सतसंग है मगर पूरा पूरा शौक़ और चाह तो मालिक से मिलने की किसी बिरले परमार्थी मेँ होती है उस के दिल मेँ सिवाय इस ख़याल और चाह के दूसरे किसी क़िसम के ख़याल या चाह की गुंजाइश नहीं रहती है।

॥ बचन २५ ॥

सन्त मत मेँ एक दम चढ़ाई होने की महिमा नहीं है क्योँकि इस मेँ बेहोशी व ग़फ़लत रहती है आ-हिस्ता २ चढ़ाई होने मेँ कि उस का नशा हज़म

होता जावे और रास्ते की सब कैफ़िय्यत देखता जावे बहुत फ़ायदा है इस वास्ते जो लोग कि चढ़ाई के मुआमले में जल्दबाज़ी करते हैं यह ठीक नहीं है. एक दम चढ़ाई होने में सुरत की डोरी नीचे लगी नहीं रहेगी और महिमा इस बात की है कि दोनों काम जारी रहें यानी ऊँचे से ऊँचे मुक़ाम पर पहुँच कर भी उस का सिलसिला या ख़फ़ीफ़ डोरी नीचे के मुक़ाम से लगी रहे और जब चाहे तब उस के ज़रिये से वापस आ सके। जो सुरत कि इस तरह जावेगी वही सुरत करता हो सक्ती है क्योंकि उस की कार्रवाई कुल रचना में रहेगी—

॥ कड़ी ॥

राधास्वामी इधर उधर राधास्वामी ॥

लेकिन जो सुरत कि एक दम खिंच जावे और डोरी नीचे न लगी रहे वह ऊँचे मुक़ाम पर पहुँच कर हंस स्वरूप हो जावेगी मगर करतार नहीं हो सक्ती क्योंकि उस का सिलसिला नीचे की रचना से नहीं रहा। अक्सर लोग दुनिया में तारीफ़ करते हैं कि फ़लाँ शख़्स की सुरत एक दम खिंच गई लेकिन सन्तमत में ऐसों की कुछ महिमा नहीं है इसलिये राधा-स्वामी दयाल अपने बच्चों को जो उन की सरन में आये हैं आहिस्ता आहिस्ता चढ़ाते हैं और जिस

क़दर उन के हाज़मे की ताक़त बढ़ती जाती है उन को रस देते जाते हैं। अगर बाप लड़के को एक दम रुपया अशरफ़ी दे दे तो वह उस को पतंग लाकर उड़ावेगा इस वास्ते जब तक लड़के को तमीज़, क़दर और परख हीरे रुपये अशरफ़ी और पैसों की न आवे तब तक उस को यह चीज़ें नहीं दी जाती हैं सो किसी को घबराना और जल्दबाज़ी न करना चाहिये।

जो चीज़ कि हासिल की जाती है उस में जो सुख और आनन्द मिलता है वही बड़ी चीज़ है मसलन जो इल्म हासिल किया जावे तो कुछ इल्म बड़ी चीज़ नहीं है बल्कि उस इल्म का जो सरूर है वह बड़ी चीज़ है इसी तरह परमार्थ में किसी स्थान का खुलना या अंतरी सैर तमाशा कोई बड़ी चीज़ नहीं है बल्कि सिमटाव और चढ़ाई का जो सरूर है वह बड़ी चीज़ है और जो यह रस थोड़ा बहुत मिलता जावे तो यही नतीजा परमार्थ कमाने का है और इस को उस से तशफ़्फ़ी होनी चाहिये। अलावा इस के यह ख़याल करना चाहिये कि मालिक का क्या स्वरूप है—मालिक ऐन आनन्द स्वरूप अपने में आप मगन उनमुन दशा में है और यही दशा अभ्यासी की होती जाती है तो फिर उस को शिकायत नहीं

करना चाहिये और तसल्ली रखना चाहिये कि परमार्थ का जो नतीजा है वह उस को मिलता जाता है एक दम जो नहीं मिलता है वह दया है ज़रा से ही रस में वह आपे से बाहर होने को तइयार होता है और जो एक दम ज़ियादा रस दिया जावे तो क्या हालत होगी ।

सवाल—अभ्यास में जो गुनावन उठती हैं हरचन्द उन के रोकने की बहुत कोशिश की जाती है लेकिन पूरी कामयाबी नहीं होती इसका क्या सबब है ?

जवाब—जो नक़्श अन्तर में मौजूद हैं वह अभ्यास के समय गुनावन रूप होकर प्रगट होते हैं सो जब तक यह नक़्श साफ़ न होंगे गुनावन उठती रहेंगी, बड़ी दया है कि यह संचित करम गुनावन के ज़रिये से काटे जाते हैं नहीं तो प्रारब्ध कर्म होकर ज़ियादा तकलीफ़ देते, इलाज इस का यह है कि होशियारी के साथ अभ्यास और सतसंग करे और नाम के सुमिरन से गुनावन को काटे ॥

॥ बचन २६ ॥

सन्त मत के बमूजिब परहेज़ का दरकार है कि जो गृहस्थी है वह सिवाय ज़रूरी सामान के जो कि उन

के और कुटुम्ब के गुज़ारे के लिये काफ़ी हो ज़ियादा ख़्वाहिश दुनिया के सामान की और प्राप्ती धन की न उठावैं और अपने फ़ुरसत के वक़्त को परमारथी पोथी पढ़ने और दूसरे परमारथी कार्रवाई में लगावैं और जो भेष हैं और उन्हौं ने घर बार मालिक से मिलने की ग़रज़ से त्याग दिया है तो उन को अपना तमाम वक़्त परमार्थी कार्रवाई में ख़र्च करना चाहिये, जो रूखी सूखी रोटी मिल जावे उसी को खाकर अपनी गुज़रान करैं और कोई ख़्वाहिश संसार में मान बड़ाई और धन जोड़ने की न उठावैं नहीं तो बहुत मार खायँगे क्यौंकि बनिस्बत ग्रहस्थियौं के उन की ज़िम्मेदारी ज़ियादा है—जैसे किसी भेष का हाल है कि वह ख़ूब खाता पीता था और लोगौं को दिक़ करता था यानी हर तरह की बदमाशी करता था किसी महात्मा ने उसे समझाया कि ऐसा न कर नहीं तो बहुत पछतायगा मगर उसने न सुना आख़िरकार उस का चोला छूट गया और फिर वह साँड हो कर उसी जगह लोगौं को सताने लगा और सुभाव ज़रा भी न बदला लाचार लोगौं ने इरादा किया कि उस को पकड़ैं और खेत जोतने का काम लैं इस में भी उस ने हरमज़दगी की हरचन्द मार पड़ती थी मगर वह बैठ बैठ जाता था आख़िर उन महात्मा

को दया आई वह आये और लोगों से कहा कि हम इस के कान में कुछ बात चीत करना चाहते हैं उन्हों ने कहा कि अच्छा कर लीजिये तब महात्मा जी ने उस के कान में कहा कि क्यों बच्चा इतनी हालत पर भी नहीं पछताते हो हम तुम को समझाते थे तुम ने नहीं माना। यह सुनकर उस की आँखों में आँसू भर आये और वह सीधा चलने लगा और कुछ दिनों में उसका चोला छूट गया और महात्मा की मेहर और दया से फिर उत्तम नर देह मिली और कुछ कारज उसके जीव का बन गया—जो भेष कि गोल बाँधते हैं और रुपया ब्याज पर चलाते हैं या विद्या सीखने में कोशिश करते हैं और लोगों से ज़बरदस्ती रुपया लेते हैं और मुक़द्दमेबाज़ी करते हैं उन का ऐसा ही हाल होगा जैसा कि उस भेष का हुआ था—

भेष भेष को देख लजावे, सो भी गधा कर मानी ॥

कबीर जोगी जगत गुरु, तजै जगत की आस ।
जो वह चाहै जगत को, तो जगत गुरु वह दास ॥

॥ बचन २७ ॥

जैसे कि कोई गहरी नींद में सो रहा है और कोई आकर उसे जगावे, जैसे कोई किसी वक़्त में उम्दा बाजा सुनने में मस्त हो रहा है और कोई उसे हटावे, जैसे कोई शख़्स ख़ूब ग़ौर से कोई चीज़ पढ़ रहा है और कोई उसे आकर छेड़े, जैसे मछली को कोई शख़्स पानी से निकालकर ज़मीन पर डाल दे, जैसे बालक दूध पी रहा है और कोई उसे माता की छाती से हटा दे, तो इन सब सूरतों में बिघन कारक कैसा बुरा मालूम होता है और कैसे भारी पाप का भागी है इसी तरह जहाँ सतसंग कुल मालिक का हो रहा है और जीव उमंग और शौक़ के साथ भक्ती में लगे हैं वहाँ जो कोई अपनी मान बड़ाई की च.ह लेकर जावे और आपा ठाने तो वह कैसा बुरा मालूम होगा। यह आपा सब से बुरा ऐब है और ऐब और क़सूर तो माफ़ भी हो सक्ते हैं मगर अहङ्कार मालिक को मुतलक़ पसन्द नहीं है इस को तो ज़रूर हटाना और घटाना चाहिये इस को तो मालिक ने अपने देश से निकाला है अब वह इस को कैसे दख़ल दे सक्ता है और जहाँ कहीं यह प्रगट होता है तो मालिक ज़रूर इस को ठोकर लगाता है।

अगरचे यह ऐब थोड़ा बहुत सब में है मगर उस के लिये माफ़ी माँगना और झुरना और पछताना तो ज़रूर सब को चाहिये नहीं तो दुरुस्ती कैसे होगी।

॥ बचन २८ ॥

काल अपना बिघन डाले बग़ैर नहीं रहता जब देखता है कि सतसंग निर्मल और निर्विघ्न हो रहा है तब ही कोई झगड़ा बखेड़ा खड़ा कर देता है। हुज़ूर साहब के वक़्त में भी अक्सर ऐसे झगड़े बखेड़े आते रहते थे मगर वह तो समर्थ थे लेकिन हम लोगों को बहुत सँभलकर चलना चाहिये और हर एक झगड़े बखेड़े को रोकना चाहिये अगर कोई दो गाली भी हम को दे जावे तो भी छिमा करनी चाहिये, अब जो है वह साध संग है इसमें बड़ी होशियारी करना लाज़िम है॥

॥ बचन २९ ॥

सब मतों में कोई न कोई जतन या अभ्यास मन को साफ़ और निश्चल करने के लिये बनाया है किसी मत में प्राणायाम किसी में मुद्रा का साधन

और किसीं में दिल पर ज़रब देना वग़ैरह बताया है और राधास्वामी मत में भी ऐसा अभ्यास बताया है कि जिस से मन की सफ़ाई हो और निश्चलता आवे, लेकिन असल में प्रीत का पैदा होना ज़रूरी काम है। और मतों में सफ़ाई थोड़ी बहुत हो जाती है लेकिन प्रीत नहीं जागती, प्रीत बग़ैर सतसंग के नहीं पैदा होगा और प्रीत का स्वरूप यह है कि दिल में चाह राधास्वामी दयाल के दरशनों की, शब्द के सुनने और सतसंग करने की बिशेष पैदा हो यानी बग़ैर इन बातों के उस को चैन न आवे। दुनिया में भी जब दो शख़्सों में प्रीत होती है तो एक दूसरे को देखे और उसके साथ बैठे उठे या बात चीत किये बग़ैर चैन नहीं पड़ता। प्रेम का दरजा प्रीत से बढ़ कर है, अव्वल बख़्शिश प्रीत की होगी और फिर प्रेम की। प्रीत जब तक नहीं जागेगी तब तक जितनी कार्रवाई की जावे कुछ ज़ियादा फ़ायदा नहीं दे सक्ती। अगर अभ्यास में भी सिमटाव होता है लेकिन जो प्रीत नहीं जागी तो वह भी ज़ियादा कारआमद नहीं है। मन में तड़प और पीर उठनी चाहिये जब यह हालत हो जावेगी तो सब काम बन जावेगा और सारे बिकारी अंग दूर हो जावेंगे और सकारी अंग ख़ुदब ख़ुद जाग उठेंगे। बेदांतियों ने

बड़ा धोखा खाया, उन के दिल में प्रीत नहीं जागती क्योंकि जब वह अपने आप ही को ब्रह्म बताते हैं तो फिर प्रीत किस से करें। मगर इन से एक सवाल पूछा जावे कि तुम ने किस प्रमान से जाना कि हम ब्रह्म हैं और जगत मिथ्या है, जगत को नाशमान देखकर ही तो कहा कि यह मिथ्या है—इस में मन और इन्द्रियाँ और बुद्धी के औज़ार काम में लाये गये और जो नतीजा निकाला गया उस के प्रमान मन और बुद्धी हैं, लेकिन मन और बुद्धी अंतःकरन के अंग हैं और अन्तःकरन भी सुखोपत में नाश होता है इस वास्ते जिन औज़ारों से इस जगत को नाशमान या मिथ्या माना और अपने को ब्रह्म समझा वह औज़ार ही नाशमान हैं तो जो नतीजा कि उन से निकाला गया वह कैसे दुरुस्त हो सक्ता है।

२—पुराने ज्ञानियों ने जो जगत को मिथ्या कहा है और ब्रह्म को सर्वव्यापक बताया है उन लोगों ने यह नतीजा इस मन और बुद्धी से नहीं निकाला बल्कि अभ्यास करके वह ऐसे मुक़ाम पर पहुँचे कि जहाँ से उन को ऐसा नज़र आया। बग़ैर अनुभव जागे यह बात हरगिज़ नहीं मालूम हो सक्ती। आज कल के ज्ञानी बिलकुल वाचक हैं अभ्यास वग़ैरह तो

कुछ करते नहीं, ज्ञान के ग्रन्थ पढ़ कर ज्ञानी बन बैठते हैं। ग्रन्थौं मैं लिखा है कि जगत भर्म है बस भर्म के लफ़्ज़ ही ने उन को भर्म मैं डाल रक्खा है, लेकिन उन ग्रन्थौं में यह भी लिखा है कि बग़ैर चार साधन किये कोई उन ग्रन्थौं के पढ़ने का अधिकारी नहीं है इस बात पर कोई ख़याल नहीं करता और जो बिचार वग़ैरह करते हैं वह भी सब इसी मन के घाट का है ॥

॥ बचन ३० ॥

दुनिया मैं जब कोई शख़्स किसी चीज़ की तलाश करता है और उस मैं तन मन धन को ख़र्च भी करता है और जब वह चीज़ उस को मिल जाती है तो उस को किस क़दर उस की क़दर होती है और कैसी प्यारी वह चीज़ लगती है इसी तरह परमार्थ मैं भी जिस ने जिस क़दर खोज और मेहनत सन्त वस्तु के हासिल करने के लिये की है उसी क़दर उस को क़दर सन्त मत की होगी या अगर जिस ने कि अव्वल कुछ खोज और तन मन धन का सर्फ़ परमार्थ की तलाश मैं नहीं किया है और मौज से सतसंग में आन मिला है तो अगर सच्चा है तो परमार्थ में

शामिल होने के बाद ज़रूर उस के हासिल करने में और मत के समझने में मेहनत और ख़र्च करेगा। ग़रज़ यह है कि बग़ैर तलाश और मेहनत के जो चीज़ हासिल भी हो जावे तो उस की कुछ क़दर उस के चित्त में नहीं होती और जो चीज़ कि मेहनत और सर्फ़ से हासिल होती है वह बड़ी प्यारी लगती है और उस में भारी अटक इस की हो जाती है। इस वास्ते परमार्थी लोगों को चाहिये कि परमार्थ के हासिल करने में हमेशा अपना तन मन धन लगाते रहें और कभी ख़ाली न बैठें क्योंकि जो ख़ाली या ख़ामोश बैठ गये तो उनमें और दुनियादारों में कोई फ़र्क़ नहीं रहा क्योंकि दुनिया में भी तो लोग एक मत को बग़ैर सोचे समझे पकड़ कर ख़ामोश हो जाते हैं और फिर कोई खोज और मेहनत नहीं करते। यह लोग टेकी कहलाते हैं लेकिन परमार्थी को टेकी नहीं बनना चाहिये। जब तक सच्चा परमार्थ मिला नहीं है तब तक तो उसकी खोज में मेहनत करे और जब पता उस का लग जावे तो उसके कमाने में तन मन से कोशिश करे यानी मन के समझने और निरनय करने और अभ्यास करने और अपने मन और चाल चाल की निरख परख करने में बराबर कोशिश करता रहे अगर ऐसा नहीं

करता है तो समझना चाहिये कि उस का भाग बहुत ओछा है लेकिन जो सतसंग बराबर क ता रहा तो रफ़्ते रफ़्ते इस की ख़्वाहिश उस के दिल में पैदा होगी और तब सच्चे परमार्थियों की तरह वह भी काम करने लगेगा। इस बात की ख़्वाहिश पैदा होना यह भी अव्वल दया है क्योंकि जब चाह दिल में पैदा होगी वह ज़रूरी करनी भी करावेगी।

२—यह जीता जागता मत है और मतों के मुवाफ़िक़ नहीं है। और मतों में टेक और नेम के मुवाफ़िक़ कार्रवाई होती है लेकिन जो इस मत में भी ऐसी ही कार्रवाई करता रहा तो चाहे जितने दिन इस मत में पड़ा रहे कुछ फ़ायदा नहीं होगा, जब दर्द के साथ कार्रवाई करेगा तब कुछ काम बनेगा यानी बग़ैर दर्द और असली चाह के कुछ काम नहीं बन सकेगा।

३—जब सच्चे परमार्थ में जीव शरीक हो जावे तो उस को चाहिये कि मत के अच्छी तरह निरनय करने में और मालिक के जलवा देखने और उसके दीदार के हासिल करने में दिलोजान से कोशिश करे। अपने मन की चाल की निरख परख करना और उसकी गढ़त करना बहुत ज़रूर है जब तक मन की चौकीदारी नहीं करेगा और उस की गढ़त के लिये

हर एक बात की मसलन रोग सोग निरादर निर्धनता वग़ैरह की बरदाश्त करने को तइयार न होगा तब तक कैसे तरक़्क़ी हो सक्ती है, और गहत के लिये इस क़िस्म की हालतें ज़रूर बरदाश्त करनी पड़ेंगी क्योंकि अच्छी हालत में तो सब ख़ुश रहते हैं और मालिक की तरफ़ भाव भी रहता है और उस के हुक्म और मौज के साथ मुवाफ़क़त भी करता है लेकिन जब कोई उलटी हालत आवे उस वक़्त मालूम पड़ता है कि कहाँ तक उसकी सच्ची प्रीत मालिक के चरनों में आई है और कहाँ तक वह उस की मौज के साथ मुवाफ़क़त कर सक्ता है और किस क़दर बंधन उस का अपने तन मन और धन में मौजूद है।

४—बग़ैर बंधन टूटे कुछ काम नहीं हो सक्ता और जब बंधन मालिक तोड़ेगा तो इन चीज़ों पर चोट पड़ेगी। सच्चे परमार्थी को चाहिये कि वह आप ही अपने बंधनों को ढीला करता जावे यानी हमेशा सोच बिचार से काम लेवे और देखता रहे कि किस चीज़ में उस का बंधन है और सतसंग के बचनों की मदद से उस को ढीला करता रहे क्योंकि एक दिन तो सब को छोड़ना पड़ेगा ही और जो यह अपने आप इस तरह सोच बिचार नहीं करेगा तो

राधास्वामी दयाल जिन को उस के जीव के कल्यान का फ़िक्र है उस का इलाज करेंगे और जिस रीति से मुनासिब समझेंगे उस के बंधनों को ढीला करेंगे और उस के मन को गढ़ेंगे, इस मत में शामिल हो कर कोई ख़ाली नहीं रह सक्ता। इस लिये जीव को चाहिये कि हमेशा अपने हाथ पाँव हिलाता रहे और जैसी उलटी सुलटी हालत आवे उस को ऐन दया मालिक की समझ कर बरदाश्त करे, अलबत्ता जो बरदाश्त न होवे तो चरनों में प्रार्थना करे कि बर-दाश्त की ताक़त दें लेकिन मौज के साथ मुवाफ़क़त करने को हर वक्त तइयार रहे। मालिक जो कुछ करता है पहिले समझ लेता है कि उस की बरदाश्त होगी या नहीं, भूल चूक अलबत्ते होगी लेकिन उसके बाद झुरना पछताना और आइन्दा के लिये होशियार रहने का इरादा करना और चरनों में मुआफ़ी के लिये प्रार्थना करते रहना चाहिये, इस तरह रफ़्ते रफ़्ते सफ़ाई होगी और जीव का काम बन जावेगा।

५—मरते वक्त सुरत और मन को तमाम पिण्ड से खिंच कर एक दरवाज़े में हो कर गुज़र करना पड़ता है और उस वक्त संसारियों को बड़ी तकलीफ़ और कष्ट होता है। अब देखो कि राधास्वामी मत में यही अभ्यास जीते जी कराया जाता है, अगर इस अभ्यास

को शौक़ के साथ जीते जी नहीं करेगा तो फिर मरने के वक़्त उस को भी वैसी ही तकलीफ़ होगी। फिर इस में और दुनियादार में क्या फ़र्क़ हुआ इस लिये इस को चाहिये कि मरने से पहिले इस रास्ते को जिस क़दर हो सके साफ़ कर ले और अपने मन को पक्का कर ले जिस से मौत के वक़्त आनन्द के साथ उस द्वारे में जावे और फिर शब्द को सुन कर और स्वरूप का दर्शन करके महा आनन्द को प्राप्त होवे॥

॥ बचन २१ ॥

असल में जीव को परमार्थ की चाह नहीं है अगर चाह होती तो सच्चे परमार्थ का पता पाकर और कुल मालिक का भेद मालूम करके बड़े शौक़ के साथ परमार्थ की कमाई में लगता। दुनिया में देखो कि जो लोग इल्म पढ़ते हैं और उन को कोई नई बात मालूम होती है तो कैसे शौक़ के साथ उस के दरियाफ़्त करने में हमातन मसरूफ़ हो जाते हैं, नई नई बातें देखने को ताजिर और सैयाह ग़ैरमुल्क में जाने के वास्ते कैसी कोशिश करते हैं और कैसे अपनी जान को ख़तरे में डालते हैं। दुनिया

के कामौँ मैँ तो ऐसा शौक़ नज़र आता है मगर पर-मार्थ की ज़रा सी भी ख़्वाहिश पैदा नहीं होती, वजह इस की यही है कि मन का अङ्ग बिलकुल बाहर मुखी है जब किसी दुनिया के काम की चाह पैदा होती है तो उस मैँ तो यह मदद देता है लेकिन पर-मार्थ की चाह से मुख़ालिफ़त करता है और जहाँ तक मुम्किन होता है उस मैँ ख़लल डालता है। जब दुनिया की ज़रा ज़रा सी चीज़ौँ के देखने के वास्ते इस क़दर शौक़ ज़ाहिर करता है तो सुरत की ताक़त जगाने के वास्ते किस क़दर कोशिश और मेहनत करनी चाहिये। क्यौँकि सुरत की ताक़त सब मैँ बड़ी है और सब पर इस की हुकूमत है और सब रचना इसी क़ूवत से हुई है और क़ायम है। जबतक कि तेज़ चाह और दर्द परमार्थ और मालिक के दर्शनौँ का दिल मैँ पैदा न होगा तब तक मालिक के दर्शन हरगिज़ प्राप्त नहीं हौँगे और जो कार्रवाई राधा-स्वामी मत की है वह हरगिज़ दुरुस्ती के साथ नहीं हो सक्ती है। लेकिन ऐसे दर्दी और पूरी चाह वाले बिरले हैँ हम लोग तो कुछ भी चाह परमार्थ की नहीं रखते। मामूली अभ्यास कर लेना और टेक के मुवाफ़िक़ सतसंग मैँ शरीक हो जाना काफ़ी नहीं है। मगर राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से हम लोगौँ

का काम आहिस्ते आहिस्ते बना रहे हैं अगर उन की निगाह न होवे तो हम लोग कुछ भी नहीं कर सक्ते हैं।

२—कालपुरुष भी बड़ा ताक़तवर है और सब जीवों को खाता चला जाता है और माया भी बड़ी ज़बरदस्त है बड़े बड़े जाल भोग बिलास के जीवों के लिये रचे हैं जिन से किसी को बचने की ताक़त नहीं है क्योंकि पिछले महात्माओं के हाल से मालूम होता है कि छिन में उन की कमाई को लूट लिया, हम लोगों की क्या ताक़त है कि ऐसे ज़बरदस्त दुशमनों से बचाव कर सकें। राधास्वामी दयाल ही अपने सेवकों को आप बचाते हैं और उन्हों ने काल को हुक्म दे रक्खा है कि इस मत वालों को सिवाय औसत दरजे के गुज़रान के कोई चीज़ इस दुनिया की ज़ियादा न दी जावे क्योंकि अगर ज़ियादा दौलत या हुकूमत वग़ैरह इन को मिल जावे तो इन के भी गुमराह होने का ख़ौफ़ है।

३—पिछले अभ्यासी जो अपने पुरुषार्थ पर ज़ियादा भरोसा रखते थे और जिनका कि इष्ट पक्का नहीं था उन को काल और माया ने ख़ूब धोखा दिया क्योंकि वह ऐसे बचनों के मुवाफ़िक़ थे जिन के मा बाप न हों। जो इन सब बातों पर ग़ौर किया जाता है तो

मालूम होता है कि किस तरह से राधास्वामी दयाल हम लोगों को सँभालते रहे हैं और कैसे कैसे भारी दुशमनों से बचाया है और अब भी वही रक्षा और सँभाल करेंगे। उन की मौज है कि सतसंग खड़ा हो और परमार्थ जीवों से कराकर उन का उद्धार किया जावे इस लिये निरास नहीं होना चाहिये और कम अज़ कम दो दफ़े अभ्यास रोज़ाना और पोथी का पाठ करते रहना चाहिये, वह अपनी दया से आप हम लोगों का काम बनावेंगे और आहिस्ते आहिस्ते तरक़्क़ी देते जावेंगे॥

॥ बचन ३२ ॥

काल की हुकूमत तीन लोक में है, इन तीन लोकों में जो वह चाहे कर सक्ता है और छिन में जिस क़दर तकलीफ़ जिस को चाहे दे सक्ता है और वह नहीं चाहता है कि कोई जीव उस की हद हुकूमत से बाहर जावे। लेकिन राधास्वामी दयाल से वह और माया डरते हैं और उन का हुक्म मानते हैं जो कोई कि राधास्वामी दयाल की सरन में आया वह उस का कोई नुक़सान नहीं कर सक्ते और न उस को रोक

सकते हैं जैसे कि जिसके पास कि बादशाह का पर-वाना है उस को कलक्टर मजिस्ट्रेट गो कि वह उससे मुखालिफ़ हों मगर रास्ते में अटका नहीं सक्ते अलबत्ते इतना हुक्म है कि जो महसूली चीज़ सुरत शब्द अभ्यासी के पास हो उस की चुंगी यानी महसूल लेवें और महसूली चीज़ें दुनिया की चाहें और बचन हैं। जो कोई इन को लेकर चलेगा उस को काल ज़रूर रोकेगा और उस का महसूल लेना यह है कि उस चाह के बमूजिब उन सामान में जिस की वह चाह है अटकाना। और जिस किसी के पास कि महसूली चीज़ नहीं है वह बेतक-ल्लुफ़ चला जावेगा। कोई चाहे कि महसूल का माल छिपा ले सो काल के सामने नहीं छिपा सक्ता। देखने में आता है कि काल पुर्ष जो तीन लोक में सर्व समर्थ है जिस को जो तकलीफ़ चाहे दे सक्ता है मगर उसके सर पर राधास्वामी दयाल हैं और उन का हुक्म है—जो उन की सरन में आये हुए जीव हैं उन को वह भारी तकलीफ़ नहीं देता और न रोक और अटका सक्ता है।

॥ बचन ३३ ॥

जब किसी नट को कोई अजीब कला खेलते देखते हैं या किसी बड़े रियाज़ीदाँ को कोई अजीब और मुशकिल सवाल निकालते देखते हैं तो बड़ा तअज्जुब मालूम होता है और ख़याल करते हैं कि इन कामों में इन को बड़ी तकलीफ़ होती होगी इसी तरह सन्तों की बानी में जो अन्तर की हालतें लिखी हैं उन को पढ़कर बड़ा तअज्जुब आता है कि ऐसी हालत कैसे हो सक्ती है और अगर हो सक्ती है तो बड़ी मुशकिल से होगी, और यह ख़याल करके परमार्थ के कमाने से रुक जाते हैं। यह संसारियों का हाल है और जो लोग कि परमार्थ में शरीक होकर अभ्यास कर रहे हैं वह भी अक्सर इन हालतों को देख कर निरास हो जाते हैं कि ऐसी हालत का आना बड़ा मुशकिल मालूम होता है लेकिन जो ग़ौर किया जावे तो मालूम होगा कि निरास होने की कोई वजह नहीं है क्योंकि शुरू में सब कामों में चाहे संसारी हों या परमार्थी थोड़ी बहुत कठिनता और तकलीफ़ होती है लेकिन जब अभ्यास काफ़ी हो जाता है तो फिर उन कामों में कोई तकलीफ़ नहीं होती बल्कि और ख़ुशी और रस आता है।

इस वास्ते चाहिये कि नेम से अभ्यास करता जावे करते करते ऐसी हालत कि जिस पर पहिले तअज्जुब आता था ख़ुद ब ख़ुद आ जावेगी । नट की कला खेलनेवाले या ग़ुब्बारे पर चढ़नेवाले या और मुशकिल काम करनेवाले भी तो शुरू से इन कामों को करते हैं और बराबर अपना काम जारी रखते हैं फिर जब उस का अभ्यास पूरा हो जाता है तब उन को इन कामों के करने में कोई तकलीफ़ नहीं होती ।

२—असल मतलब इस बचन का यह है कि हर एक काम को शुरू में देखने से बड़ा तअज्जुब होता है लेकिन जो उस को किया जावे तो रफ़्ते रफ़्ते वह काम सहज हो जाता है । निरासता का आना परमार्थ में बहुत ही ख़राब है इस वास्ते निरास हरगिज़ नहीं होना चाहिये क्योंकि जो निरास हो गया वह कुछ नहीं कर सकता ।

३—जो शख़्स कि राधास्वामी मत में शरीक हुआ है और इसके भेद को थोड़ा बहुत दरयाफ़्त किया है तो उस को चाहिये कि अपना अभ्यास बराबर किये जावे और कभी निरास न हो । एक दो तीन हद चार जनम में उन का काम ज़रूर पूरा बन जावेगा और

परमार्थी की जितनी हालतें बानी में दर्ज हैं वह सब आप ही आप आती जावेंगी।

४—परमारथी को चाहिये कि चन्द संजम जो बहुत ज़रूरी हैं ज़रूर करे क्योंकि बग़ैर इन संजमों के परमार्थ की तरक़्क़ी नहीं हो सक्ती।

५—अव्वल यह कि खान पान का बहुत ख़याल रक्खे जो चीज़ें कि ज़ियादा ताक़त वाली हैं मसलन घी मेवा वग़ैरह उन का ज़ियादा इस्तेमाल न करे क्योंकि इन से शरीर ज़ियादा पुष्ट होता है और जब शरीर में ज़ियादा ताक़त आवेगी तो ज़रूर मन चंचल होगा और नई नई बातें करने को दिल चाहेगा और इस क़दर तरंगें ज़बर उठेंगी कि उन को न रोक सकेगा और न अभ्यास में बैठ सकेगा। अलावा इसके जितनी भूख हो उससे दो तीन ग्रास कम खाना चाहिये और मामूली हल्का आहार खाना चाहिये मसलन दाल रोटी चावल और एक या दो तरकारी, और अभ्यास करनेवाले को हर एक शख़्स का खाना बेतकल्लुफ़ ग्रहन करना नहीं चाहिये क्योंकि जो भेष कि इधर उधर का खा लेते हैं तो उन के मन और शरीर बड़े चंचल और ज़बर हो जाते हैं।

६—दूसरे संग का संजम भी करना चाहिये। दुनिया दारों हुकूमतवालों या धनवालों या दुनिया की मान

बड़ाई और दूसरे कामों में जो लोग बेतकल्लुफ़ बरतते हैं उन का संग परमारथी को नहीं करना चाहिये गृहस्थियों को जो अपने रोज़गार या कारज ब्यौहार की वजह से उन का संग करना पड़े तो कारज मात्र करना चाहिये लेकिन उन की और बातों में हरगिज़ शरीक नहीं होना चाहिये।

७—तीसरे अभ्यासी की चाह भी ठीक होनी चाहिये सिवाय निर्मल परमार्थ के हासिल करने के और कोई चाह नहीं रहनी चाहिये. संसारी चाहें तरक्क़ी दुनिया, नामवरी वग़ैरह की बिलकुल हटा देनी चाहिये. सिर्फ़ जिस क़दर कि औसत दरजे के गुज़ारे के वास्ते ज़रूर है उतनी चाह तो उठानी चाहिये. इस से ज़ियादा जो ख़्वाहिश होगी वह परमार्थ में बिघन-कारक होगी।

८—अब जिन लोगों के पहिले दो संजम यानी खान पान और संग दुरुस्त होंगे उन की चाह और रहनी भी दुरुस्त होगी और जिन के यह संजम दुरुस्त न होंगे उन की चाह भी दुरुस्त न होगी। परमार्थ में यह संजम बहुत ज़रूरी हैं। इन के अलावा और भी क़िस्म या सूक्ष्म संजम हैं कि जिन का करना ज़रूर है लेकिन अव्वल में यही तीन संजम बहुत ज़रूरी हैं, शुरू में इन का बहुत ख़याल

करना चाहिये जो इन संजमों का ख़्याल न करेगा उस को अभ्यास में कुछ फ़ायदा हासिल न होगा कोरा का कोरा रहेगा, अगरचे मालिक ख़ाली उस को भी नहीं छोड़ेगा लेकिन उस को कष्ट और दण्ड सहना पड़ेगा। संसारी चाहें और बन्धन आहिस्ते आहिस्ते दूर करते जाना चाहिये और फिर परमार्थी चाहें भी घटानी पड़ेंगी यानी उस की ऐसी हालत हो जावेगी कि किसी परमार्थी काम में भी बहुत पकड़ नहीं रहेगी। जो इन संजमों को करेगा उस का परमार्थी रास्ता सुखाला चलेगा वरना तकलीफ़ उठावेगा। कुल चाहों से इस का चित्त उपराम हो जाना चाहिये और जो कुछ मौज से ज़हूर में आवे उस में इस को कुछ दुख सुख न ब्यापे यानी कमाये हुए बेंत की तरह इस का मन हो जावे कि जिधर चाहो उसे मोड़ लो, लेकिन यह हालत जब होगी कि जब सुरत का घाट बदलेगा॥

॥ भाग दूसरा ॥

॥ निर्णय व भेद मत का ॥

॥ बचन १ ॥

चेतन शक्ति की अपार प्रबलता का अनुमान और एक शख़्स के सवालों के जवाब ।

चेतन शक्ति बड़ी प्रबल है सुरत अंश जो कि देह में आकर फँसी है दरबन्द क़ैद में है तो भी ऐसी अजीब व ग़रीब कार्रवाई उस की है कि अक़्ल दंग हो जाती है, जो सिद्धि शक्ति हैं वह भी उस से प्रगट होती हैं। सिद्धि शक्ति कई क़िस्म की होती हैं–

(१) अणिमा यानी चाहे जितना छोटा हो जाना जैसे सूक्ष्म या [illegible] रूप धारण करना।

(२) महिमा यानी चाहे जितना बड़ा हो जाना जैसे हाथी या [illegible] बन जाना।

(३) लघिमा यानी चाहे जितना हलका हो जाना।

(४) गरिमा यानी चाहे जितना भारी हो जाना।

(५) प्राप्ति यानी चाहे जहां पहुँच जाना ।

(६) प्राकाम्य यानी सर्व समरत्थ हो जाना ।

(७) ईशित्व यानी सब पर हुकूमत कर सकना ।

(८) वशीकरण यानी दूसरे को अपने वश में कर सकना ।

२—जब इस को मालूम होता है कि चेतन जो कि ज़र्रा और किनका है उस में इस क़दर शक्ति है कि राई से पहाड़ और पहाड़ से राई हो सकती है तब उस अपार समुद्र चेतन की शक्ति और सर्व समरत्थता का थोड़ा बहुत अनुमान कर सक्ता है और तब इस को यक़ीन होता है कि जो कुछ होता है मालिक की मौज से होता है और हर हालत में मौज से मुवाफ़क़त करता है और मालिक को हाज़िर नाज़िर देखता है। निरन्तर सतसंग और अभ्यास करने से इस को मालिक की अपार क़ुदरत और सर्वसमरत्थता की परख पहचान आ सक्ती है। अभ्यास में पहिले चेतन धार के खिंच जाने से ऐसा मालूम होता है कि दम निकल गया पर जब ऊपर से विशेष चेतन की धार आती है तब रस और आनन्द आता है, शब्द गाजने लगता है, उस वक़्त गोया इसके अन्तर में बधाई बजने लगती है—

बजी बधाई दुर्ग समाई भाग चला बैराग।
भक्ति भावनी निर्मल दामनी, खेलत निज घर फाग॥

३—सवाल शब्द किसको कहते हैं ?

जवाब—चेतन धार में जो धुन हो रही है उस को शब्द कहते हैं मगर शब्द शब्द में भेद है—एक रंडी का शब्द होता है दूसरा साध महात्मा का शब्द है—दोनों के असर में बड़ा फ़र्क है—इसी तरह काल और दयाल के शब्द हैं, उपदेश के वक्त भेद बतलाया जाता है, और भी जो विघन पेश आते हैं उन सब का बयान किया जाता है—अन्तर में उस की परख पहचान यह है—

जो निज खींचे है ऊँचे को तुझे।
जान वह धुन आई ऊँचे से तुझे॥
धुन के जो आवाज़ जागे कामना।
काल की आवाज़ है पर थामना॥

॥ कड़ी ॥
शब्द शब्द का भेद निआरा। सो गुरु तुम से कहें सम्हार॥

पातञ्जल शास्त्र में दस प्रकार का शब्द कहा है मगर निरनय नहीं किया है कि कौन काल का शब्द है और कौन दयाल का शब्द है। वेद शास्त्र में प्रवृत्ति और निवृत्ति का ज़िकर है मगर प्रवृत्ति यानी दुनिया के बन्दोबस्त और क़ानून का ज़िकर

ज़ियादा है और निवृत्ति यानी नजात का ज़िक्र थोड़ा है—मसलन वेद में कर्मकांड के श्लोक अस्सी हज़ार हैं यह प्रवृत्ति है और उपाशना कांडके श्लोक १६ हज़ार हैं और सिर्फ़ चार हज़ार निर्वृत्ति यानी ज्ञान कांड के श्लोक हैं और सन्त मत में सिर्फ़ निवृत्ति का ज़िक्र है।

४—गीता में कृष्ण महाराज ने अर्जुन से कहा था कि वेद की हद से जो कि तीन गुन से मिला हुआ है न्यारा हो यानी उस के ऊपर स्थान हासिल कर और सब कर्म धर्म छोड़ के एक मेरी सरन ले तब काम बनेगा और जब तक जीव वर्णाश्रम के कर्म और धर्म यानी उपासना में फँसा हुआ है तब तक वेद का दास है यानी उस को वेद के कहने पर चलना पड़ता है और जब माया और तीन गुन की हद से निकल जायगा तब वेद के सिर पर उस के चरन होंगे, यानी यह वेद के करता का करता हो जायगा और उस का हुक्म वेद के हुक्म के ऊपर होगा—

॥ श्लोक १ ॥

त्रैगुण्य विषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।

अर्थ—तीन गुन से मिला हुआ जो वेद है उस से हे अर्जुन तू न्यारा हो और जहाँ तीन गुन नहीं हैं वहाँ चल।

॥ श्लोक २ ॥

वर्णाश्रमाभिमानेन, श्रुत दासो भवेन्नरः।

वर्णाश्रम विहीनश्च, श्रुत पादोऽर्क मूर्द्धनि॥

अर्थ—जिस मनुष्य को कि गृहस्थाश्रम के कर्म धर्म का अभिमान है वह वेद का दास है और जो कि वर्णाश्रम से रहित है उस के चरन वेद के सिर पर हैं।

अगुन सगुन दोउ ब्रह्म सरूपा। व्यापक सच्चित आनँद रूपा।
मोरे मत बड़ नाम दुहूँ ते॥

ब्रह्मराम ते नाम बड़, बरदायक बरदान।

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥

कहँ लग कहूँ नाम प्रभुताई। राम न सकै नाम गुन गाई॥

॥ कड़ी १ ॥

मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा। राम से अधिक राम कर दासा॥

॥ कड़ी २ ॥

गुरु से बड़ नहीं अनामी।

॥ कड़ी ३ ॥

कोटि जनम लग रगड़ हमारी। वरूँ शम्भु नहिं रहौं कुआरी।

अर्थ—करोड़ जनम तक कोशिश और जतन करूँगी। शम्भु को वरूँगी नहीं तो कुआरी रहूँगी (यह कड़ी रामायन की है उस में पारबती ने शम्भु यानी शिव से शादी करने की ख़्वाहिश इस तरह ज़ाहिर की—

ऐसे ही यहाँ भक्त जन का प्रण शब्द गुरु से मिलने के लिये होता है)।

६—कहने का मुद्दा यह है कि वेद शास्त्र की सुनी सुनाई बात की लीक लोग पीटते चले आते हैं मगर लिखे पढ़े लोगों के सामने अगर लड़कों की पुस्तक रक्खेंगे तो वह कैसे मानेंगे। सन्तों के पास बड़े बड़े पंडित और ज्ञानी आये पर सब क़ायल होकर गये मैं तो सन्तों का दास हूँ सो अभी मेरे लड़के की शादी में जितने यहाँ के बड़े पण्डित हैं आये थे मैं ने उन से पूछा परमात्मा किस को कहते हैं कहा कि परमात्मा अगोचर है यानी इन इन्द्रियों से नहीं लखा जाता है मैं ने कहा यह तुम्हारा कहना कथनमात्र है, तोते की कहानी है, कैसे माना जावे, स्वतः प्रमाण दो तसदीक़ के साथ। अगर परमात्मा अगोचर है तो तुम जो अन्तःकरन यानी इन्द्रियों के घाट पर बैठ कर कहते हो वह भी क़ाबिल इत्मीनान नहीं है हम किसी को नहीं मानते हैं न वेद शास्त्र, न पुरान, न क़ुरान, न अंजील, न कबीर साहब, न शम्सतबरेज़ और न राधास्वामी को—सुनो हम अपने मत का स्वतः प्रमाण देते हैं यानी इन आँखों से जो नज़राई पड़ता है उसी के मुवाफ़िक़ बयान करते हैं।

यहाँ दो पदारथ हैं जड़ और चेतन। जहाँ तक

जड़ता यानी माया है वहाँ तक आवागवन है क्योंकि माया एक सूरत पर क़ायम नहीं रहती है। निर्मल चेतन देश अमर अजर है क्योंकि चेतन हमेशा एक रस क़ायम रहता है। जितनी शक्तियाँ हैं सब की धारें और सब के भंडार हैं और सब में आवाज़ है। चेतन भंडार की जो धार है उस की धुन को पकड़ो और जिस रास्ते से कि स्वप्न में और मरते वक्त जाते हैं उसी रासते चलो। यहाँ तीन चीज़ें परधान हैं तन, मन और सुरत—तीनों के बाहर मंडल हैं यानी पिन्ड, ब्रह्मांड और दयाल देश—हर एक में छः दरजे हैं, एक दूसरे का अकस यानी प्रतिबिम्ब है जैसे तन में बाहर द्वारे हैं—वैसे ही अन्तर में भी द्वारे हैं—पिण्डेषु ब्रह्माण्डे यानी जो कुछ बाहर रचना में है वह छोटे पैमाने पर हर एक मनुष्य के घट में है। जैसे सूरज में से धार आ रही है जो कोई ऐसा सूक्षम हो जावे कि जैसी यह धार है तो वह उस धार को पकड़ के सूरज में पहुँच सक्ता है। इसी तरह चेतन भंडार से जो धार आ रही है उस की धुन को पकड़ कर वहाँ पहुँच सक्ता है। अब यह बयान न तो शास्त्र में है न क़ुरान में न अंजील में स्वतः प्रमाण है, हालत मौजूदा का हवाला है और किसी का हवाला नहीं है। यह सुनकर वह सब पण्डित लाजवाब हो गये॥

सवाल—वह धार कैसे हाथ आवेगी ?

जवाब—अभ्यास करो तो हाथ आवेगी जैसे इन आँखों से यहाँ देखते हो वैसे अन्तर की आँख खोलो तो वहाँ की कैफ़ियत मालूम होवे। मगर तरसा तरसा के आँख खोली जायगी इस का मतलब यह है कि आहिस्ता आहिस्ता आँख खुलेगी यानी तरक़्क़ी होगी, जैसे कि लड़का दिन दिन बढ़ता जाता है मगर धीरे धीरे यह काम होता है कि जिस की उस को ख़बर नहीं पड़ती है अलबत्ता जब जवान हो जाता है तब जानता है कि मैं अब लड़का नहीं रहा इसी तरह अन्तर की पूरे तौर पर आँख खुलने में इस का हाल होता है और इसी का नाम तरसा तरसा कर आँख खोलना है।

सवाल—लड़के के जब तेल लगाते हैं मालिश करते हैं तब बड़ा होता है।

जवाब—यहाँ भी खूब तेल और बटना मला जाता है और छठी का दूध निकाला जाता है यानी मान अङ्ग जिसका मरदन करना महा कठिन काम है मारा जाता है, ग़रज़ कि खूब सफ़ाई की जाती हैं, लोग समझते हैं कि बैठे सतसंग करते हैं और कचौरी खाते हैं मगर अकेले में आप हर एक से दरियाफ़्त कीजिये तब मालूम होगा कि क्या मामला है कि

रोज़ जान निकाली जाती है। कहने का मुद्दा यह है कि जितने यहाँ बैठे हुए हैं सब की मालिश होती है यानी खूब गढ़त होती है और यही मत की सचाई और पकाई है—जहाँ कि यह खेल नहीं है और सिर्फ़ खातिरें हैं वह मत झूठा है। ज़रासी किसी के वाय चढ़ जाती है तो किस क़दर ताक़त उसमें आ जाती है, अगर सुरत बग़ैर सफ़ाई यानी गढ़त के किसी की चढ़ाई जावे तो न मालूम क्या ग़ज़ब कर डाले। अब इन बातों को विद्यावान विचारे क्या समझ सक्ते हैं थोड़ी सी विद्या बुद्धि की बातें उन्हों ने सीख ली हैं उन्हीं का ढंढोरा पीटते हैं और जो साध महात्मा हैं जिनका कि अनुभव खुला हुआ है मानो ज्ञान का सागर जिन के घट में बह रहा है वह और भी पोशीदा और गहिर गंभीर होते जाते हैं विद्या बुद्धि की उनके आगे कुछ भी हैसियत नहीं है—

यह करनी का भेद है, नाहीं बुद्धि विचार।
बुद्धि छोड़ करनी करो, तब पावो कुछ सार"

॥ बचन २ ॥

॥ जोग ॥

बग़ैर जोग के ज्ञान नहीं होता और चेतन्य शक्ति सब पर हावी है इससे बढ़ कर और कोई ताक़त नहीं है।

२—शास्त्र में भी जोग की ऐसीही महिमा की है मगर लोग जोग तो करते नहीं पुस्तकें पढ़कर ज्ञानी बन बैठते हैं। जोग किसी चीज़ से मेल करने को कहते हैं। बाहर में भी जब तक किसी चीज़ से मेला नहीं होता है तब तक उस का ज्ञान नहीं होता है कि क्या चीज़ है और क्या उस का असर है। स्थूल इन्द्रियाँ द्वारा जब चेतन्य धार किसी चीज़ को स्पर्श करती है तब उस का ज्ञान होता है और जो कुछ उस की ख़ासियत है मसलन ख़ुशबू रस वग़ैरह मालूम होती है वैसे ही मालिक का ज्ञान तब होगा जब उस की क़ुदरत की शक्ति जिसने कि रचना की है और सब को सँभाल कर रही है और घट घट में प्रेरक है उससे इस की चेतन्य धार का जोग होगा। जैसे बाहर किसी चीज़ के छूने से उस की ख़ासियत मालूम होती है वैसे ही अन्तर में मालिक की क़ुदरती ताक़त

को स्पर्श करने से रचना की कैफ़ियत मालूम होती है—यही सच्चा ज्ञान है और लोग जो मालिक का ज्ञान बताते हैं मसलन किस तरह उस ने रचना की है वह सब कथन मात्र हैं क्योंकि ऊपर की चेतन्य धार का तो उन को पता ही नहीं है जो कुछ वे कहते हैं वह अन्तःकरन का मायक पदारथों से मिलने का नतीजा है, इस लिये उन का ज्ञान मायक और जड़ है। ज्ञान से यह भी मतलब है कि जिस चीज़ का ज्ञान हो उस पर हुकूमत करना जैसे बिजली का जब लोगों को ज्ञान हुआ तब उस पर हुकूमत कर सकते हैं वैसे ही जब मालिक की ताक़त का ज्ञान आवेगा तब उस की रचना पर यह हुकूमत कर सकेगा।

३—रचना में जितनी ताक़तें हैं उन में सब से बड़ी रूह की ताक़त है क्योंकि यह और सब ताक़तों के क़ानून को दरियाफ़्त करके उन पर हुकूमत करती है यानी उन को काम में लाती है और उनसे फ़ायदा उठाती है। यह बात और ताक़तों में नहीं है इस से रूह का सब ताक़तों पर हावी होना साबित हुआ। अगर कोई कहे कि रूह से भी बड़ी और ताक़त हो सकती है जो रूह के क़ानून को दरियाफ़्त कर के रूह पर हुकूमत कर सकती है जिसकी हम लोगों को ख़बर नहीं है तो यह बात ग़लत है क्योंकि अगर

उस ताक़त में भी दरियाफ़्त करके हुकूमत करने की .क़ुदरत मौजूद है तो सुरत यानी रूह से कोई ज़ियादा ताक़त नहीं हुई यानी यही .क़ुदरत सुरत में भी मौजूद है, सिर्फ़ दरजे का फ़र्क़ हुआ—जैसे सुरत के भंडार में यह ताक़त विशेष है बनिस्बत धार के। अलावा इसके चेतन्य में ज्ञान यानी जानने की ताक़त है अगर चेतन्य के परे और कोई ताक़त होगी तो वह ज्ञान से जानी जायगी तो ज़रूर ज्ञान से नीचे होगी इससे ज़ाहिर हुआ कि चेतन्य से बढ़ कर और कोई शक्ति नहीं है और अगर उस फ़रज़ी ताक़त की हम लोगों को ख़बर नहीं हो सकती तो हम सभों के लिये सुरत की ही शक्ति सर्बोपरि हुई यानी हम लोगों का ज्ञान सिर्फ़ रूहानी ताक़त तक हो सकता है और इससे बढ़ कर और कोई ताक़त नहीं है।

४—जब राधास्वामी दयाल की आम तौर पर यह मत परघट करने की मौज होगी तब सब जीवों का घाट बदला जायगा, उपदेश लेने से ही प्रेम के घाट पर आ जायँगे और थोड़ा बहुत अन्तर की कैफ़ियत का लखाव कराया जावेगा। तब इस मत की महिमा साफ़ तौर पर समझ में आवेगी और दया की परख होगी कि किस क़दर राधास्वामी दयाल अपने बच्चों

पर दया फ़रमा रहे हैं। दया की जब परख आवेगी तब राधास्वामी दयाल की मौजूदगी और सर्व समरत्थता की भी परख आवेगी, प्रेम प्रगट होगा और सर्व अंग करके यह भक्ति करेगा और तब इस को प्रत्यक्ष नज़र आवेगा कि कोई बाला बाला धा– ऊपर से आ रही है उसी की मदद से कुल कार्रवाई होती है नहीं तो मैं कुछ नहीं कर सकता हूं—और यह अपने को निहायत नीच और निबल समझेगा। और ......ने मत हैं उन को इस कार्रवाई की ख़बर भी नहीं और अपना आपा ठानते हैं इस लिये प्रेम नहीं आता। जिस काम करने से कि प्रेम आवे और अहंकार पैदा न होवे वह गुरुमत है और जिस काम करने से कि अहङ्कार होवे और प्रेम न जागे वह मनमत है॥

॥ बचन ३ ॥

इस जिस्म में तीन चीज़ें साफ़ दिखलाई देती हैं अव्वल माया जो देहि व इन्द्रियन है, दूसरे मन जिस में हिलोर और ख़याल पैदा होता है, तीसरे सुरत चेतन। अब इस सुरत की ताक़त का ख़याल करन..

चाहिये कि जहाँ-यह कुला फोड़ती है तमाम शक्तियाँ और ताक़तें मौजूद होकर उस देह के बनाव व सँभाल में मदद देती हैं, इस सुरत धार ही की मौजूदगी से हुस्न चिहरे और अंगों पर जो मिस्ल आईने (Index) के हैं नमूदार है, जब वह धार खिंच जाती है तमाम हुस्न चन्द घंटों ही में ग़ायब हो जाता है बल्कि चिहरा भयानक हो जाता है। इस देह में चन्द चक्र (ganglions जिन को centres कहते हैं) साफ़ मालूम होते हैं जैसे पाख़ाने का मुक़ाम, इन्द्री जहाँ से पैदाइश है, नाभी यानी परवरिश का मुक़ाम, हिरदय, कण्ठ, और छठा चक्र। इसके ऊपर दिमाग़ में भूरा मग़ज़ (grey matter) और सफ़ेद मग़ज़ (white matter) है। सन्त कहते हैं कि इन मग़ज़ों में भी दरजात हैं और सुरत छठे चक्र में बैठ कर जो कि मरकज़ दोनों तिलों का है इस देह और दुनिया की कारवाई करती है। जब स्वप्न के वक़्त किसी क़दर सिमटाव सुरत का हो जाता है तो तमाम दुख सुख देह और दुनिया का बिसर जाता है, अगर घर में मौत भी हो गई हो तो वह रंज उस वक़्त नहीं व्यापता है, गो उस हालत में दुख सुख मौजूद है मगर ताक़त बनिस्बत यहाँ के ज़ियादा है कि अपने ख़याल से जो कैफ़ियत चाहे सो पैदा कर सक्ता है, और जब सुरत

गहरी नींद के मुक़ाम पर पहुँचती है तो फिर और भी ज़ियादा आराम मिलता है। जब कि सुरत के एक एक ज़र्रे में जैसा कि ज़बान वग़ैरह पर इस क़दर रस और स्वाद है कि लोग उसी में अटक जाते हैं तो फिर सुरत की बैठक पर और भण्डार में जहाँ से कि सब सुरतें आई हैं किस क़दर भारी रस और मज़ा होगा। अब हर एक जीव को मुनासिब है कि इस भारी रचना का हाल देखकर कि हर एक चीज़ इस में एक हालत में क़ायम नहीं रहती विचार करे कि आया कोई ऐसा मुक़ाम भी है जो हमेशा एक हालत में रहे और जहाँ पहुँच कर जीव को अमर सुख मिले। इस दुनिया में दुख सुख तबदीली सूरत और हालत की वजह से होता है और जहाँ इस की सुरत यानी तवज्जह की धार ज़ियादा आती जाती है उस की तबदीली में इस को दुख सुख होता है, लेकिन जहाँ तक माया की मिलौनी है वहाँ तक यह तबदीली बराबर होती रहेगी इस लिये चेतन देश में जहाँ तग़इयुर व तबद्दुल नहीं है पहुँच कर अमरी सुख पाने का जतन हर शख़्स को करना ज़रूर है।

२-ग़ौर करने से मालूम होगा कि दो तरह की शक्तियाँ इस रचना में काम कर रही हैं मसलन सूरज में दो शक्तियाँ ज़ाहिर हैं एक तो वह कि जिससे उसकी

गरमी और रोशनी फैल कर बवसीले उस की किर-
नियाँ के यहाँ आती हैं और दूसरी शक्ती से वह
ज़मीन और तमाम सइयारों को अपनी तरफ़ खींचता
है और जिस शक्ती के सबब से वह उस की परिक्रमा
कर रहे हैं, इसी तरह हमारे जिस्म में भी दो धारें
आ रही हैं एक धार बाहर नौ द्वारों में हो कर फैल
रही है और दूसरी अन्तर में खींचने वाली है इसी
खींचने वाली धार के वसीले से हम उस मुक़ाम तक
पहुँच सक्ते हैं जहाँ से कि वह रवाँ होती है अब
धार के साथ धुन भी हो रही है इसी को अनहद
और आवाज़ आस्मानी कहा है। सन्त मत में इस
धुन का भेद और तरीक़ा उस को पकड़ कर चलने का
बताया जाता है।

३-कुल मालिक का नाम राधास्वामी है यह नाम फ़र्ज़ी
किसी का धरा हुआ नहीं है इस को मालिक ने आप
इस वक्त में प्रगट किया है। नाम दो तरह के हैं, एक
वर्नात्मक जो फ़र्ज़ी नाम चीज़ों का रख लिया जाता
है मगर उस चीज़ में और नाम में कुछ तअल्लुक़
नहीं जैसे रोटी, दूसरे धुनआत्मक कि जिस नाम में
और नामी में तअल्लुक़ पाती है जैसे घंटे से जो
आवाज़ निकलती है उस को घन और टन वग़ैरह
कह कर ज़ाहिर किया। इस तरह सन्तों ने अन्तर

में सुन कर राधास्वामी नाम प्रगट किया. इसके अर्थ यह हैं कि राधा यानी उलटाने वाली धार और स्वामी यानी भण्डार, और हर जगह धार और भण्डार से ही रचना होती है जैसे सूरज भण्डार है और किरनियाँ जो यहाँ रचना करती हैं धारें हैं—इसी तरह हर चीज़ का ख़्वाह छोटी हों या बड़ी, धार और भंडार है। आवाज़ के साथ सुरत का इश्क़ ज़ाती है जैसे जहाँ गाना उम्दा होता है तो हर कोई ज़रा ठहर कर उस को सुनता है। शब्द की महिमा अगरचे सब मतों में है मगर उस का पूरा भेद और आसान जुगत सुनने की सिर्फ़ राधास्वामी मत में है. उस को समझ कर अभ्यास किया जाय तो एक दिन रसाई मालिक कुल के धाम में हो जावेगी और उस का दरशन प्राप्त होगा—इस की चाह सब को उठाना चाहिये।

४—जीवों की हालत में सुरत छठे चक्र में बैठी है और वहाँ से मन के घाट पर धार उतर कर इन्द्री द्वारे इस देश की कारंवाई कर रही है इस सूरत में मन के मुक़ाम से धार रवाँ होती है और ऊपर के पट सब बन्द रहते हैं लेकिन जिन किसी के ऊपर के पट खुले हों और दयाल देश से सीधी धार आती हो उन को सन्त औतार कहते हैं और जो

धार सीधी ब्रह्मांड से आती हो उसे ब्रह्म का औतार कहते हैं जैसे कि समुन्दर से जो लहर उठकर कोसौं तक ज़मीन पर जाती है हरचंद कि समुन्दर की कार्रवाई वैसी ही जारी है जैसे कि पहिले थी मगर वह लहर समुन्दर से जुदा नहीं है और उस के ख़वास वही होंगे जो समुन्दर के—इसी तरह सन्त कुल मालिक के औतार हैं और उनका दरशन कुल मालिक का दरशन है। जो औतार जिस मुक़ाम तक कि उस के पट खुले हैं वह वहाँ तक और जीवौं को पहुँचा सक्ता है।

॥ वचन ४ ॥

ज़रूरत परमार्थ कमाने की और इल्मी तौर पर सबूत संत मत के क़ुदरती और सच्चे होने का

हर एक जीव इस दुनिया में सुख की प्राप्ती या दुख की निरविरती के वास्ते जतन करता है तो अब अगर यह साबित हो जावे कि रूह अमर है यानी जिस्म छोड़ने के बाद भी किसी न किसी सूरत व

हालत में वह रहेगी तो इस बात का जतन करना कि मरने के बाद इस को सुख मिले किस क़दर ज़रूरी और मुनासिब है। यह चोला ज़ियादा से ज़ियादा सौ बरस तक रह सक्ता है मगर इस के बाद रूह कहाँ जावेगी और वहाँ क्या हाल होगा इसका हाल दरियाफ़्त करना बहुत ज़रूर है और यही परमार्थ (परम अर्थ) है।

अब रूह के अमर होने का सबूत दो तरह पर है एक अमली (Practical) और दूसरा अक़ली (Theoretical) अमली सबूत तो दुनिया में वाक़िआत देख कर हासिल हो सक्ता है चुनाँचि अक्सर आदमियों ने इस शहर में और और जगह भी अपने पिछले जनम का हाल बयान किया है और उस की तसदीक़ हो गई है इस से साबित है कि अगर रूह पहिले से चली आती है तो मरने के बाद भी किसी न किसी सूरत में क़ायम रहेगी। दूसरे अक़ली सबूत रूह के अमर होने का यह है कि हर एक चीज़ मिस्ल हवा, पानी, धरती वग़ैरह का एक एक भंडार दिखाई देता है तो उस शक्ति का भी जो रचना करनेवाली है ज़रूर भण्डार होगा। अब विलायत में अक्सर लोग (Psychical Research ...) यानी रूहानी वाक़िआत की तहक़ीक़ात करते हैं और इस के लिये बहुत सुसाइटी

क़ायम की गई हैं और जो कि उन्हों ने अपनी तहक़ीक़ात के हालात लिखे हैं वह बिलकुल आज कल के साइंस के मुवाफ़िक़ हैं और किसी तरह ग़लत नहीं हो सक्ते इन सुसाइटियों में ऐसे लोग शामिल हैं जो बड़े साइन्सदाँ मशहूर हैं उन में से एक प्रोफ़ेसर हैं कि उन्हों ने रूह के लाज़वाल होने का सबूत दिया है उन को ऐसी ताक़त हासिल है कि जिस बाजे पर वह उँगली रख दें वह ख़ुद ब ख़ुद बजने लगे और ट्रान्स के ज़रिये से दूर दूर का हाल मालूम कर लेते हैं।

३-जब इस तरह मालूम हुआ कि हमारी रूह अमर है तो किस क़दर भारी फ़र्ज़ हम पर आयद होता है कि हम इस बात की तहक़ीक़ात करें कि आया कोई ऐसा भी मुक़ाम है जहाँ पहुँच कर हम को आनन्द ही आनंद प्राप्त हो और किसी तरह का दुख और कष्ट व कलेश न हो। इन्सान के जिस्म को जो देखा जावे तो मालूम होता है कि इस में तीन जुज़ हैं अव्वल देह कि जो ख़ुद कोई चेष्टा नहीं करती है दूसरे मन कि जो ख़याल और तरंग उठाता है तीसरे रूह कि जो सब को ताक़त देती है। मन भी बतौर औज़ार के है। अब इस रूह को देखना चाहिये कि जिस्म में कहाँ है। तलुए से लगाकर चोटी तक ग़ौर किया

जावे तो मालूम होगा कि हाथ पाँव में कोई आला दरजे की ताक़त नहीं है क्योंकि अगर उन को काट भी डाला जावे तो भी ज़िन्दगी क़ायम रह सक्ती है लेकिन धड़ में नरवस सेन्टर्स शुरू होते हैं और ज्यों ज्यों दिमाग़ की तरफ़ चलें वह बहुत बारीक और आला दरजे के होते जाते हैं और दिमाग़ में भूरा मग़ज़ (grey matter) और सफ़ेद मग़ज़ (white matter) है। अब यह जिस्म कुल रचना का नमूना है यानी मालिक ने इन्सान को बतौर अपने अक्स के बनाया है तो जैसे कि सूरज का अक्स जब पानी या किसी चमकती चीज़ पर पड़ता है तो सूरज की तसवीर बन जाती है और उसमें कुल सूरज के आकार मौजूद होते हैं इसी तरह कुल रचना के चिन्ह इन्सान के जिस्म में मौजूद हैं जो चक्र कि पिण्ड में हैं वह पिण्डी रचना के नमूने हैं और उन का सिलसिला बाहर के मण्डलों से लगा हुआ है, और दिमाग़ में जो भूरा मग़ज़ है वह नमूना ब्रह्मांडी रचना का है और उस का सिलसिला ब्रह्मांड से लगा है और जो सफ़ेद मग़ज़ है उस का सिलसिला रूहानी आलम से लगा है। जो कोई कि अव्वल भूरे मग़ज़ की ताक़त को अभ्यास करके जगावे तो वह ब्रह्मांड में रसाई पा सक्ता है और फिर जो सफ़ेद मग़ज़ की ताक़त को जगावे तो उस का सिलसिला रूहानी देश

से लग सक्ता है। ताक़तों का जगाना क्या है कि धार का बइख़्तियार ख़ुद आमदोरफ़्त कराना। जो रूहानी ताक़त को जगावेगा उस को सब पर क़ुदरत हासिल हो सक्ती है और वह चाहे जो कर सक्ता है, जैसे जिस शख़्श ने यहाँ बिजली की ताक़त पर क़ाबू पाया वह उस से चाहे जो काम जो उस से लिया जा सक्ता है लेता है इसी तरह जिस शख़्स ने रूहानी ताक़त को जगाया वह अनन्त लोक रच सक्ता है, इसी वास्ते जोगियों की निस्बत कहा है कि वह चाहें तो कोई लोक रच कर वहाँ रह सक्ते हैं।

४—जब कि रूह के भंडार का मौजूद होना साबित है और उस का सिलसिला अन्तर में मौजूद है तो फिर उस रूह की धार को उस के भंडार में पहुँचाने से हमेशा का सुख मिलना मुमकिन है और इसमें शक नहीं है कि वह भण्डार आनंद का है क्योंकि उस की एक अंस रूह के एक एक हिस्से में कैसा भारी सुख है कि लोग उसी में अटक रहे हैं। तमाम सुख रूह की धार में है क्योंकि जब रूह जिस्म से किसी क़दर अलहदा होती है मसलन क्लोरोफ़ार्म सुँघाने से या नींद के वक़्त तो इस जिस्म को कोई दुख सुख नहीं ब्यापता।

५-कुल मालिक का नाम राधास्वामी है, स्वामी भंडार

को कहते हैं और राधा धार को कहते हैं जो भंडार की तरफ़ मुतवज्जह है। इस रचना में देखा जाता है कि बग़ैर धार और भंडार के कोई काम नहीं होता. जैसे लम्प की लौ रोशनी का भंडार है और उस से जो किरनियाँ छूटती हैं वह धारें हैं अगर यह दोनों चीज़ न हों तो काम रोशनी का नहीं हो सक्ता इसी तरह मालिक की कारंवाई इस रचना में है। राधास्वामी नाम मालिक के स्वरूप को कि जिस तरह वह कारंवाई कर रहा है एक लफ़्ज़ में बताता है।

५-इस बयान से यह ज़रूर मालूम होना चाहिये कि इस से बढ़ कर नाम और कोई मालिक का नहीं हो सक्ता-राम या कृष्ण के नाम कारंवाई ज़ाहिर नहीं करते। गुरु में अभ्यासी अगर इतने ही मानी इस नाम के समझ कर प्रतीत लावे तो काफ़ी है और फिर जब वह अभ्यास करेगा तो इसी नाम की धुन अन्तर में सुनेगा। सन्तों ने उस धुन को राधास्वामी नाम से बयान किया है इस लिये यह ज़ाती नाम है जैसे कि घंटे की आवाज़ किसी और लफ़्ज़ से सिवाय टन. के ज़ाहिर नहीं होती, सीटी की आवाज़ सिवाय [illegible], के और किसी हर्फ़ से ज़ाहिर नहीं होती-जैसे कि सूरज की किरनों के साथ जो धुन [illegible]

धुन सूरज का असली ज़ाती नाम है इसी तरह कुल मालिक का असली नाम राधास्वामी है।

॥ बचन ५ ॥

दरख़्त के फूल और फल जिस शक्ती से कि पैदा होते हैं और बाहर फैलते हैं उस के इस ख़वास को झाड़ कर उस के जौहर को अन्तर में ऊपर की तरफ़ ले जाना यह राधास्वामी मत है।

२-अनामी पुरुष का एक हिस्सा जो हमेशा रोशन था उस में जब रचना हुई तो उस के दरजे मिस्ल बरफ़ पानी और भाप वग़ैरह के हो गये, और इस के नीचे जो ग़ुबार था उस के चेतन की दौड़ ऊपर की तरफ़ थी क्योंकि सुरत का यह ख़वास है कि वह अन्तर में ऊपर को उड़ा चाहती है और चूँकि माया का झुकाव नीचे की तरफ़ और सुरत का खिंचाव ऊपर की तरफ़ रहता है इस वास्ते सुरत के साथ माया किसी दरजे तक जहाँ तक कि वह जा सक्ती थी पहुँची लेकिन फिर झड़ कर नीचे गिरा दी गई और उस से नीचे के दरजे में देहियाँ तइयार हुईं। मगर इस तीसरे दरजे में जहाँ माया का ज़ियादा ज़ोर

शोर है सुरत कुछ अरसे तक माया के साथ उस देह का बनाव और बढ़ाव करती रहती है लेकिन फिर अपने असली ख़वास की वजह से ऊपर को उड़ती है और यही वजह मौत की है, और जो कि सुरत के साथ माया का सूक्षम गिलाफ़ कुछ दूर तक जाता है और वह गिलाफ़ सुरत को अपने मण्डल की तरफ़ झोका देता है इस तरह जन्म मरन होता रहता है यानी सुरत तो अपने मण्डल की तरफ़ खिचना चाहती है और माया उस को अपने मण्डल की तरफ़ झोका देती है। कसीफ़ माया की रचना में यह हाल हमेशा जारी रहेगा लेकिन सूक्षम माया की रचना में सुरत का माया के साथ इस क़दर कम बन्धन हो जावेगा कि वह माया के साथ नीचे को नहीं खिंचेगी। इस वास्ते चाहिये कि कसीफ़ माया झाड़ कर ऐसे स्थान पर अभ्यास करके पहुँचे कि जहाँ से माया सुरत को नीचे न गिरा सके, फिर वहाँ से सुरत का अपने भण्डार की तरफ़ चढ़ना बहुत आसान हो जावेगा. सो जब तक त्रिकुटी तक रसाई न होगी माया सुरत पर ग़ालिब रहेगी. इस वास्ते चाहिये कि जिस क़दर बन्धन सुरत और माया की मिलौनी से पैदा हुए हैं उन को आहिस्ता आहिस्ता तोड़ कर सफ़ाई करे जब सफ़ाई पूरी हो जावेगी तब लायक़ चढ़ाई के होगा।

जितना अर्सा कि इन बंधनौं के तोड़ने मैं है उतनी ही देर सुरत की चढ़ाई में समझनी चाहिये, इस लिये जिस वजह से कि यह सुरत बाहर को फैलती और फूलती है उस को रोक कर और बदल कर उस के असली मंडल की तरफ़ चढ़ाना चाहिये और यही मतलब राधास्वामी मत का है ॥

॥ बचन ६ ॥

शब्द चेतन की धार है और महा पवित्र और आनन्द स्वरूप है किसी तनदुरुस्त आदमी को देखो कि कैसा ख़ूबसूरत और ख़ुश मालूम होता है। तन-दुरुस्ती की हालत मैं चेतन की धार बदन के अंग अंग मैं पूरे तौर से आती है और उसी की वजह से तमाम ख़ूबसूरती और मगनता नज़र आती है फिर शब्द की धार से मिलने मैं किस क़दर आनन्द और सफ़ाई का होना मुमकिन है। उसी धार मैं मन को मल मल कर धोना चाहिये मगर शब्द असली होना चाहिये क्योंकि शब्द शब्द मैं भेद है। अभ्यास करना क्या है? किसी सेन्टर यानी नुक़्ते की ताक़त को जगाना। अब जिस्म मैं जो चक्र हैं वह नुक़्ते रगौं के

हैं और उन के नीचे इन्द्रियाँ हैं कि जहाँ सुरत ने नुक़्ता भी नहीं बाँधा है सिर्फ़ ठेका लिया है इन्हीं की ताक़त जगाने में कैसा आनन्द और सरूर मिलता है कि लोग उस में मस्त हो जाते हैं फिर जिस्म के नुक़्तों के जगाने में और भी ज़ियादा आनन्द मिलता है तो दिमाग़ के सेन्टर्स जहाँ बनिस्बत नीचे के नुक़्तों के ज़ियादा नरवस मैटर हैं जगाने में किस क़दर आनन्द और सरूर हासिल होना मुमकिन है और यह अभ्यास राधास्वामी मत में कराया जाता है। जब बिजली की धार लोहे पर लाई जाती है तो वह बहुत ताक़त वाला मैगनेट यानी चुम्बक हो जाता है जिस को एलेक्ट्रो मैगनेट (Electro-magnet) कहते हैं इसी तरह जो दिमाग़ में शब्द की बिजली जो कि स्थूल बिजली से बहुत ज़ियादा ताक़त वाली है लाई जावे तो वह किस क़दर रौशन और ताक़त वाला होसक्ता है और तमाम इन्द्रियों का रस भी जैसे देखना सुनना वग़ैरह भारी दरजे का मिल सक्ता है॥

॥ बचन ७ ॥

राधास्वामी मत में प्रत्यक्ष सबूत जो अक़्ल में आ सके दिया जाता है पुरन सुरत चेतन के भण्डार

मेँ पहुँच कर मिलेगा। और मतोँ मेँ न कोई ऐसा सबूत दिया गया है और न वहाँ की कार्रवाई से दुख के वक़्त जैसी कि चाहिये सहायता होती है और इसी सबब से कुछ प्रेम प्रीत मालिक के चरनोँ मेँ नहीँ आती है। मालूम हो कि इस जिस्म मेँ तीन ख़ास चीज़ेँ हैँ, अव्वल माया जो ख़ुद बेहरकत है, दूसरे मन जो फुरना उठाता है, तीसरे सुरत जो सब को ताक़त पहुँचाती है। अब इन मेँ से हर एक का एक एक भण्डार भी है। जो सुरत का भण्डार है वही चेतन का भण्डार है और वही कुल मालिक का स्थान है।

२—हर चीज़ मेँ तीन तीन दरजे हैँ एक नार्थ पोल (North pole) दूसरे साउथ पोल (South pole) तीसरे इण्टरमीडियट रीजन्स (Intermediate regions) और हर दरजे मेँ छोटे दरजे और हैँ तो पिण्ड मेँ जो छः चक्र हैँ वह प्रतिबिम्ब यानी अक्स हैँ और उन के असल ब्रह्मांड मेँ हैँ (ब्रह्म के ही पहिले फुरना हुई कि मैँ एक से अनेक हो जाऊँ) इसी तरह सुरत के मंडल मेँ भी छः दरजे हैँ जिन की छाया ब्रह्मांड के छओ चक्र हैँ। यह भेद किसी मत मेँ नहीँ है और कोई आख़री मुक़ाम और सवारी वहाँ तक पहुँचने की नहीँ बताई है सिर्फ़ वेद मत मेँ प्रानोँ

की सवारी बनाई है मगर उस पर चलना इस क़दर मुशकिल है कि इस ज़माने में कोई भी उस का अभ्यास नहीं कर सक्ता और अगर बिलफ़र्ज़ कोई चले भी तो ब्रह्म पद तक पहुँच सक्ता है और वहाँ भी पहुँच कर सच्ची मुक्ती नहीं होसक्ती क्योंकि प्रलय में उस का भी अभाव हो जाता है।

३—दूसरे मतों के आचार्य जैसे ईसा ने शिव नेत्र को जो तीन धारों के मिलान की जगह है पार किया इसी को क्रास कहते हैं और उन का [illegible] हुआ यानी मर कर वह ज़िन्दा हो गये। रीढ़ की जो हड्डी है वही सूली और इंगला पिंगला और सुखमना यही त्रिशूल है। इस वक्त में इस क़दर अभ्यास भी कोई नहीं करता है। राधास्वामी मत में निर्मल चेतन देश में पहुँचना यह ठेका है और शब्द की सवारी पर चलना होता है सो शब्द से बढ़ कर कोई सवारी नहीं हो सक्ती। देखो जहाँ अच्छा बाजा बजता है हर कोई ठहर कर सुनना चाहता है और जानवर भी मस्त हो जाते हैं तो फिर राधास्वामी मत और सुरत शब्द योग से बढ़ कर कोई मत नहीं है॥

॥ बचन ८ ॥

पायोनियर मेँ हाल मेँ एक नई तहक़ीक़ात छपी है जिस से साबित होता है कि सन्तोँ ने जो चौरासी का ज़िक्र किया है वह सही है। पेश्तर लोगोँ का ख़याल था कि तत्व आपस में तबदील हो सकते हैँ मगर बाद इस के यह ख़याल हुआ कि तबदील नहीँ हो सकते, अब हाल मेँ एक शख़्स ने एक नक़शा बनाया है कि उस में १३ लकीरेँ सीधी हैँ और ८ तिरछी हैँ। ८ लकीरोँ के ७ और १३ के १२ ख़ाने होते हैँ, इस तरह १२×७=८४ ख़ाने पैदा हुए। फिर उस ने अमली तरीक़े को ग़लत्त मान कर इल्मी तरीक़े से तत्वोँ का वज़न क़रार दे कर ख़ानोँ में रक्खा तो उस से साबित हुआ कि तत्व तब्दील हो सक्ते हैँ यानी पहिला ख़याल दुरुस्त मालूम हुआ। अभी ख़ाने पूरे तौर पर नहीँ भरे हैँ लेकिन मुमकिन है कि वह भर जावेँगे और जैसा कि संतोँ ने फ़रमाया है कि माया एक मुक़ाम त्रिकुटी से प्रगट हुई और असल मेँ एक ही तत्व है साबित हो जावेगा। त्रिकुटी के ऊपर की तरफ़ तीन गुन की धारेँ निहायत सूक्षम हैँ और जब उन का आपस मेँ मेल हुआ तो ९ हुए। इसी तरह पाँच तत्व हैँ और उन की आपस मेँ

मिलौनी होने से २५ प्रकृती हुईं और तीन गुन जब उन में मिले ७५ हुए और उस में ९ जोड़ कर ८४ हो गए—इस तरह ८४ का हिसाब है। यह चौरासी लच्छ धारा अन्तर में मौजूद हैं ८३ या ८५ नहीं हो सक्तीं, और ८४ लाख नहीं हैं बल्कि चौरासी लच्छ यानी गुप्त धारा हैं॥

॥ बचन ६ ॥

प्राणायाम और मुद्रा वगैरह के साधन से थोड़ी सफ़ाई मन की होना मुमकिन है और जो लोग यह अभ्यास करते हैं और उन को यह ख़बर नहीं है कि हमारा मक़सद क्या है और वह कहाँ हासिल होगा, तो वह ऐसे आदमी के मुवाफ़िक़ हैं कि जो घोड़े पर सवार हो गया और चाबुक मारे जाता है घोड़ा उस को चाहे जहाँ ले जावे। अव्वल यह समझना चाहिये कि अमर अजर देश कहाँ है और वहाँ कैसे पहुँचे तब अभ्यास शुरू करना चाहिये।

२—यहाँ तीन शक्तियाँ काम करती हुईं नज़र आती हैं एक इन्द्रियों की दूसरे मन की तीसरे सुरत दोनों इन के भंडार भी होंगे क्योंकि जब धार का भंडार होता है। इस तरह रचना के तीन भाग हुए एक

पिण्ड देश दूसरे ब्रह्मांड तीसरे निर्मल चेतन देश। निर्मल चेतन देश अमर अजर है और वहाँ पहुँच कर जीव भी अमर अजर हो जावेगा यानी जनम मरन से रहित हो जावेगा। कुल मालिक का नाम राधास्वामी है और यह किसी मनुष्य का रक्खा हुआ नहीं है इस नाम की धुन अन्तर में हो रही है अभ्यासी इस को सुन सक्ते हैं और राधा-स्वामी नाम का अर्थ यह है कि स्वामी नाम मालिक का है और राधा उस धार को कहते हैं कि जो स्वामी से निकली, उसी धार ने तमाम रचना करी है और उसी धार के साथ जो शब्द होता हुआ चला आया है उस को पकड़ के स्वामी के पास पहुँचना मुमकिन है। इस लिये अमर अजर देश में पहुँचने के लिये सिवाय सुरत शब्द अभ्यास के और कोई जतन नहीं हो सक्ता। जो कोई इस अभ्यास को करेगा वह अव्वल छः चक्रों को पार करके मौत के मुक़ाम को फ़तह करके और फिर ब्रह्मांड में सैर करता हुआ सत्तपुरुष राधास्वामी के देश में पहुँच सक्ता है। लेकिन इस कहने से यह नहीं समझना चाहिये कि यह सब बातें फ़ौरन प्राप्त हो जावेंगी क्योंकि यह बात अपने २ अधिकार और प्रेम और शौक़ पर मुनहसर है किसी को एक जनम में किसी को दो में

और किसी को तीन में और हद चार जनम में ज़रूर हासिल होगी जैसा कि कहा है—

> एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम।
> जन्म तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम॥

३—अब अगर प्रेम भारी है तो एक जनम में नाम प्राप्त हो जावेगा यानी एक जनम में दो जनम का काम हो जावेगा और अगर और भी ज़ियादा प्रेम है तो एक एक जनम एक एक दो दो बरस में गुज़र जावेंगे॥

॥ भाग तीसरा ॥

॥ सतगुरु व सतसंग महिमा ॥

॥ बचन १ ॥

राधास्वामी दयाल का औतार

जीवों पर ख़ास दया हुई तब राधास्वामी दयाल औतार धारन करके नर शरीर में आये यह धुरी मुबारक है और यह सबसे भारी उत्सव का है ब्रह्म के औतार राम कृष्ण जो आये उनको लोग अब और

राजाई के सबब मान रहे थे राधास्वामी दयाल ने अपने को गुप्त रक्खा प्रगट नहीं किया क्योंकि सुरत की कारवाई गुप्त है तो मालिक की कारवाई कैसे न गुप्त होगी। राम और कृष्ण का मत ज़ियादेतर प्रवृत्ती याने संसारी क़ायदे और इन्तिज़ाम का था और सन्त मत केवल निरवृत्ती याने जीवों के उद्धार का मत है। जब राधास्वामी दयाल आये तब जीवों को चेतन्य की बख़शिश की और जिन पर ख़ास दया है वह अपनी कमाई करके उस पूँजी को बढ़ाते जाते हैं जो कि राधास्वामी दयाल के संग रहे और जिन्हों ने कि दरशन किया उन की बड़ भागता क्या सराही जावे उन को चाहिये कि उस समय को याद करके स्वरूप का ध्यान नाम का सुमिरन और बचन बिलास का चितवन करें तो भजन से बढ़ कर फ़ायदा होगा।

२—राम कृष्ण को जो लोग ज़्यादा तर मान रहे हैं वह निर्मल परमार्थी भाव नहीं रखते हैं मगर राधास्वामी दयाल जब आइन्दा शाहंशाही चोले में तशरीफ़ लावेंगे तब आप से आप कुल जीव निर्मल और सच्चे भाव के साथ उन के मोतक़िद होंगे।

॥ कड़ी ॥

सत पुरुष ने धारा रूपा। सन्त सरूप भये जग भूपा॥

हुकम दिया कलई तब ऐसा । [illegible] ऐसा ।

गुरु भक्ती बिन नहिं न होई। बिन गुरु दास पार नहिं होई।

३-ब्रह्म के औतार एक जुग में आये फिर गायब फिर दूसरे जुग में आये थे और राधास्वामी दयाल जब से परम सन्त कबीर साहब को भेजा तब से बराबर सन्त और साध अपने निज पुत्र और मुसाहिब भेजते रहे हैं और आप भी औतार धारन कर के आये जैसे कृष्ण ब्रह्म का संपूर्ण औतार था वैसे ही स्वामी जी महाराज राधास्वामी दयाल के संपूर्ण औतार थे और बराबर सिलसिला जारी है गुप्त होने के वक़्त भी फ़रमाया कि ऐसा न समझो कि हम कहीं जाते हैं हम सब के अंग संग हैं और दया बराबर जारी है बल्कि पेश्तर से भी विशेष। लोग रामनौमी वग़ैरह ब्रह्म के औतार लेने के दिन को तिथ त्योहार मानते हैं हम लोगों का तो संत सतगुरु के गुप्त होने का वक़्त भारी उत्सव का समय है।

३-सवाल-गुप्त होने पर ज़ियादा दया कैसे होती है?

जवाब-जैसे बादल जब आता है तब वर्षा होती है और चलते वक़्त भी एक दफ़ा ज़ोर शोर से वर्षा होती है और जैसे बादशाह या अमीर जब जाते हैं तब [illegible] वक़्त जो इनाम इकराम देना है देते हैं और

जाते वक्त हाथ खोल के इस को दे उस को दे खूब बख़्शिश करते हैं वैसे ही सन्त भी जब गुप्त होते हैं तब अपना जानशीन मुक़र्रर करते हैं और जीवों पर ज़ियादा दया इनायत करते हैं—दृष्टान्त का एक अंग लेना चाहिये जिससे कि अपना मतलब निकले उस पर निगाह करनी चाहिये इधर उधर टटोलना नहीं चाहिये ।

॥ बचन २ ॥

॥ सतसंग की महिमा ॥

जहाँ आब हवा अच्छी है और ठण्डक है वहाँ बैठने से दिल दिमाग़ को फ़रहत और तक़्वियत आती है इसी तरह सतसंग में जहाँ कि प्रेमी और भक्तजन सुरत मन समेटते हैं वहाँ बैठने से सुर्त को ताक़त और क़ुव्वत मिलती है और थोड़ा बहुत विशेष चेतन्य से जो सिलसिला होता है उस से ज़ियादा रस और आनन्द मिलता है और चेतन्यता बढ़ती है यही गोया सुरत का अहार है जिसमानी सेहत के लिये लोग पहाड़ पर जाते हैं और हर तरह की तकलीफ़ गवारा करते हैं जैसे लोग नैनीताल

वग़ैरह को जाते हैं तो रूहानी ताक़त बढ़ाने के लिये किस क़दर भारी ज़रूरत सतसंग की है इस में जो कुछ तरद्दुद हो उस की कुछ भी परवाह नहीं करना चाहिये मगर लोगों को क़दर सतसंग की नहीं है झूठमूठ हीला बहाना करके घर बैठे रहते हैं और पास भी रहते हैं तो भी नहीं आते हैं—

पानी बिच मीन पियासी। मोहि सुन सुन आवत हाँसी॥

बाज़े हैं दूर मगर असल में क़रीब हैं और बहुतेरे ज़ाहिर में हैं निकटवर्ती पर दरहक़ीक़त दूर हैं, क्योंकि उन का चित्त कहीं और जगह अटका हुआ है।

॥ दोहा ॥

साध मोहि साहब बसे, हिरदे बसे न दूर।
[illegible] पर [illegible] बसे, साध मोहि में दूर॥

बहुतेरे सतसंग करते हैं और फिर भी नहीं करते हैं यानी ज़ाहिर में बचन सुनते हुए नज़र आते हैं मगर मानने के लिये तय्यार नहीं हैं यानी उन पर अमल नहीं करते हैं॥

२—दुनियावी आदमी अपना खाना ख़राब कर देते हैं पर तन की ज़िल्लत उठाते हैं मगर जब जो चाह लगी है उस को नहीं छोड़ते हैं ऐसे ही जिन को सच्चे सतसंग की चाह लगी है उन को चाहिये ऐसा ही करें

नुक़सान होता है, कुटुम्बी उस पर सख़्ती और तंगी करते हैं पर किसी की परवाह भी नहीं करता है— और जिस को कि लाग नहीं है उस ने गोया चमकते हुए सूरज की गरमी और रोशनी के बीच में संसारी चाह और बासना का पर्दा डाल दिया है इस लिये दया से ख़ाली और मेहर से महरूम रहती है—बिरादरी का कोई काम होता है तो फ़िलफ़ौर दौड़ता है और सतसंग की परवाह भी नहीं करता है, कमबख़्त है, मन उस का चोर है, फिर क्या किया जावे। डाक्टर जीवत राम कैसा बहादुर था दोनों फेफड़े नदारद थे और ख़ुद डाक्टर था ज़रा भी मौत की परवाह नहीं करता था और सतसंग की हाज़िरी बराबर देता था मरने के एक रोज़ पेश्तर भी सूरमाओं की तरह बैठा था इसी तरह बूलचन्द की हालत थी मरते दम तक सतसंग नहीं छोड़ा और मौत को तो समझता था कि अपने घर जाते हैं जीते जी सब बन्धन तोड़ दिया यह सतसंग का फल है।

३—कहने का मुद्दा यह कि सतसंग की हाज़िरी अंतरी और बाहरी बराबर देते रहना चाहिये अगर अंतरी न हो सके तो बाहरी ज़रूर देना चाहिये संसार में भी जो कोई हाज़िरी देता है उस पर हा-

किम मेहरबान होता है और इनाम देता है ऐसे ही जो सतसंग की हाज़िरी देता है उस से मालिक राज़ी होता है और वही परमार्थी लाभ उठाता है। पोथी का पाठ सुनने से बीमारी भी हलकी हो जाती है क्योंकि उस में चित्त लग जाता है। जिस पर मालिक ख़ास दया करता है तो पहिले उसको शिरकत सतसंग में कराता है।

सतसंग जल जो कोई पावे। सब मैलाई घट घट जावे॥
सतसंग महिमा कहा बखानूँ। इस सम जतन और नहिं मानूँ॥

॥ दोहा ॥

सतसंग तिस को कहत हैं, सो भी तुम सुन लेहु।
सतनाम सतपुरुष का, जहाँ कीर्तन होय॥

॥ कड़ी २ ॥

याते सतसंग अब कीजे। और संग सब परिहर दीजे॥
सतसंग याका नाम कहावे। जिसमें सत्त [illegible] पावे॥

॥ कड़ी ३ ॥

सतसंग २ जुग से गावें। पर तिस फल कहूँ न पावें॥
सतसंग महिमा है अति भारी। पर कोइ जीव मिले अधिकारी॥
अधिकारी बिन प्रगट नहीं फल। सतसंग [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

॥ बचन ३ ॥

॥ सतगुरु की पहिचान करना ज़रूरी है ॥

मालिक की मौज हर एक बात मैं बहुत ही ठीक और ज़रूरी है लेकिन सन्त सतगुरु का गुप्त होना इस मैं बड़ी अभागता सारी पृथ्वी की है—उन का गुप्त होना गोया सारे जगत का निगुरा होना है—सन्त सतगुरु बड़ा जवाहिर इस संसार मैं हैं, उनका दरशन करना चरनामृत और परशादी लेना ख़ुद मालिक का दरशन करना चरनामृत और परशादी पाना है—उन को हार चढ़ाना आरती करना ख़ुद मालिक को हार चढ़ाना और आरती करना है—हम लोग जब आगरे जाते थे तब हुज़ूर महाराज के दरशन करते थे बचन सुनते थे आरती करते थे चरनामृत और परशादी लेते थे, यह सब नेमत आसानी से हासिल होती थी मगर हम लोगौं को क़दर नहीं थी, और मालिक को जो कि सन्त सतगुरु रूप धारन करके बिराजते थे नहीं पहिचाना, अब हुज़ूर महाराज के गुप्त होने पर हम सब को क़दर हुई है—

सतगुर खोजो री प्यारी, जगत मैं दुर्लभ रतन यही।
जिन पर मेहर दया सतगुर की, उन को दरस दई॥

२—जिन्हों ने कि हुज़ूर महाराज को पहिचाना वह आज कल देखिये किस क़दर बिरह में हैं और तड़पते हैं और कैसा उन का हाल हो गया है। हुज़ूर महाराज का गुप्त होना मालिक की तरफ़ हम लोगों की बिरह जगाने के लिये हुआ है, इस में बड़ी मौज और मसलहत है। अब फिर जब सन्त सतगुरु प्रगट होंगे और उन की पहिचान आवेगी तब देखिये कैसा आनन्द होगा। हम लोगों को वक़्त बवक़्त मालिक के चरनों में सन्त सतगुरु के प्रगट होने के वास्ते प्रार्थना करते रहना चाहिये—जब तड़प और बिरह ज़ियादा होगी सन्त सतगुरु आप प्रगट होंगे और अमृत रूपी बचनों से जीवों की तपन को बुझावेंगे—

॥ साखी ॥

बिरह जगावी दर्द को, दर्द जगावे जाग।
[illegible]

अभी जो कुछ कसर है हम लोगों की बिरह की है। अलबत्ता जब सन्त सतगुरु प्रगट होंगे उनकी पहिचान करना ज़रूरी है, मगर यह उन्हीं की दया पर मुनहसिर है क्योंकि जो बादशाह भेष बदल कर आवे उस को कौन पहिचान सकता है मगर जो वह चाहे बतरीक़न इशारा अपनी पहिचान का दे सकता है।

३—सवाल—जब किसी सतसंगी को दूसरे में परतीत आवे कि यह सतगुरु हैं तब वह उन का ध्यान करे या नहीं।

जवाब—जैसे सतगुरु अपने सेवक की परख लेते हैं वैसे ही सेवक को भी चाहिये कि उन के स्वरूप का ध्यान करने के पेश्तर अच्छी तरह से उन की परख पहिचान कर ले जिस तरह कि मिट्टी का बरतन पहिले ठोंक बजा के लेते हैं, और जब तक अन्तरी और बाहरी परचे न मिलें तब तक रूप के बदलने में जल्दबाज़ी हर्गिज़ न करे—

जब लग देखूँ न अपने नैना। कभी न मानूँ गुरु के वैना॥

४—सवाल—हम लोग तो सतगुरु की और परख पहिचान नहीं कर सकते हैं सिर्फ़ इतनाही कि जैसे कि हुज़ूर महाराज के चरनामृत और परशादी से फ़ायदा होता था वैसे अब जिस में हम को यक़ीन है कि यह सन्त सतगुरु हैं उन का चरनामृत और परशादी जब हम लेंगे और जो वही फ़ायदा हुआ तो उन को सतगुरु कर के मानेंगे।

जवाब—फ़र्ज़ करो कि फ़लाने सतसंगी में हम लोगों का गुमान है और वह अपनी परशादी और चरनामृत नहीं देता है तो फिर क्या करेंगे।

सवाल–जिसका हमें यक़ीन है कि इसने हमारा मन हरा है और छिप के बैठा है उस का हम चरन भी लेंगे और उस का चरनामृत परशादी भी खा पी लेंगे और जो वह ग़ुस्सा करेगा तो ख़ुशी के साथ उस को बरदाश्त करेंगे क्योंकि इस में हमारे जीव का कल्यान है। यह सुनकर महाराज साहब अपना चरन छिपा कर बैठे और सब सतसंगी हँसने लगे।

५–सवाल–जिस ने हुजूर महाराज को अपना मालिक और गुरु समझा था उस को फिर दूसरे गुरु करने की क्या ज़रूरत है।

जवाब–जिसके अन्तर में हुजूर महाराज का स्वरूप परघट हो गया उस को फिर दूसरे स्वरूप के धारने की ज़रूरत नहीं है–जो फिर हुजूर महाराज देह स्वरूप में प्रगट होवें तो पहिले और दूसरे देह स्वरूप में कुछ फ़र्क़ नहीं होगा दोनों स्वरूप शब्द स्वरूप से मिले हुए होंगे इस लिये दूसरे से कोई विरोध नहीं करेगा बल्कि ख़ुशी के साथ उस का सतसंग करेगा॥

॥ वचन ४ ॥

॥ संग का असर ॥

जैसा जिस का ख़्वास है उस का संग करने से वह अंग ज़रूर पैदा होता है मसलन परमार्थी का संग करने से सतोगुनी अंग जागते हैं और परमार्थी चाह पैदा होती है, साध महात्मा के संग से सुरत मन का सिमटाव और चढ़ाव होता है, जुआरी व शराबी का संग करने से यह भी जुआरी शराबी हो जाता है, बालक को देखने से प्यार अंग जागता है, बैरी को देखने से बिरोध और क्रोध जागता है, विद्यावान और दुनियादार को देखने से संसारी ख़्यालात पैदा होते हैं। कहने का मुद्दा यह है कि संग साथ का बड़ा भारी असर होता है इसकी हमेशा संभाल रखनी चाहिये। बचन बानी में भी यही हिदायत है कि सतसंग करो और कुसंग से बचो और हटो।

२—जितने मैल और बिकार हैं सब सतसंग से दूर होते हैं। लड़का अगर शरारत भी करता है तो भी उस का प्यार मइया के हिरदय में समाया रहता है इसी तरह भक्तजन में जो सतसंग करता है हरचन्द अभी ऐब और बिकार मौजूद हैं तो भी उसकी भक्ती

में फ़र्क़ नहीं आता है—जैसे कोई बीमार है और नशा पीले तो नशे का असर ज़रूर होता है इसी तरह जिस का मन बीमार है वह अगर सतसंग करे उसपर असर ज़रूर होगा मगर अभी उस को परख पहचान नहीं आवेगी, फ़ायदा मालूम नहीं होगा क्योंकि जिस घाट पर कि अभी यह बैठा हुआ है वहाँ की ताक़त जागी हुई है इस लिये संसारी संग साथ और कारोबार असर जल्द मालूम होता है और परमार्थी संग का असर जिस घाट पर होता है वहाँ की ताक़त जागी हुई नहीं है इस लिये परख पहचान देर में आती है।

३—असर ज़रूर होता है मगर अभी क़ाबिलियत नहीं है—जैसे कामी पुरुष को जवान स्त्री के देखने से काम अंग जागता है और जिस में कि अभी यह अंग पुख़्ता नहीं हुआ है उस पर उस का असर नहीं होता है, ताक़त मौजूद है मगर अभी सोई हुई है। सतसंग का असर मालूम होने के लिये क़ाबिलियत भी दरकार है, धीरे धीरे जब पुख़्ता होगा तब असर प्रगट होगा—अगर किसी के सुरत मन का सिमटाव होता है और प्रान नहीं है तो अभी भेद है, कोई न कोई पेच है, पर्दे का भेद है, सतसंग का फल यही है कि प्रान जागें और प्रेम हावी हो और सुरत मन पर

दम तन से झड़झड़ा कर सुनदर में यानी सुन्न के के द्वार में पहुँच जावें ॥

॥ बचन ५ ॥

॥ दया का बरनन ॥

जब दया की धार उमगी तब राधास्वामी दयाल जीवौं के उद्धार के लिये इस संसार में सन्त सतगुर रूप धारन करके आये और गुप्त होते वक़्त अपनी ज़बान मुबारक से फ़रमाया कि ऐसा न समझना कि हम कहीं जाते हैं हर एक सतसंगी के अङ्ग सङ्ग रह कर पेश्तर से ज़ियादा सब की सँभाल और रक्षा होगी और सतसङ्ग इस से भी ज़ियादा बढ़ेगा और सब जीव राधास्वामी मत क़बूल और पसन्द करेंगे— और वाक़ई हो भी ऐसा ही रहा है और आइन्दा ऐसा ही होगा—राधास्वामी दयाल ने दया करके जा बजा सतसङ्ग जारी किया है और जहाँ प्रेमी जन इकट्ठे हो कर राधास्वामी मत की महिमाँ और चरचा करते हैं वहाँ निज रूप से मालिक आप मौ-जूद है और सतसङ्ग की सेवा वग़ैरह सब कार्रवाई उन्हीं की ताक़त से हो रही है और जिन को मत के

समझाने बुझाने की सेवा सुपुर्द की गई है उन के ज़रिये से जीवों की मदद करते हैं।

२—गुरु या सन्त सतगुरु सिवाय राधास्वामी दयाल के और कोई नहीं हो सकता है हम सब आपस में भाई बहिन हैं किसी में गुरु भाव लाना नहीं चाहिये या किसी को प्रेमी समझ कर ऐसा मान लेना कि हमारा काम उससे बनेगा यह महज़ ग़लत फ़हमी है इस से कुछ नहीं होगा। जब सतगुरु मौजूद थे तब हम लोगों की क़द्र नहीं थी कुछ पहिचान नहीं की यानी जिस क़दर करना चाहिये था उतनी नहीं की, मुनासिब था कि अपने को ख़ाक कर डालते। जिस पृथ्वी पर सतगुरु प्रगट होते हैं वह भी पूजने योग्य है, मगर जीव का क़सूर नहीं है भूल भरम के देस में बैठा है, अलबत्ता सच्चे दिल से सतगुरु के प्रगट होने के लिये प्रार्थना करते रहना चाहिये जब मौज होगी तब प्रगट होंगे और जब तक ऐसी कार्रवाई की मौज नहीं है तब तक धीरज के साथ अपना अभ्यास करते रहना चाहिये, मालिक कहीं गया नहीं है घट घट में हाज़िर नाज़िर और मौजूद है, निज रूप से हर किसी की जिस क़दर मुनासिब है सम्हाल और मदद कर रहा है। इस मत में जो शामिल हुए हैं वह धन या मान बड़ाई हासिल करने के लिये

नहीं शरीक हुए हैं उन का मतलब सिर्फ़ अपने जीव के कल्यान का होना चाहिये, पर सतसंग मैं बहुत ही कम ऐसे जीव हैं जो सच्चे हो कर परमार्थ मैं लगे हैं और तन मन धन की परवाह नहीं करते।

३—जो कोई मालिक की देवढ़ी पर जैसे तैसे हाज़िरी देता है यानी अन्तर मैं पुकारता है उस पर एक रोज़ ज़रूर दया होगी—मालिक देखता है कि उस को न धन की न मान बड़ाई की और न भोगौं की चाह है ख़ास परमार्थी मतलब है ऐसा परमार्थी चाहे देवढ़ी पर पहुँचे या न पहुँचे उस पर दया ज़रूर नाज़िल होगी। अगर मन मैं अभी बिकार है तो कोई मुज़ायक़ा नहीं है सब के मन का यही हाल है इस का मसाला ऐसा ही है। सिर्फ़ महात्माऔं का मन पवित्र होता है। सब को चाहिये कि सतसंग और अभ्यास करने के लिये जतन करते रहैं एक रोज़ ज़रूर दया आवेगी और दया मेहर करनी करा के बिशेष दया का अधिकारी बनावेगी—

॥ कड़ी ॥

सन्त दया बिन कोई न पावे। बिना सन्त कुछ हाथ न आवे॥ १॥
करनी भी सब सन्त बताई। बिना मेहर पचना है भाई॥ २॥
ताते मुख्य मेहर अब रही। सरन पड़ो राधास्वामी कही॥ ३॥

४—मालिक सब के घट का हाल जानता है जिस रोज़ कि दया आई उसी रोज़ प्रेम प्रगट होगा सुरत मन सिमटने लगेंगे और दिन दिन तरक्क़ी होती जायगी—ग़रज़ कि जो कोई संत मत में शामिल हुआ है और जैसा तैसा रोज़ाना सतसंग और अभ्यास करता है और सिवाय अपने जीव के कल्यान के और कोई मतलब नहीं रखता है उस पर दया ज़रूर होगी और उस का एक रोज़ ज़रूर काम बनेगा—

॥ शब्द ॥

कृपा गुरु की कहूँ बरनन, कहाँ तक कहोरी ।

५—राधास्वामी दयाल दया करके वक़्तन फ़वक़्तन साध सन्त भेजते रहे हैं मगर जीव ऐसी ग़फ़लत में पड़े हैं कि जिस का कोई हिसाब नहीं है, जैसे पागल अपने को राजा मानता है और अपने तईं पागल नहीं समझता है अगर इस को सब पूंजी छीन कर कोठे में इस को बन्द कर दो तो भी अपने को राजा ही समझेगा वैसे ही दुनिया के लोग भी पागल हैं संसार की चाह हमेशा उठाया करते हैं और साध महात्मा की क़दर नहीं करते हैं ।

॥ वचन ६ ॥

बग़ैर परचे के प्रतीत नहीं होती और बग़ैर मदद पूरे गुरू के अन्तर में हरगिज़ कोई चल नहीं सक्ता साध संग की महिमा अपार है

जब तक अन्तर में कोई परचा नहीं मिला है तब तक जो प्रतीत है वह क़ाबिल एतबार के नहीं है और जो परमार्थी कार्रवाई है वह सब टेक में दाख़िल है। दुनिया नाशमान है यहाँ की कोई चीज़ भरोसे के लायक़ नहीं है, धन दौलत सब यहाँ ही रह जाता है, मौत के वक़्त कुछ भी काम नहीं आता है। रूस के बादशाह का बेटा कहीं जङ्गल में एक बुढ़िया औरत की झोपड़ी में जाकर मरा था—यह कोई इत्तिफ़ाक़िया नहीं हुआ था, सब में मसलहत है। अब देखिये रूस के बादशाह के बराबर कोई रूए ज़मीन पर नहीं है उस के लड़के का यह हाल हुआ कि कुछ भी यहाँ का सामान काम न आया तो और लोगों की क्या हैसियत है।

२—जब तक तजरबा नहीं है तब तक प्रीति जैसी चाहिये वैसी हरगिज़ नहीं आती है। जैसे बादशाह

के महल में जब कोई जाता है तो रास्ते में वहांहां आनन्द मालूम होता है. मसलन खुशबू शीतलता वगैरह देखकर शांति आती है वैसे ही जो मालिक के महल की तरफ़ चलता है उस को भी मार्ग में बड़ी शीतलता और आनन्द प्राप्त होता है. शब्दों की झनकार सुनकर अमृत की बरषा से शीतल हो कर अमी अहार करके और प्रकाश देख कर चलनेवाली सुरत निहायत ही मगन होती है और अपना भाग सराहती है ।

३—अन्तर में चलने के लिये साथी ज़रूर होना चाहिये यानी बगैर पूरे गुरु के किसी की ताक़त नहीं कि काल करम से मुकाबला कर सके इस लिये सतगुरु की मदद निहायत ही दरकार है अकेला अन्तर में हरगिज़ कोई नहीं जा सकता है—

। कड़ी ।

[illegible] ॥ १ ॥
[illegible] ॥ २ ॥
[illegible] ॥ ३ ॥
[illegible] ॥ ४ ॥

४—जैसे कोई बादशाह या अमीर किसी को इनाम दे मसलन जागीर बख़्शे तो पहिले उस के लिये हुक्म देता है और बाद उस के जागीर मिलती है

और जब मिलती है तब ऐनुल-यक़ीन होता है वैसे ही यहाँ भी जब कोई अन्तर में परचा मिलता है तब थोड़ी सी शांती होती है, जब नाम की बख़शिश होती है तब ऐनुल-यक़ीन होता है और जब ज़ात से मिल कर तद्रूप होता है तब हक़ूकुल यक़ीन होता है।

५—राधास्वामी दयाल जीवों को अब गोया न्योता दे रहे हैं कि अपने घर को चलो।

॥ कड़ी ॥

कहें राधास्वामी यह तुम को। चलो सतलोक दूँ न्योता॥

जीवों को सत्तलोक ले जाने के लिये गोया शब्द रूपी रेल राधास्वामी दयाल ने जारी कर दी है जो कोई चाहे वह टिकट लेकर बैठ सक्ता है। सच्चे और खोजी जन को चाहिये कि अपनी जाँच करे कि परमारथ जो हम कमा रहे हैं उस से हम को क्या फ़ायदा हुआ है अगर नहीं है तो ज़रूर और तलाश करनी चाहिये। जैसे लड़के मदरसे में पढ़ते हैं तो वे अपनी जाँच करते हैं कि क्या हम को हासिल हुआ या जो दवा करते हैं वह भी देखते हैं अगर एक दवा से फ़ायदा नहीं हुआ तो दूसरी दवा करते हैं या जैसे दूकानदार अपने नफ़े नुक़सान की जाँच करते हैं वैसे ही परमारथी को भी चाहिये कि जिस मज़हब में

यह है उस से अगर फ़ायदा न होवे तो दूसरे मज़हब की तलाश करे ।

६-दुनिया में और जो मत हैं वे भक्ती की रीति नहीं सिखलाते हैं उलटा धन संतान वृद्धि में अटकाते हैं और संसार की प्रीत दृढ़ाते हैं—ऐसे मत मनमत हैं गुरुमत नहीं हैं साध संग की महिमा भारी है. नानक साहब ने भी साध संग, गुरु और शब्द की बड़ी महिमा की है ॥

॥ [illegible] ॥

गगन मण्डल में आसन पेखे, अनहद नाद बजावे ।
तहँ नानक तिस साध की महिमा, वेद कतेब न पावे ॥ १ ॥
जैसे जल में कमल निरालम, मुरगाबी [illegible] ।
सुरत शब्द भौसागर तरिये, नानक नाम बखाने ॥ २ ॥
घर में घर दिखलाय दे, सो सतगुरु पुरुष सुजान ।
पंच शब्द धुनकार धुन से, बाजे शब्द निशान ॥ ३ ॥
सतपुरुष जिन जानिया, सतगुरु तिसका नाम ।
तिस के संग सिख उधरें, नानक हरि गुन गाय ॥ ४ ॥

॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]

[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]

अनेक विघन तेँ साधू राखे । हरि गुन गाय अमृत रस चाखे ॥ ४ ॥
ओटा गहे सन्त दर आया । सर्व सुक्ख नानक ते पाया ॥ ५ ॥

७—जैसे संसार मैँ बिना उस्ताद के कोई काम नहीं हो सकता वैसे ही परमारथ मैँ भी गुरू की ज़रूरत है, बग़ैर मदद पूरे गुरू के यह मन हर्गिज़ अपनी बदमाशी से बाज़ नहीं आता। मन मिस्ल जंगली बन्दर के है कि जब तक वह किसी उस्ताद के तले नहीं आता तब तक दुरुस्त नहीं होता यानी जब तक मन गुरू की सरन मैँ नहीं आवेगा तब तक सीधा नहीं होगा और न प्रीत प्रतीत के साथ कार्रवाई करेगा—

॥ कड़ी ॥

कोइ तरह यह मन नहीँ हाथ आयगा ।
पूरे गुरु की छाया से मर जायगा ॥
इस लिये दामन को तू उन के पकड़ ।
छोड़ मत ऐ यार उस को धर जकड़ ॥

८—कहने का मुद्दा यह है कि बग़ैर परख के परतीत नहीं होती और जो बिना परख के परतीत है उस की क़दर नहीं होती मसलन हीरा है जिस को कि उस की क़ीमत की ख़बर है वह क़दर कर सकता है गँवार जिस को परख नहीं है वह भला क्या क़दर करेगा। परमारथ मैँ गुरू मैँ परख नहीं है पर समझौती है, पूरे गुरू की पहचान जब इस को आ-

होगी तब उमङ्ग और उत्साह बेहिसाब पैदा होगा भजन ध्यान वग़ैरह परमार्थी कार्रवाई बड़ी मुस्तैदी से करने लगेगा। जैसे हर एक काम के लिये द्वार के जगाने की ज़रूरत है मसलन अन्तरी दर्शन के लिये तीसरा तिल जगाया जाता है, वैसे ही प्रतीत का भी द्वारा जगाना चाहिये और वह द्वारा हृदय है॥

॥ बचन ७ ॥

संस्कार मिस्ल दरख़्त के बीज के है जब वह बीज हवा मिट्टी और पानी के साथ हुआ और फूला फला और दरख़्त उगना शुरू हुआ तो उस की परवरिश के वास्ते माली की ज़रूरत है ताकि वह हर तरह उस की निगहदाश्त और परवरिश करे यानी उस को मुनासिब तौर पर सींचे और गाय बैल जानवरों से उस नाज़ुक पौदे को बचावे और उस के पास जो काँटे वग़ैरह हों उन को दूर करे और कभी कभी फ़ुज़ूल डालियों को भी क़लम करना पड़े, इसी तरह सन्त सतगुरु संस्कारी जीवों को सतसंग रूपी खेत में इकट्ठा करके उन की निगहदाश्त और परवरिश करते हैं यानी काल रूपी से उन को बचाते हैं और जो विकारी अंग उन में मौजूद होते हैं उन को

साफ़ करते हैं और कभी कभी रोग सोग दुख आदिक लाकर उन के अन्दरूनी बिकारौं को छाँटते हैं। यह संस्कार का बीज भी सन्त ही जीवौं के हिरदे मैं डालते हैं तो शुरू से अख़ीर तक वह ही करता धरता हैं यानी वह जीव को संस्कारी भी बनाते हैं और मुनासिब और ज़रूरी करनी और भक्ती वग़ैरह भी कराकर धुर धाम मैं पहुँचाते हैं। ज़ाहिरा मालूम होता है कि यह काम जीव ने किया और होता सब उन के हुकुम और मौज से है। गो कि दरख़्त के बीज मैं ताक़त और शक्ती उगने और बढ़ने की धरी है पर बग़ैर मदद और निगहदाश्त माली के वह परवरिश नहीं पा सक्ता और उस मैं फल जैसे चाहिये नहीं लग सकते हैं।

सवाल—सन्त सतगुरु के रूबरू आने का संस्कार किस तरह हुआ ?

जवाब—यह संस्कार भी जीव के आदि कर्म के सबब से हुआ, यानी जिन जीवौं मैं कि सुरत अंग ज़ियादा है वह जीव सन्त सतगुरु के सामने आते हैं और फिर उन मैं भक्ती का बीज डाला जाता है॥

॥ बचन ८ ॥

जो सतगुरु होयँ सहाई । सो सभी काम बन जाई ।

जब तक हुज़ूर राधास्वामी दयाल दया व मेहर न फ़रमावेंगे तब तक कोई काम किसी तरह का बन नहीं सक्ता उन की दया से सब कारज दुरुस्त हो सकता है और वह दया तब ही फ़रमावेंगे जब कि यह जीव दृढ़ प्रतीत और भरोसा उन की मेहर का रख कर कारवाई करेगा और उन की सरन इस तरह लेगा कि "जो कुछ करें करें राधास्वामी" यानी सब बल और आसरा तोड़ कर एक उन्हीं का आसरा अन्तर और बाहर रक्खेगा जैसे बालक अपनी माता का भरोसा रखता है और हरचन्द इधर उधर खेलता कूदता है मगर जब रुजू करेगा तो मइया की तरफ़ करेगा और गो कि उस को अपनी माता के प्यार और महब्बत की ख़बर नहीं है लेकिन आसरा उसी का रखता है। इसी तरह जीव को अगरचे अपने माता पिता राधास्वामी दयाल की समरत्थता और गत और प्यार की ख़बर नहीं है फिर भी अपने दूसरे का ख़्याल न कर के हर हालत दुख और सुख में उन्हीं का आसरा उन को ढूंढना चाहिये, जब ख़ूब जानते हैं कि इस देश में [illegible]

और मन का कैसा ज़ोर शोर है और जीव निबल और लाचार है, इस लिये इस की भूल चूक का ज़रा भी खयाल नहीं फ़रमाते हैं और दया ही दया करते हैं। पस सब अटक भटक छोड़ कर उन की दया का भरोसा दृढ़ रखना चाहिये और किसी तरह मायूस न होना चाहिये, बाहर में चाहे जैसा जतन करे मगर अन्तर में सिवाय उन के किसी दूसरे का भरोसा न रक्खे, जब मन छोटा पड़ेगा तब झट शब्द की गोद में बैठ जावेगा, जैसा जैसा मुनासिब है वह करनी आप करा रहे हैं और गढ़त भी इसकी बराबर जारी है।

सवाल—फिर चाहे जिस क़दर क़सूर करते जावें वह तो माफ़ ही फ़रमावेंगे ?

जवाब—बेशक ज़रूर माफ़ ही फ़रमावेंगे मगर जो मुनासिब होगा तो एक तमाँचा भी लगायेंगे।

ऐसी भारी दया हुज़ूर राधास्वामी दयाल की है कि दुनिया का भी सब काम जारी रहे और परमार्थ भी आसानी से हासिल होता जावे, जैसा कि गुरू नानक साहब ने फ़रमाया है—

पूरा सतगुर पाइयाँ और पूरी पाई जुक्त।

हसन्दियाँ खिलन्दियाँ, खवन्दियाँ, पिवन्दियाँ, विच्चे पाई मुक्त॥

पान और आब हवा पर तन की सेहत मुनहसिर है इन में जब फ़र्क़ होता है तब मसाला कसरत से इकट्ठा होता है और चूँकि माद्दे से चेतन्य को नफ़रत है इस लिये धार हट जाती है और तपन यानी बुख़ार होता है फिर जब मसाला झाड़ा जाता है तब अमृत की धार बराबर जारी होती है और तन्दुरुस्ती होती है इसी तरह मन का बुख़ार याने रोग होता है चाह वासना और नक़्श जब ज़ियादा होते हैं तब कर्म फल नमूदार होते हैं परमार्थ से रूखा फीका हो जाता है भक्ति सरधा भाव जो पहले था वह नहीं रहता क्योंकि मसाला इकट्ठा होने से चैतन्य धार हट जाती है फिर जब मसाला झड़ता है तब धार मन में आती है और सेहत होती है और जैसे तन की बीमारी से लोग उठते हैं तो पहिले से ज़ियादा तन्दुरुस्ती और हलकापन मालूम होता है वैसे ही मन की बीमारी के बाद उस में ज़ियादा पाकीज़गी और हलकापन होता है और लड़कों सा निर्मल स्वभाव और नवीन भक्ति उस में आती है।

२—सब्र और धीरज के साथ कर्मफल भोगना चाहिये सुमिरन ध्यान और पोथी का पाठ करते रहना मुनासिब है पर जीव बिचारा लाचार है कुछ इस की पेश नहीं जाती है—

महात्मा ने उस को अपने गुरमुख चेले के पास भेज दिया और एक चिट्ठी भी लिख दी उस में लिख दिया कि यह संशयरत है इस का वहम दूर करने का इलाज करना चाहिये। वह चिट्ठी लेकर गुरमुख चेले के पास जा पहुँचा। उस ने कहा एक महीना जो हम काम करें उस में चूँ चिरा न करना महीने के बाद हम तुम को बतलावेंगे, इस ने क़बूल किया। एक रोज़ गुरमुख चेले ने उस से कहा कि कफ़न बाज़ार से ख़रीद कर लाओ वह ले आया कहा कि कोठे में धर दो उस ने रख दिया। उस ने सोचा कि न कोई बीमार है न मरा है कफ़न किस लिये मंगवाया है फिर दूसरे रोज़ कहा शादी का सामान लाओ। वह ले आया अपने बेटे का ब्याह किया बहुत ही रुपया पैसा ख़र्च किया और लोगों की ज़ियाफ़त की। लड़का जब शादी करके बहू को घर ले आया हैज़ा हुआ उसी रोज़ मर गया। गुरमुख चेले ने कहा वह कफ़न लाओ वह शख़्स बड़ी झूँझल में भर गया और जो इक़रार किया था कि चूँ चिरा न करूँगा उस को क़ायम न रख सका और कहा कमबख़्त तू ने बड़ी हत्या की तुझे जब मालूम था कि लड़का मर जायगा तब उस की शादी क्यों की नाहक़ एक बिचारी लड़की को विधवा कर दिया

गुरू की मौज रहो तुम धार। गुरू की रज़ा सम्हालो यार ॥
गुरू जो करें सो हित कर जान। गुरू जो कहें सो चित धर मान ॥
शुकर की करना समझ बिचार। सुक्ख दुख देंगे हिकमत धार ॥

॥ बचन ३ ॥

गढ़त की ज़रूरत और उसका फ़ायदा

शुरू में जब कोई सतसंग में शरीक होता है अगर सतसंग और अभ्यास अच्छी तरह से बनता है और स्वार्थ भी बदस्तूर क़ायम और मज़े में चलता है तो यह समझता है कि बस मेरा काम बन गया और इसी में तृप्त हो जाता है—यह ग़लती है बलकि काल का बिघ्न है—जब तरक्क़ी होगी तब तन मन के बन्धन ढीले किये जावेंगे यानी हर तरह की तंगी इस को होगी तन से दुखी मन से दुखी और धन न होने से दुखी होगा मगर इस में इस की गढ़त होती है और जो कि सरन में आये हैं गढ़त तो उन की ज़रूर ही होगी, यह प्याला है तो कड़ुआ मगर पिलाया ज़रूर जावेगा जैसे लड़का रोवे चाहे चिल्लावे मइया कड़वी दवा ज़रूर पिलाती है इसी में उस का फ़ायदा मुतसव्वर है। जब ताक़त इस में आ जाती

रहती अगर समझौती रहे तो फिर गढ़त नहीं होती। यह शुरू की हालत है मगर जब अनुभव जागता है तब ख़ुशी के साथ गढ़त को झेलता है। और जिस वक्त़ मालिक देखता है कि यह गढ़त की बरदाश्त नहीं कर सकता है और बहुत दुखी है तो गढ़त की कार्रवाई मुलतवी कर देता है और तब सन्त सतगुरु गुप्त भी हो जाते हैं और फिर जब मौज से प्रगट होते हैं तब फिर गढ़त की कार्रवाई हर एक के दरजे के अनुसार शुरू हो जाती है।

॥ कड़ी ॥

मन की गढ़न करावें दम दम। वह हैं मित्र वही हैं हमदम॥
भूल चूक बख़शें वह छिन छिन। संग रहें इस के वह निस दिन॥
यह मन कच्चा बूझ न जाने। उन की गत कैसे पहिचाने॥

३—जो कि सच्चे हैं उन का चाहे कैसा ही निरादर करो चाहे सख़्ती तंगी करो तौ भी परमार्थ से नहीं हटते हैं और जो झूठे हैं उन के आराम और स्वार्थ में ज़रा फ़र्क़ पड़ जावे तो फ़ौरन सतसंग छोड़ने को तइयार हो जाते हैं—जैसे कुआ जब खोदा जाता है तब कोई ज़मीन ऐसी होती है कि ज़रा सा खोदने से पानी निकल आता है और कोई ऐसी पथरीली ज़मीन होती है कि बहुतेरा खोदते हैं पानी निकलता ही नहीं है—इसी तरह बाज़ जीव ऐसे होते हैं कि

थोड़ी सी गढ़न होने से गिलाफ़ यानी परदा उनका दूर हो जाता है और चेतन यानी शब्द और अमृत की धार प्रगट हो जाती है और कोई ऐसे हैं कि बहुतेरी उन की गढ़न होती है कुछ भी असर नहीं होता हमेशा तमन्ना बुद्धि और ऊपर ज़बान के मा-फ़िक ख़ाली रहते हैं इस का सबब यह है कि जिन पर ज़ियादा तह चढ़े हुए हैं उन की ज़ियादा गढ़न होती है और धार देरी से प्रगट होती है और जिन पर कम गिलाफ़ हैं उन की कम गढ़न होती है और फ़ौरन ही थोड़े अर्से में अमृत की धार उन के घट में जारी हो जाती है॥

॥ बचन ८ ॥

नज़र और नीयत का असर और उस का इलाज

नज़र और नीयत का क्या असर होता है और उस के लिये क्या इलाज है उस का थोड़ा सा बयान किया जाता है। आज कल कोई कोई रोशनी वाले इस बात पर एतबार नहीं लाते कि नज़र लगती है—जैसे

कुत्ते बिल्ली और जानवर खाते हैं वैसे यह लोग भी खाते पीते हैं—चेतन का क्या असर है और वह कैसी भारी शक्ती है उस की इन लोगों को ज़रा भी ख़बर नहीं है, और आकाश तत्व की क्या कार्रवाई है उस की भी इन को ख़बर नहीं है तो रूहानी ताक़त की क्या ख़बर होगी। मेस्मरेज़म में किसी की कारआमद चीज़ के ज़रिये से मामूल जिस मण्डल में कि वह रूह है उस से सिलसिला क़ायम कर सकता है और जब तवज्जह उस की एकसू होती है तब मामूल अपना सिलसिला क़ायम कर सकता है वैसे ही जब खान पान की चीज़ में विशेष तवज्जह आती है तब नज़र लगती है और बुरी भली नज़र या नीयत का असर होता है—जितने बिकारी अङ्ग हैं काम क्रोध वग़ैरह इन का असर दूसरे पर देखो कैसा होता है—क्रोध की धारा छूटने से फ़ौरन दूसरे में असर आ जाता है और उस में भी आग लगा देती है—जब इन मलीन धारों का असर इस क़दर होता है तो रूहानी धार का असर किस क़दर न होता होगा। एक शख़्स के खाना सामने रक्खा था दूसरा पास खड़ा था उस ने खाने वाले से कह दिया कि मेरी नाक़िस नज़र इस में लगी है इस को न खाना और जो एतबार न आवे तो पत्थर की पटिया के नीचे रख कर देख लो

क्या होता है—खाना पटिया के नीचे रखने से वह फट गई—अगर वही खाना वह शख़्स खाता तो ज़रूर उस के पेट में ज़हरीला असर पहुँचता।

२—वाक़ई बुरी दृष्टि से बड़ा हर्ज नुक़सान होता है ज़हरीला अङ्ग उस में मौजूद है फ़ौरन असर करता है। जुआ जो खेलते हैं इस क़दर तवज्जह दोनों जानिब से दाँव पर आ जाती है कि बयान से बाहर है गोया उन की जान उस में लड़ रही है—दूसरे का आपा जिस में होता है वह हारिज होता है बरअक्स इस के साथ सन्त की दृष्टि जिस पर पड़ती है निहाल कर देती है। हिदायत नामे में फ़रमाया है कि मुर्शिद कामिल का दरशन दिन और रोज़े में घंटे दो घंटे बराबर करते रहो यानी अपनी आँखों से उन की आँखों को ताकते रहो और जिस क़दर ताक़त अपनी देखो पलक से पलक न लगाओ और इस कसरत को रोज़ ज़ियादा करते रहो। जिस रोज़ और जिस वक़्त नज़र मेहर आलूद उन की तुम पर पड़ेगी उसी दिन सफ़ाई दिल की फ़ौरन होगी। संत महात्मा के स्पर्श करने से भी भारी असर पहुँचता है इसी तरह सन्तों के पास जब कोई कर्मी और नाक़िस जीव आते हैं तो उन का सतसंग में मन नहीं लगता है—जैसे मैले की बदबू फैलती है वैसे ही

नाक़िस कर्म का असर भी फैलता है—कुल कारख़ाना धारों से चल रहा है।

३-कहने का मुद्दा यह है कि परमार्थी को तीन बातों की सम्हाल करना चाहिये एक तो संग, दूसरे खाना पीना औरों के सामने ख़ाह औरों की चीज़ को ग्रहन करना, और तीसरे बोल चाल। बहुतेरों की ऐसी ख़राब आदत है कि फ़ज़ूल बकवाद किया करते हैं, इस से बोल उस से बोल, परमार्थी का बड़ा हर्ज इस में होता है, जो कि सच्चे हैं उन को बड़ी नफ़रत आती है, अपना जो मुनासिब और ज़रूरी मतलब कहना है वह कह कर चुप हो जाते हैं, और जो दूसरा आकर उन से फ़ज़ूल बात चीत करता है तो चाहते हैं कि वह चला जावे और अपना चित्त अन्तर में लगाते हैं—

॥ साखी ॥

बाद बिवादे बिष घना; बोले होत उपाध।
मौन गहे सब की सहे, सुमिरे नाम अगाध॥

खान पान की निसबत अगले महात्मा जो कुछ थोड़ा सा मुनासिब समझते थे भक्त जन को खाने के वास्ते देते थे और इसी लिये हमेशा उनको अपने पास रखते थे।

९—अलावा इस के सन्त मत में इन छः चीज़ों से परहेज़ करना भी निहायत ज़रूरी है और वह यह हैं—

जुआ, चोरी, मुखबिरी, ब्याज, घूस, परनार।
जो चाहै दीदार को, एती वस्तु निवार॥

लोग ब्याज पर ब्याज फिर उस पर ब्याज चढ़ाते जाते हैं या रिशवतख़ोरी करते हैं—परमार्थी को यह क़तई मना है। ग़रज़ कि अगर दीदार और दरशन चाहते हो और सच्चे गाहक परमार्थ के हो तो इन छः बातों से हमेशा बचते रहना चाहिये।

सवाल—औरों का ऐब देखने से भी असर होता है या नहीं।

जवाब—ज़रूर असर होता है उलट कर वही ऐब फिर उस में आ जाता है जैसे तसवीर खैंचने से अक्स आ जाता है वैसे दूसरे का ऐब ग़ौर से देखने से इस में भी वह नक़्श पड़ जाता है।

५-पहिले सब ध्यान की समझौती लेना ज़रूरी है मगर समझौती इस की क़ायम नहीं रहती है जैसे चिकने घड़े के ऊपर पानी नहीं ठहरता इसी तरह अन्तःकरन के ध्यान पर जो समझौती दी जाती है वह वक़्त पर भूल जाती है—अमल में लाओगे तब होगा सब समझना यह अपनी मेहनत पर करेगा।

॥ बचन ५ ॥

॥ मन के बिघन और उन के दूर करने का इलाज ॥

मन में अक्सर अनेक तरह की गुनावन और दूसरे विघन पैदा होते हैं उन को दूर करने के लिये थोड़ा सा निरनय किया जाता है ।

राधास्वामी मत सच्चा है या नहीं यह पहिला बिघन है, गुरू पूरा और सच्चा है कि नहीं यह दूसरा बिघन है, परमार्थ में मन का आलसी और सुस्त होना यह तीसरा विघन है। पहिले बिघन की निस्बत सतसंग से जो समझौती इसे मिली है उस से सोच बिचार यह कर सकता है कि दुनिया के जो और मत हैं उन में कोई अभ्यास की युक्ती और अन्तरमुख कार्रवाई नहीं है और जिस तरह और जिस तरीके के साथ भेद राधास्वामी मत में निरनय किया जाता है वैसा और कहीं नहीं बयान किया गया है बल्कि उन को ख़बर भी नहीं है—इस से उस को यक़ीन हो सक्ता है और शान्ती आसकती है कि यह मत सच्चा और ऊँचा है। जिस ने कि अभी इस क़द्र सतसंग करके समझौती नहीं ली है कि और

मतों से मुक़ाबला कर सके उस को अलबत्ता तक-लीफ़ होती है और यह विघन सताता है—इलाज इस का सतसंग है अन्तर और बाहर।

२—दूसरे विघन के लिये इस को चाहिये कि अपनी हालत और रहनी गहनी पेश्तर की हालत से मिलावे कि किस क़दर फ़र्क़ है क्योंकि पूरे गुरु का सतसंग करने से हालत ज़रूर बदलती है और अन्तर में जो दया और मदद मिलती है उस से इस को तस्कीन और शान्ती आती है कि गुरु सच्चा मिला है—

यार बन्दी यार रा बन्दी कुनद । सुहबते मर्दां तुरा मर्दां कुनद ।

३—जब इन दोनों विघनों में मन की पेश नहीं जाती है तब तीसरा विघन उठाता है और वह यह है कि परमार्थ में काहिली करता है और सो जाता है। इस के लिये मन से पूछना चाहिये कि संसार का काम जिस में कि अपना लाभ समझता है, मसलन दफ़्तर का काम, वह किस क़दर तवज्जह और शौक़ के साथ करता है और परमार्थ में जिस में कि सच्चा लाभ है उस में क्यों काहिली और कोताही करता है—इस को चाहिये कि मन से खींच तान और लड़ाई करे जैसे बाहर लोगों से बहस मुबाहसा करता है—जब कोई किसी से परमार्थी गुफ़्तगू करता है तो

अन्तर मैं उस को मदद कैसी मिलती है और नई २ बातैं सूझती हैं कि इस को ख़ुद अचरज होता है कि कैसी बातें सूझीं जिन का ख़याल भी न था। इसी तरह मन से अन्तर मैं बात चीत करना चाहिये, ज़रूर दया और सहारा मिलेगा।

४—यह मन काफ़िर है इस से ख़ूब लड़ना चाहिये जैसे पण्डित आपस मैं लड़ते हैं वैसे ही मन से जंग करनी चाहिये और जो यह ख़ुद मन का संग करेगा और भगोड़ा बनेगा तो लाचारी है—

चोर और कुतिया मिल गई, पहरा किस का देय।

जब कोई मन का बिकारी अंग ग़ालिब होता है तब इस की समझौती यानी बुद्धी मारी जाती है मसलन क्रोधी है कि झूँझल के वक़्त उस की समझौती ग़ायब हो जाती है। समझौती दो क़िस्म की है, एक मामूली बुद्धी की और दूसरी अनुभवी। शुरू मैं मामूली बुद्धी से काम लेना चाहिये और जब अनुभव जागेगा तब मन की कुछ पेश नहीं चल सकेगी और कोई बिघ्न पास नहीं आवेगा।

॥ बचन ६ ॥

॥सेवा में स्वामी को भूलना यह भी एक क़िस्म का मन का विघन है॥

पेश्तर जो मन के गुनावन और बिघनों का ज़िकर हुआ था उस में एक अंग बाक़ी रह गया उस का बयान अब करते हैं। बेरूनी कार का पुष्ट होना हरचन्द चाहे परमारथी काम हो उस में भी हर्ज और नुक़सान है—मसलन किसी को सतसङ्ग की सेवा सुपुर्द की गई है या और कोई काम ज़िम्मे किया गया है उस में हुकूमत और इख़्तियारात की ख़ाहिश करना या सतसङ्ग का जो अधिष्ठान है उस को या अगर कहीं पूरे गुरु हैं भाग से उन की ख़ास सेवा मिल जावे उस में लिप्त हो जाना और जो असल मतलब है उस को भूल जाना यह नादानी है—परमार्थ का मतलब है कि सुरत मन जो बाहर बिखर रहे हैं वह अन्तर में सिमटें और चढ़ें, इस के लिये जुगती सतसंग और अभ्यास और इसी के साथ सेवा भी रक्खी गई है। अगर वह मतलब सेवा में हासिल होता है तो ठीक है नहीं तो असल मतलब ग़ुम हो जावेगा। अब इस से यह न समझना चाहिये कि

सेवा करना अच्छा नहीं है, अपने दरजे अनुसार सेवा भी ज़रूरी और मुफ़ीद है मगर इसी को मुख्य और मुक़द्दम समझना और दिन रात बहिरमुख कार्रवाई में उलझे और फँसे रहना और सुरत मन के सिमटाव और चढ़ाव की मुख्यता न रखना यह ग़लत फ़हमी है।

२—बाज़े सेवा में स्वार्थ को मुक़द्दम रखते हैं, आपस में ईर्षा भी बड़ी होती है और सेवा में रद्दो बदल होने से बिरोध और लड़ाई पैदा होती है। सेवा वह है जिस में कि स्वामी राज़ी हो और ताड़ मार निंदा जो कुछ हो .खुशी से उस को झेलै और ज़रा भी अपनी अक़्ल आराई पेश न करे—

॥ १ ॥

गुरु की ताड़ और मार सह धर कर पियार।

॥ २ ॥

गुरु की फटकार और निरादर जिन सहा।
वह हुआ इन सब से बिहतर मैं कहा॥

॥ ३ ॥

सन्त वचन हिरदे में धरना। उन से मुख मोड़न नहिं करना॥
मीठा कड़ुवा बोल सुहाई। मत को तेरे देहैं पकाई॥
गर्म सर्द का सोच न लाना। नर्क अगिन से तोहि बचाना॥

॥ ४ ॥

कभी मेहर से शहद देवें तुझे। मुनासिब समझ ज़हर देवें तुझे।

इसी तरह जब खान पान वग़ैरह की ख़ातिरदारी हुई तब तो सेवा के लिये उमँग और उत्साह हुआ नहीं तो ज़रा सी बात में रोस करने लगे और रूखे फीके हो गये यह भी नामुनासिब है। ऐसा भी देखने में आता है कि किसी को बाज़ार से सौदा लाने या परशाद बाँटने का काम सपुर्द किया गया है और जो कहीं वह काम दूसरे के सपुर्द कर दिया जावे तो मिज़ाज बिगड़ जाता है क्योंकि परशाद बाँटना जो पहले उस के तअल्लुक़ था उस में से आप भी खाता था और अपने दोस्त आश्ना को भी देता था और जो वह कहीं बन्द हो गया तो घबराता है और रूखा फीका होता है और कहता है कि अब सतसङ्ग में वह रस और मज़ा नहीं आता जो कि पहले था हुक्म है कि—

मन मारो तन को जारो। इन्द्री रस भोग विसारो॥
तुम निद्रा आलस टारो। गुरु के सङ्ग शब्द पुकारो॥
सतसँग तुम नित ही धारो। गुरु दर्शन नित्त निहारो॥

वह तो बात ही नहीं-उलटा बन्धन पक्का और मज़बूत कर रहे हैं। इस को चाहिये कि जो सेवा कि पहिले इस के पास थी वह अब अगर नहीं रही है यानी दूसरे के सपुर्द हो गई है तो उस में ख़ुश होवे कि शायद अंतर में लगाने की मौज होगी या फिर

जब मौज होगी तब वही या और कोई सेवा मिल जायगी, हर हालत में इस को शुकरगुज़ार होना चाहिये ।

५—रद्द बदल तो ज़रूर होगा—सुरत मन के लिहाज़ यानी अंतरमुख कार्रवाई में भी रद्द बदल होता है तो बहिरमुख कार्रवाई में कैसे न होगा जो कि सच्चा गाहक है वह हर हालत में राज़ी रहता है चाहे ख़ातिरदारी और सेवा प्राप्त हो चाहे न हो हमेशा अपने मतलब को ज़ेर-निगाह रखता है यानी प्रेम प्रतीत और सुरत मन के लिहाज़ को सम्हाल रखता है, अलबत्ता उस में अगर फ़र्क़ पड़ता है तो घबराता है । हुज़ूर साहब के वक़्त में अगर किसी को ख़ास किसी रोज़ नहीं मिलता था या कभी भूल से दूसरे को पहिले और उस को पीछे मिलता तो रोस करता था और कई रोज़ खाना नहीं खाता था—वाक़ई ऐसी हालत लोगों की हुई एक शब्द है—

[illegible]

इस में देखिये जो कि लिखा है उस [illegible] प्रार्थना करता है कि—

[illegible]

और जो कि झूठे हैं वह उलटा मन को पुष्ट कर रहे हैं।

६—और जो कभी किसी से सेवा ले ली जाती है और फिर जब कोई काम उस को सपुर्द किया जाता है उस वक़्त वह झूँझल में भर आता है और सेवा से इनकार करता है—इस से ज़ाहिर है कि अन्तर में मान और बिरोध अंग धरा हुआ है नहीं तो ख़ुशी से मंजूर कर लेता और अपना भाग सराहता कि मौज से फिर सेवा मिली।

॥ कड़ी ॥

जब २ सेव मिले भागन से। उमँग सहित तू ताहि कमाय॥

सवाल—लड़का जैसे किसी चीज़ पर रोस करता है और फ़िर जब उस को वह चीज़ दी जाती है तो इनकार करता है और नहीं लेता है ऐसे ये लोग भी इनकार करते हैं।

जवाब—वहाँ कहा है।

सतसङ्ग करत बहुत दिन बीते। अब तो छोड़ पुरानी बान।
कब लग करो कुटिलता गुरु से। अब तो गुरु को लो पहिचान॥

अगर लड़का चोचले या नख़रे करे तो मुज़ायक़ा नहीं वह जायज़ है और जो कहीं बड़ा चोचला और नख़रा करे तो गुस्ताख़ी है उस की बरदाश्त नहीं।

तालिबइल्म जो कि ए, बी, सी, क्लास में है वह अगर उन्माद से लड़ाई करें कि हम को बी० ए० की किताब क्यों नहीं पढ़ाते हो वह नादान है, इसी तरह जो जिस सेवा के लायक़ नहीं है उसे अगर माँगे तो मूरख है। कहने का मुद्दा यह है कि सेवा का मतलब है कि जिस की सेवा की जावे उस की प्रीत जागे और याद आती रहे यह नहीं कि उल्टी ईर्षा विरोध लड़ाई और रूखा फीकापन पैदा हो। असल में गुरु भक्ति बड़ी कठिन है—

॥ साखी ॥

[illegible] सहजा सुगम, सुगम [illegible] की धार ।
नेह निबाहन [illegible], महा कठिन [illegible] ॥१॥
गुरु भक्ति अति कठिन है, ज्यों खाँड़े की धार ।
बिना साँच पहुँचे नहीं, महा कठिन व्यौहार ॥२॥
भक्ति दुहेली गुरु की, नहिं कायर का काम ।
सीस उतारै हाथ सों, सो लेसी सतनाम ॥३॥
[illegible] भक्ति [illegible] है [illegible] ।
[illegible] कबीर [illegible], [illegible] ॥४॥

॥ बचन ७ ॥

॥ आदत का असर और उस के बदलने का जतन ॥

सुभाव यानी आदत का असर बड़ा प्रबल होता है उस का पलटना महा कठिन काम है गोया जानवर से इनसान बनाना है । जैसे रस्सी जल जाती है पर ऐंठन नहीं जाती ऐसे ही और बिकारी अंग छूट जाते हैं पर सुभाव नहीं बदलता । देखो सरकस का बन्दर, कि वह कितना ही सिखलाया जाता है पर उस का बन्दरपन नहीं जाता, जब वक़्त आता है तब भूल जाता है और जो पुराना सुभाव है वह उस पर ग़ालिब हो जाता है, इसी तरह जिस में जो स्वभाव प्रबल है वह देर अबेर अपना इज़हार और असर ज़रूर पैदा करता है—मसलन शराबी हैं, वह बहुतेरी क़समें खाते हैं कि फिर कभी शराब नहीं पियेंगे मगर जब वक़्त आता है तब भूल जाते हैं, जैसे फ़स्द जो लोग जिन दिनों में खुलवाते हैं फिर उन्हीं अइयाम में ख़ून उसी तरफ़ रुजू करता है इसी तरह पुरानी आदत शराब पीने की जो उन के ख़ून में पैवस्त हो गई है वह अपना इज़हार करती है

उन का गोया ख़ून पुकारता है इस लिये लाचार हो जाते हैं, लोग उन की हजो करते हैं और हक़ीर निगाह से देखते हैं मगर वह अपनी आदत की गिरफ़्तारी से अपने को बचा नहीं सकते हैं। कुछ साल हुए एक साहब विलायत गये थे वहाँ उन को शराब पीने की आदत पड़ गई नतीजा यह हुआ कि फ़ालिज गिरा और एक घंटे में मर गये। लोग अपने तईं तहस नहस और ग़ारत कर देते हैं, मक़रूज़ हो जाते हैं तो भी अपनी ख़राब आदत नहीं छोड़ते।

२—बनारस में एक शख़्स था उस को घोड़े पर सवार होने की बड़ी आदत थी एक बड़ा शोख़ घोड़ा आया उस पर चढ़ने लगा लोगों ने बहुत ही मना किया पर वह नहीं माना क्योंकि उस के सिर पर सवार था चढ़ते ही वह गिर पड़ा और मर गया। लोभ के मारे रामचन्द्र सोने की हिरनी के पीछे पड़े इतना भी सोच विचार न किया कि सोने की हिरनी कैसे हो सकती है—असल में जब शामत घेर लेती है तब बड़े बड़े धीरजवान और ज्ञानिवान भी बेवक़ूफ़ बन जाते हैं। कहने का मुद्दा यह है कि जिनसे नुक़सान है उस को ख़राब आदत छोड़ने के लिये नसीहत करना पड़ती है और जो वह नहीं माने तो उस को छोड़ देना चाहिये॥

॥ १ ॥

जो कोइ समझे सैन में तासों कहिये बैन।
सैन बैन समझे नहीं तासों कछु नहिं कहन॥

॥ २ ॥

राधास्वामी कही बनाई। जो नहिं मानो भुगतो भाई॥

३—साध महात्मा की सरन मेँ जो आता है उस का सुभाव इस तरह बदलाया जाता है कि या तो उस का चोला छुड़ा देते हैँ और कुछ अरसे उस को ऊँचे स्थान पर आब हवा बदलने के लिये रखते हैँ या सतसंग और अभ्यास कराके और गढ़त का रगड़ा देके जीते जी मौत की हद पर पहुँचा देते हैँ—इस तरह सुभाव बदला जाता है, समझौती से काम नहीं होता है, ख़ौफ़ और लालच जब तक है तब तक तो मन सीधा चलता है और जब वह दूर हो गया तब फिर मन टेढ़े का टेढ़ा हो जाता है मसलन चिड़िया, तोते को जब खाने का लालच दिया जाता है या बन्दर को लकड़ी का ख़ौफ़ रहता है तब तक वह सीधे चलतेँ हैँ और जब खाना या लकड़ी हटा ली जाती है तब वह बेतकल्लुफ़ अपने स्वभाव मेँ बरतने लगतेँ हैँ-बन्दर जिस वक़्त कि सरकस में है हरचन्द साहब का ड्रेस यानी पोशाक पहने हुए है पर उसी वक़्त जो मौक़ा मिला तो कोई चीज़ वग़ैरह खसोटने

और गमगन करने लगा। इसी तरह पहले साधु लोगों को आगरे से जहाँ निकलने का मौक़ा मिलता था बेतकल्लुफ़ चरनामृत और परशादी लोगों को देने लगते थे धन भी लेते थे और अपने तई पुजवाते भी थे अब वह आज़ादी नहीं है इसी से घबराते हैं। आज़ादी में बड़ा हर्ज और नुक़सान है महिमा इस की है कि प्रभुता होने भी अपने को बचावे बकरी-दरख़्त जो कि फलदार होता है उस को जिस क़दर लोग झोंका देते हैं उतना ही ज़ियादा मेवा देता है इसी तरह जिस सन्त में भक्ति रूपी फल फूल लगे हुए हैं उन को जिस क़दर कोई तंग करता है उतना ही ज़ियादा वह दया, मेहर, दीनता और दीन भाव करते हैं।

४-सख़्ती करना और दुख देना मालिक को मंज़ूर नहीं है बल्कि जानवरों के काटने और खुराक बदलने के लिये उन ने यह सब रक्खा है—मन पर थोड़ा बहुत दाब होना ज़रूरी है, [illegible] [illegible] [illegible] इनसान से मालिक [illegible] तक सोचा है और [illegible] उ- [illegible] [illegible] निकला [illegible] [illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible] [illegible] भी [illegible] है। यह किसी [illegible] नहीं समझना चाहिये कि [illegible] [illegible] ऐसा ही होता है।

॥ साखी १ ॥

मन को मिरतक देखके, मत माने विश्वास ।
साध जहाँ लौं भय करैं, जब लग पिंजर स्वाँस ॥

॥ साखी २ ॥

मैं जानूँ मन मर गया, मर कर हुआ भूत ।
मूए पीछे उठ लगा, ऐसा मेरा पूत ॥

जैसे रावन का लड़ाई में एक सीस कटता था तो दस और निकल आते थे ऐसे ही मन का एक अंग मरता है दस और अंग जागते हैं—कटा दरख़्त जिस की जड़ अभी बाक़ी है उस का एतबार नहीं करना चाहिये कि अब नहीं उगेगा, जब मौक़ा आवेगा तब फिर उस में नई नई डालियाँ और हरे हरे पत्ते निकल आवेंगे—इसी तरह आपा जो कि मूल बिकार और जड़ है जब तक मौजूद है तब तक यक़ीन नहीं करना चाहिये कि मन मर गया ।

५—मन को मारने और सुभाव बदलने का इलाज दुख और तकलीफ़ है, सुख और आराम में मन और मोटा होता है ।

दुख की घड़ी ग़नीमत जानो । नाम गुरु का पल पल भजना ॥
सुख में ग़ाफ़िल रहत सदा नर । मन तरङ्ग में दम दम बहना ॥
ताते चेत करो सतसङ्गत । दुख सुख नदियाँ पार उतरना ॥

यही ज़रिया है इस की प्रीत प्रतीत जगाने और

॥ कड़ी १ ॥

मन चंचल कहा न माने, मैं कौन उपाय करूँ ॥
गुरु नित समझावैं साध बुझावैं, सतसंग में चित जोड़ धरूँ ॥
सुन सुन वचन बहुत पछताऊँ, बहुर भुलावे भर्म रहूँ ॥

॥ कड़ी २ ॥

गुरु को दुख पहुँचावन चाहे क्यों नहीं मेरा आदर कीत ॥
जोरू लड़के गाली देवैं, मूछ पकड़ वह खैंच खिचीत ॥
उन की ताड़ मार निन सहता, उन से तौ भी मन न फिरीत ॥
उन की प्रीत लगी अस दृढ़ होय, लोहे की सँगलीत ॥
अब तो चेत ज़रा तू हे मन, त्याग पशू की रीत ॥

॥ बचन ८ ॥

॥ दाब और दबाव में दया है ॥

सुरत तम और अन्तःकरन रूप हो रही है ऊपर से धार आती है तो सेहत और चैन है नहीं तो बेचैनी और बेकली है-यह दोनों धोखे के घाट हैं बराबर तनज़्ज़ुल और बहाव बहिरमुख हो रहा है—चाहिये कि अन्तर में सिमटाव और चढ़ाव होवे; इसलिये दबाव की ज़रूरत है क्योंकि बग़ैर दबाव के सिमटाव नहीं होगा। जिस की धार अन्तर में उलटी हुई है

बीमारी, सख़्ती वग़ैरह हमेशा बनी रहती है—यही दाब और दबाव है जिस में कि निज दया उनके सम्हाल की है। जिस को कि मुतवातिर उस का तजरबा है वह अगर उस की शिकायत करे तो अफ़सोस की बात है। अगर दबाव न होता तो उस की सुरत का पता न लगता—आज़ादी में हर्ज और नुक़सान है इस में मन हमेशा पसरा और फैला रहता है।

॥ बचन ९ ॥

मन इन्द्रियों का दमन करना और आपे को छोड़ना ॥

मन इन्द्रियों के दमन करने के लिये और मतों में जो जुक्तियाँ हैं उन का असर बाहर स्थूल अंग पर पड़ता है, अन्तर के अंतर असर नहीं होता है—मसलन मरीज़ है उस के फोड़े का इलाज हो रहा है अगर सिर्फ़ बाहरी मवाद ख़ारिज किया जावे और अन्तर के अन्तर जो कील है उस को दूर करने का इलाज और इन्तिज़ाम न किया जावे तो फिर वह फोड़ा जैसे का तैसा हो जायगा। सन्त मत में विकारों

का जो नुक़्स है पहले उस को रफ़ा करने का बन्दो-बस्त किया जाता है और जो जुक्ती बनाई जाती है उस का असर अन्तर के अन्तर होता है बाहर शरीर पर नहीं होता है ।

८—और मतों में मन इन्द्रियों का दमन करने के लिये अपना बल पौरुष लगाते हैं जिससे आपा पुष्ट होता है, और संत मत में अपना बल पौरुष छोड़ना पड़ता है और अपने को निबल और आधीन समझना होता है—इससे अहंकार जो विकारों की जड़ है वह कट जाता है, समरथ उस के सिर पर दया का हाथ रखता है और वही उस के कर्म काटता है तब उस को यक़ीन होता है कि जो कुछ होता है समरथ राधास्वामी दयाल की मौज से होता है और वही करता धरता हैं और अपने को दीन हीन नीच ना-दान समझता है—तब जो उस की कार्रवाई है वह आप की नहीं होती है ।

मैं नालायक़ हूँ इस में कुछ शक नहीं।
दया जो करे प्यार अचरज नहीं॥
क़सूरों को बख़शो मेरे हे दयाल।
ग़रीबी पै मेरे धरो अब ख़याल॥
दया के भरोसे बने सब क़सूर।
मेहर से देखो बख़्श आली हज़ूर॥
मैं तुम्हरा हूं और तुम हो मेरे सही।
पिता पुत्र का नाता पूरा यही॥
पिता तुम हो और मैं हूँ बालक समान।
करो मेहर दीन और निबल मोहिं जान॥

४—जब इस की चाह दूर होती है तब हर जानिब करता धरता राधास्वामी दयाल को देखता है और मगन रहता है और जब तक अपनपौ है वृथा आपा ठान कर दुखी सुखी होता रहता है। कहने का मुद्दा यह है कि राधास्वामी दयाल जीवों पर अति दया करके कुछ ख़याल इस की करनी का न करके करम काटते हैं और मेहर से निज घर में पहुँचाते हैं, जीव से कुछ नहीं बनता है। अगर करनी और मेहर का मुक़ाबला किया जावे तो गोया तिनके और पहाड़ का मुक़ाबला करना है॥

॥ बचन १० ॥

॥ मन का अङ्ग ॥

यह मन बड़ा दुष्ट और धोखेबाज़ है जैसा प्रेम इस को करना चाहिये वैसा नहीं करता है और दी-नता का बड़ा वैरी है दीन अङ्ग कभी नहीं लाता है. मान बड़ाई इस की ख़ुराक है नाद सार से भागता है. भजन में तरंग उठाता है. बड़ा फ़रेबी और कप-टी है. तीन लोक को इस ने भरमाया. ऋषि मुनि सब हार गये कोई इससे नहीं बचा—

तीन लोक चोरी भई, सब का धन हर लीन्ह।
बिना सीस का चोरवा, पड़ा न काहू चीन्ह ॥

॥ कड़ी ॥

बंझा ने बालक जाया। जिन सकल जीव भरमाया ॥

२—बग़ैर मदद राधास्वामी दयाल के और किसी की ताक़त नहीं है कि मन को जीत सके, जीव बिचारा निरबल और बेबस है इस की कुछ ताक़त नहीं है कि कुछ भी कर सके, जो कुछ होता है राधास्वामी दयाल की दया और मौज से होता है, जिस ने कि राधास्वामी दयाल की सरन ली है उस का अलबत्ता इस मन से छुटकारा होता है सिवाय राधा स्वामी दयाल के और किसी की ताक़त नहीं है कि इस मन की गढ़त और दुरुस्ती कर सके। भक्त जन अपनी गढ़त और सफ़ाई होती हुई देख कर अपना भाग सराहता है कि कोई पूरबला भाग जागा जिस के सबब से राधास्वामी दयाल की सरन में आया हूँ और इस दुष्ट मन से रिहाई हो रही है नहीं तो चौरासी में कुछ पता न लगता, न मालूम कहाँ जाना होता। जिन्हों ने कि राधास्वामी दयाल की सरन ली है उन का बेड़ा पार है। जैसे स्त्री की लाज पति को है वैसे ही भक्त जन की लाज मालिक को है हर वक्त, उस की रक्षा और सम्हाल होती है—

॥ साखी ॥

मैं सेवक समरत्थ का, कबहुँ न होय अकाज।
पतिव्रता नङ्गी रहै, तो वाही पति की लाज॥१॥
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अन्त तिहुँ काल।
पलक एक में प्रगट ह्वै, छिन में करौं निहाल॥२॥

३—घट में यह मन बड़ा बदमाश दग़ाबाज़ और फ़रेबी बैठा है इस की दुरुस्ती के लिये पहिले सतसंग की ज़रूरत है जैसे मैले कपड़े को धोबी पहिले पानी में साफ़ करता है पीछे पत्थर पर पटकता है वैसेही पहिले सतसंग रूपी जल में मन साफ़ किया जाता है बाद इस के गढ़न यानी रगड़ होती है तब इस के अन्दर की काई निकलती है—इसलिये तकलीफ़ के वक़्त घबराना नहीं चाहिये बल्कि गुरु का मशकूर होके भक्ति में क़दम आगे बढ़ाना चाहिये—

॥ साखी ॥

कबीर मन मैला भया, या में बहुत विकार।
यह मन कैसे धोइये, साधो करो विचार॥१॥
गुरु धोबी सिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार।
सुरत सिला पर धोइये, निकसै जोति अपार॥२॥
[illegible]
[illegible]॥३॥

४—मन के दो रूप हैं [illegible]

और सुमत यानी संसारी और परमार्थी बुद्धि। कुमत से काम क्रोध वग़ैरह पैदा होते हैं और सुमत से सील छिमा दया दीनता उतपन्न होती है। सुमत रूपी बचनों से बिकारी अंग नाश होते हैं-मुख़ालिफ़त और कठोरता मन के अंग हैं और डरपोक होना सुरत का अंग है-यह मन बड़ा गँवार मूरख दुशमन है इस को मेंहदी के समान पीसना चाहिये।

॥ साखी ॥

मन को मारूँ पटक के, टूक टूक हो जाय।
विष की क्यारी बोय कर, लुनता क्यों पछिताय॥

॥ कड़ी ॥

सखी री मेरा मनुवाँ निपट अनाड़ी।

॥ बचन ११ ॥

सुरत के तन मन से न्यारी होने के लिये दुख तकलीफ़ और रोग सोग की ज़रूरत है

अभ्यास का नतीजा यह है कि सुरत तन मन से न्यारी होवे-यह तीन तरह से होता है यानी तन

को तोड़ो मन को सारी इन्द्री द्वारा रोको। जिस के लिये रोज़ तकलीफ़ रोग बीमारी देकर और खाना कम करा कर उन के तन को तोड़ते हैं और इन तकलीफ़ भोगा भोगी लड़ाई झगड़े से उन का मन मारते हैं और इन्द्री भोगों से नफ़रत कराते हैं। जो कि संसकारी हैं उन के लिये ऐसे इन तकलीफ़ों की ज़रूरत नहीं है। लोग पुकार करते हैं कि तरंगें दूर होवें- चाहिये कि तरंगों का सुरूप यानी मसाला जो अन्तर में भरा हुआ है उस को निस्तनाबूद करें। खाना छोड़ने के लिये ऐसा न हो कि आठ आठ रोज़ खाना न खावे यह तो पागलों का काम है, चाहिये कि कम खावे जिससे बदन हलका रहे और अपनी चाह को संसार से हटावे और देखे कि संसार में कहाँ कहाँ हमारी रुचि अटकी हुई है, और रोज़ घंटा भर नाम का सुमिरन करे।

और जैसे जल में मछली केल करती है और बिना जल के जी नहीं सक्ती वैसे ही इस को भी बग़ैर चरन रस के चैन नहीं आता।

॥ कड़ी ॥

बिन गुरु चरन और नहिं भावे। इस आनंद में रहे समाय॥

दुख तकलीफ़ में बरदाश्त होनी चाहिये और सूरमाओं की तरह दुख तकलीफ़ झेलने की सूरता होनी चाहिये बल्कि ऐसी ख़्वाहिश रहनी चाहिये कि दूना दुख होवे—हिम्मत कभी न हारनी चाहिये—"हिम्मते मरदाँ मददे ख़ुदा"

३—जिस ने भक्ति मारग में क़दम रक्खा है उस को दुख तकलीफ़ ज़रूर होगी और इस में फ़ायदा है जैसे मइया अपने बच्चे को चीरा दिलाती है तो उस में इस का फ़ायदा मुतसव्वर है और हरचन्द कि बच्चा चिल्लाता बिल्लाता है तो भी डाक्टर चीरा देताही है इसी तरह जिस की गढ़त होती है वह हरचन्द दुख और तकलीफ़ के वक़्त रोता है और झींकता है तो भी मालिक अपनी कार्रवाई जारी रखता है क्योंकि इस में इस का फ़ायदा ज़ेर निगाह है—और जैसे भारी नश्तर के लिये बड़ा नज़राना या फ़ीस देते हैं वैसे ही इस को चाहिये कि जब कभी भारी

दुख और तकलीफ़ होवे तब वही भेंट राधास्वामी दयाल के चरनों में पेश करें यानी बल्कि शुकराना मालिक का अदा करें क्योंकि ज़ियादा दुख और तकलीफ़ से मन का मसाला ज़ियादा ख़ारिज होता है और छिपे हुए अंग निकलते हैं और इस तरह सुरत मन से न्यारी होती है।

९—किसी कारोबार में पहले अपना धन ख़र्च करते हैं बाद को नफ़े की उम्मेद करते हैं ऐसे ही पहले जब अपना तन मन धन उजाड़ दिया जायगा तब मालिक का दरशन होगा।—

पूरा सतगुर पाइया और पूरी पाई जुक्त।
हसन्दियाँ, खिलन्दियाँ, खवन्दियाँ विच्चूं पाई मुक्त॥

और आप फ़रमाते हैं अपने तईं वीरान कर देना!

जवाब—पहले जब कि तन मन धन अरपन कर लेगा तब यह कहना ठीक है, यह भी सन्तौं ने कहा है।

मन मारो तन को जारो। इन्द्री रस भोग विसारो॥ १॥
तुम निद्रा आलस टारो। गुरु के सँग शब्द पुकारो॥ २॥
सतसँग तुम नित ही धारो। गुरु दर्शन नित्त निहारो॥ ३॥

क्यौं नहीं इस को पकड़ते हो-एक को पकड़ते हो और दूसरे को छोड़ते हो—जब ऐसी गति होगी तब अगर धक्के खायगा तौ भी ज़ियादा सुरत ऊपर को चढ़ेगी और जो हँसेगा खेलेगा तौ भी सुरत उसी तरह खिंचेगी।

॥ बचन १२ ॥

॥ मन का फ़रेब और उस का इलाज-दुख तकलीफ़ में दया है और मौज से मालिक बरदाश्त भी देता है॥

तन में जब कोई चोट लगती है या ज़रर पहुँचता

साधू समझ कर औरों पर दया करने लगा और इस तरह दया की धार में बह गया।

मन में मसाला भरा हुआ है इस लिये जब कोई ज़रा सा मन के ख़िलाफ़ कहता है फ़ौरन क्रोध आता है और समझौती जो ली है वह भूल जाती है जब मसाला झड़ जायगा तब समझौती क़ायम रहेगी, जब तक मसाला है तब तक ज़रा सा छेड़ने से साँप के माफ़िक़ लड़ने को तइयार हो जावेगा।

२—मन की बनावट और रुख़ माहीपुश्त या क़ुब्बेनुमा (convex) है और उस के साथ सुरत की धार बाहर बह रही है जब उस का रुख़ उलटै और वह पचक कर गहरा हो जावे तब सुरत मन के साथ बहने के बदले अन्तर में उलटैगी—जैसे आतशी शीशा माहीपुश्त होने से नुक़ता या केन्द्र (focus) बाहर बनाता है और रोशनी बाहर पड़ती है जब शीशागर उस शीशे को काट कूट और घिस घिसा कर ठीक कर लेता है तो वह गहरा (concave) बन जाता है यानी रुख़ अंतर में हो जाता है और नुक़ता (focus) अन्तर में बनता है और रोशनी बाहर बहने के एवज़ अन्तर में रुजू करती है, ऐसे ही जब मन की गढ़त होगी और रुख़ उलटेगा तब अन्तर नुक़ता (focus) बनेगा और धार बाहर बहने के

मैं कोई वैर विरोध नहीं रहता फिर जैसे के तैसे मिल जाते हैं, जैसे लड़के आपस में लड़ते हैं फिर साथ खेल कूद करते हैं और चित्त में विरोध नहीं रखते।

४—हमेशा दीनता से बरताव करना चाहिये। संसार में भी जहाँ जिस का काम अटका रहता है वहाँ दीनता के साथ बरताव करते हैं वैसे ही सतसंगियों को भी अपने परमार्थी फ़ायदे के लिये सब के साथ दीनता से बरताव करना चाहिये इसी ख़याल पर कि राधास्वामी दयाल इस के एवज़ दया की बख़्शिश फ़रमावेंगे।

५—बहुतेरों का ऐसा स्वभाव होता है कि जो तरङ्ग अन्तर में उठी बस उसी का रूप हो जाते हैं, चाहिये कि उसी वक़्त सुमिरन ध्यान करके अपनी सँभाल करें। बाज़े ऐसे हठीले होते हैं कि बहुतेरा समझाओ कभी नहीं मानते हैं ऐसे लोगों को सख़्त सज़ा दी जाती है।

६—परमार्थी के लिये हमेशा अन्तर में खैंचातानी (tug of war) होती है यानी मन माया के बिकारी अंग नीचे की तरफ़ खैंचते हैं और सुरत के अङ्ग यानी सील छिमा संतोष वग़ैरह ऊपर को—इस तरह का संग्राम अभ्यासी के अन्तर में होता रहता है। सतसंग में जो समझौती दी जाती है अगर कोई नहीं

पर जब कर्म अनुसार दुख तकलीफ़ आती है तब मालिक दख़ल नहीं देता है लेकिन इस से अगर उस का परमार्थी हर्ज होता है तो वह दया करके सूली का काँटा कर देता है। यहाँ के दुख सुख से बचने के लिये लोग क्लोरोफ़ार्म यानी बेहोशी की दवा सूंघते हैं, चाहिये कि शब्द रूपी क्लोरोफ़ार्म सूंघ कर सुरत को तन मन से न्यारा करें। दुख तकलीफ़ में अगर घबराया तो समझो कि आपा धरा हुआ है और मौज से माफ़िक़त नहीं की। जब तक आपा है तब तक मौज से माफ़िक़त नहीं हो सक्ती और न पूरे तौर से सरन ली जाती है।

८—कहने का मुद्दा यह है कि जब तक मन नहीं हारेगा तब तक सरन नहीं ली जायगी, और जब तक सरन नहीं लेगा तब तक उद्धार नहीं होगा, और उद्धार तब होगा जब प्रेम आवेगा, और जब प्रेम आवेगा तब दया की परख आवेगी और जब दया की परख होगी तब राधास्वामी दयाल की महिमा गावेगा और पूरे तौर से सरन लेगा—यह निज सार है इस को समझना चाहिये। रस्सी को जलाते हैं तो भी उसकी एँठन नहीं जाती है ऐसे ही मन को चाहे कोई कैसा ही मारे और ज़ाहिर में वह दीन अधीन हो जावे तो भी जहाँ तक माया है वहाँ तक आपा यानी अहं ज़रूर रहता है

सेख़ मारना यही है कि सत्त देश का बीजा डाल के सत्तलोक पहुँचाते हैं।

॥ कड़ी ॥

खुल खुल खेलूँ सुन में प्यारे। काटूँ करम विधाता हो॥

बिधाता करम वही है जो आदि कर्म यानी खोल सुरत पर चढ़ा हुआ है। जब इस का काम बन जा- यगा तब यह बनिया होगा—

॥ कड़ी ॥

मन बनिया बनत बनाई। घट भीतर तोल तुलाई॥

॥ बचन १२ ॥

भक्त जन के लिये उलटी सुलटी हालत और ज़िल्लत इज्ज़त जो कुछ होती है मौज से होती है और इसमें उसकी मस्लहत मंज़ूर है

जो लोग कि भक्ति मारग में और सतसङ्ग में शरीक हुए हैं उन के लिये दम मारने की गुंजाइश नहीं है, उन के लिये जो कार्रवाई होती है वह मौज

बूझ लेने से इस की दिन दिन दुरुस्ती और सफ़ाई होती है, मलीनता और निकम्मापन दूर होता है, और अंतर में जो मसाला यानी भँगार भरी हुई है वह ख़ारिज होती है।

३—ऐसी समझौती जब इस को आवेगी तब चित्त में बिरोध नहीं रहेगा बल्कि उस शख़्स का शुकराना करेगा, यानी जो सच्चा भक्त है वह उस को अपनी गढ़त का औज़ार समझ कर उस के पाँव पर गिरेगा कि तेरे ज़रिए से राधास्वामी दयाल ने मेरी दुरुस्ती की। मगर ऐसी समझौती हमेशा याद नहीं रहती, अक्सर भूल जाती है, सो कुछ हरज नहीं है कभी भूल भरम कभी याद, इस तरह की हालत होती रहेगी, इस में दया है, अगर हमेशा याद रहे तो फिर गढ़त न हो और जो असली मतलब है वह ख़ब्त हो जावे।

४—बाज़ी मौज ऐसी होती है कि कहीं किसी बात का वजूद भी नहीं है तौ भी निन्दा कराके जीवों की परख की जाती है, मसलन हुज़ूर साहब के भोग में एक रोज़ मूली की पकौड़ियों की तरकारी ऐसी बन कर आई कि जिस को किसी ने समझा कि कबाब है, फ़ौरन यह बात उड़ी और बहुतेरे भूल भरम में पड़ गये और हरचन्द कि गोश्त का नाम भी न था

नीच से नीच भङ्गी समझा जाता है उस के साथ भी मुक़ाबला करने की भक्त जन को गुंजाइश नहीं है, यानी अगर किसी को भक्ती करनी मंजूर है तो भंगी की भी सहनी पड़ेगी और उलटी सीधी सच्ची झूँठी हालतें ज़रूर आवेंगी इस को चाहिये कि चुप करके सब की बरदाश्त करे—

अगर रोस न किया पर बिरोध अंतर में रहा तौ भी एक ही बात हुई यानी एक परदे से हटकर दूसरे परदे में जा बैठा—

॥ कड़ी ॥

बस रहो चुप और गुरु सरनी गहो।
हुक्म मानो उन के चरनों में रहो॥

॥ साखी ॥

खोद खाद धरती सहे, काट कूट बनराय।
कुटिल बचन साधू सहे, और से सहा न जाय॥

॥ कड़ी ॥

ज़िल्लत इज्ज़त जो कुछ होवे। मौज बिचारो कर भक्ती॥ १॥
गुरु का बल हिरदे धर अपने। सुन प्यारे तू कर भक्ती॥ २॥
यह बिगाड़ कुछ करें न तेरा। क्यों झिझके तू कर भक्ती॥ ३॥
बिना मौज गुरु कुछ नहिं होता। सुन प्यारे तू कर भक्ती॥ ४॥

अगर ज़िल्लत की बरदाश्त नहीं है तो समझना चाहिये कि अभी भक्ती कच्ची है, मगर कुछ हर्ज नहीं है कच्ची से एक रोज़ पक्की होगी—

उस के अन्दर राज़ी हो कर कार्रवाई करे किसी मैं बन्धन न रक्खै, मस़लन अगर किसी रिश्तेदार की मौत भी हो जावै तो मौज मालिक की समझ कर ख़ामोश रहे, अगर ताक़त बरदाश्त किसी दुख की न हो तो वास्ते मिलने ताक़त के प्रार्थना करै, सब अंतरी और बाहरी बन्धनौँ को ढीला कर दे और कोमल बानी और हर हालत मैं दीनता से बरताव करै तो शेर को भी बस मैं ला सक्ता है, मिस्ल कमाये हुए बैंत या धुनी हुई रूई के जिधर चाहो झुका लो, ग़रज़ कि कोई अटक भटक बाक़ी न रह जावे, मन की गढ़त इस तरह हो जावै जैसे एक महातमा जी का हाथ पक कर सड़ गया था और कीड़े पड़ गये थे मगर वह इलाज नहीँ कराते थे। एक रोज़ दो तीन कीड़े ज़मीन पर गिर पड़े उन्हौँ ने उठा कर फिर ज़ख़म मैं रख दिये और कहा कि यह वहाँ परवरिश पाते थे तब मालिक ने राज़ी हो कर उन के ज़ख़म को ख़ुद ब ख़ुद अच्छा कर दिया। साध की रहनी सील छिमा सन्तोष की जैसी कि कबीर साहब ने साध की महिमा मैं बरनन करी है होनी चाहिये और हमेशा अपनी कसरौँ को देखता जाय।

वक़्त बवक़्त वह ज़ाहिर हो जाती हैं हरचन्द वह उन को छिपाना चाहता है। अलबत्ता अर्से तक होशियारी से सतसंग करने के बाद मुमकिन है कि मन दुरुस्त हो जावे सो कोई चिन्ता की बात नहीं है, हम जो हुज़ूर राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं तो वह सब गढ़त कर लेंगे, इरादा हमारा पक्का होना चाहिये फिर वह सब सामान आप बख़्श देंगे। जो भेष हैं उन की गढ़त की बड़ी ज़रूरत है क्योंकि उन्हों ने घर बार परमार्थ ही के ख़ातिर छोड़ा है पर उन को गेरुआ कपड़े धारने और भेषों की जमाअत में रहने से बड़ा अहंकार हो जाता है, गेरुए कपड़े में क्या परमार्थ रक्खा है! हुज़ूर महाराज ने बहुत से भेषों को गृहस्थी या मिस्ल गृहस्थियों के बना दिया और कपड़े भी सफ़ेद पहिना दिये। भेषों को यह भी जानना चाहिये कि गृहस्थी पर ज़ियादा ज़िम्मेदारी नहीं है मगर उन्हों ने जो घरबार छोड़ा है उन पर फ़र्ज़ है कि वह पूरे तौर पर मन की गढ़त करावें और उस को ढीला करें और सच्चे परमार्थी बनें।

दया करके और भी तरह-तरह की जुगत करते हैं जैसे अगर किसी को सुख देते हैं तो उस के साथ कुछ न कुछ दुख भी मिला देते हैं ताकि उस सुख का ज़हर न चढने पावे, ग़रज़ कि जैसे मुनासिब होता है ठोक पीट कर उस को दुरुस्त कर लेते हैं।

॥ वचन १७ ॥

बल किसी तरह का इस को न रहै यह भारी द[illegible] मालिक की है यानी प्रतीत इस बात की इस [illegible] आ जानी चाहिये कि मैं कोई काम अपने बल [illegible] नहीं कर सक्ता हूँ जो कुछ होता है मालिक की मौज से होता है, यह आप ही परदा है जो मालिक [illegible] दीदार नहीं होने देता है सो जहाँ तक माया है वह तक आपा है लेकिन इन पर्दों में दरजे हैं जिस क़द[illegible] परदे टूटते जावेंगे मेला मालिक से होता जावेगा जब तक घाट नहीं बदलेगा तब तक यह मालिक को कुद[illegible] का कर्ता होना नहीं मालूम कर सक्ता और जब आप[illegible] जाता रहा तो यह ख़याल करेगा कि मेरी तमाम ताक़त सर्फ़ हो गई मगर असल में यह दया है क्योंकि

दुख देने वाली है। मालिक की प्रीत सदा रहनेवाली और हमेशा का आनन्द देने वाली है, दुनिया की प्रीत नाशमान और दुखदाई है, जैसे जिस से कि गहरी मोहब्बत और प्रीत है उस से मिलें मगर उस की तरफ़ मुख़ातिब न हों तो कैसे वह शख़्स .ख़ुश होगा इसी तरह जो मालिक से प्रीत करें और उस से मिलने को अभ्यास में बैठें मगर दुनिया के ख़यालों में लिपट जावें तो कैसे वह मालिक राज़ी होगा। मालिक तो हरचन्द चाहता है कि मुझ से मिले क्योंकि अन्तर में वह पुकार भी रहा है मगर यह दुनिया की तरफ़ ही झोका खा जाता है, प्रेम जब आवे तब सब ही काम बन जावे अन्तर में सफ़ाई भी हो जावे और किसी क़िसम की कदूरत बाक़ी न रहे। यह प्रेम मालिक की निज दात है जिस को बख़शिश हो जावे वह महा बड़ भागी है। एक किनका प्रेम का फ़ौक़ियत रखता है सौ बरस के भजन और बन्दगी पर। थोड़ा सा भी झीना ख़याल मालिक के चरनों का और थोड़ी भी बेकली और तड़प उस के दीदार की बनी रहै तो बहुत काम इस का बन सक्ता है। ऐसी तड़प और हिलोर के वास्ते प्रार्थना करना चाहिये,

हासिल करने के लिये कोशिश करना या अपनी मान बड़ाई के लिये सरगरदाँ रहना । और जो काम कि ज़रूरी और मुनासिब हैं उन को हत्तुल्इमकान करना चाहिये जैसे अपने वक्त. फुरसत में पोथी का पाठ या और परमार्थी कार्रवाई में मशगूल रहना और जीवों को भर मक़दूर सुख पहुँचाना, शील और छिमा को हर वक्त. काम में लाना, नमूद व नुमाइश बिलकुल न करना, और जितने सकारी अंग हैं उन से काम लेना और बिकारी अंगों को छोड़ना । ऐसा बिचार हर वक्त. रखना ज़रूर है न कि सिर्फ़ सतसंग के वक्त. । अगर अभ्यास में रस भी मिले लेकिन जो ऐसा बिचार नहीं है तो वह ठीक कार्रवाई परमार्थ की नहीं है । ऐसा बिचार उस वक्त. ठहरेगा जब कि यह सतगुरु स्वामी को अपने सिर पर हरवक्त. मौजूद समझेगा बग़ैर ऐसे बिचार के और उस के मुवाफ़िक़ रहनी रहने के जैसा चाहिये परमार्थी फ़ायदा हासिल नहीं हो सक्ता है क्योंकि जब तक बिकारी अंग दूर न होंगे सफ़ाई अंदरूनी हासिल न होगी और जब तक सफ़ाई न होगी निर्मल रस नहीं मिलेगा, सो सतसंग के वक्त. तो किसी क़दर बिचार रहताही है मगर जब घर गया और भोग सन्मुख हुआ सब बिचार भूल गया । ऐसे बिचार में मन की दम दम

॥ बचन १९ ॥

परमार्थी को चाहिये कि मालिक की मौज के साथ मुआफ़िक़त करे आराम या तकलीफ़ जो आयद हों सब को मौज मालिक की समझ कर ख़ुशी के साथ बरदाश्त करे, अगर वह आग में जला दे या परबत से गिरा दे तो भी राज़ी रहे, ग़रज़ यह कि जो कुछ हालत आवे उस में ख़ुशी से राज़ी रहे। जब ऐसी हालत परमार्थी की हो जावेगी तब उस का चित्त बड़ा ही मगन और उपराम रहेगा गोया तमाम भार सिर पर से उतर गया। जिस किसी की ऐसी हालत है वही सच्चा दास है वही सच्चा सेवक है और उसी की दशा मालिक की सी होगी, फिर देखना चाहिये कि मालिक किस तरह छिन छिन उस की रक्षा और सँभाल करता है। देखो माँ छोटे बच्चे की किस तरह सँभाल करती है, सर्द हवा चलती है तो उस को ओढ़ा देती है गरमी पड़ती है तो पंखा झलती है अपनी नींद और आराम का कुछ ख़याल नहीं करती और हर वक़्त उस की निगरानी करती रहती है अगर कोई कीड़ा या भुनगा उस पर आ पड़ता है तो माँ उसे दूर कर देती है और बच्चे को ख़बर भी

मौज आप सब कार्रवाई कर देगी तो यह भी बड़ी ग़लती और मौज के ख़िलाफ़ है क्योंकि मालिक अन्तर के अन्तर निहायत गुप्त है इस लिये वह चाहता है कि उस की कार्रवाई भी गुप्त रहे। हुज़ूर महाराज ने फ़रमाया है कि जब सन्त कोई कार्रवाई करना चाहते हैं तो अपने निज धाम में बैठ कर मौज करते हैं और वहाँ से काल के नाम हुक्म जारी होता है और फिर उस की कार्रवाई नीचे स्थान तक जारी हो जाती है।

सवाल—काल की मारफ़त क्यों कार्रवाई कराई जाती है ?

जवाब—अगर किसी की दोस्ती बादशाह से हो और वह उस से कहे कि यार हमारे यहाँ आज भंगी नहीं आया ज़रा पाख़ाना साफ़ कर दो तो वह यह करेगा कि भङ्गी को भेज देगा ख़ुद जाकर यह कार्रवाई न करेगा (यह देस मिस्ल पाख़ाने के है,) जब कोई बादशाह किसी को कोई इनाम या तमग़ा देना चाहता है तो वह क़ायदे के मुवाफ़िक़ कमिश्नर या कलक्टर की मारफ़त भेजेगा ख़ुद वह इनाम न देगा, चाहे कलक्टर इनाम पाने वाले से नाराज़ भी हो और ख़िलाफ़ भी हो मगर बादशाह के हुक्म की तामील उस को ज़रूर करनी पड़ेगी और उस इनाम

बनेगा तो इस की सफ़ाई होना जल्द मुमकिन है लेकिन जो घबरा गया और बरदाश्त न कर सका तो आहिस्ता आहिस्ता सफ़ाई की जावेगी, लेकिन जब सफ़ाई होगी इसी तरह होगी। यह मत आम तौर पर जब ही प्रगट हो सक्ता है जब कि जीव सफ़ाई करके इस लायक़ बना लिये जावें कि अन्तर अभ्यास में लगें। पुराने ज़माने में जीव ईश्वर-कोटी थे वह अपने तीव्र बैराग से बहुत कष्ट उठा सकते थे और अन्तर में लग सक्ते थे लेकिन इस वक्त में जीवों की हालत बहुत नाज़ुक है न उस क़दर बैराग है और न तकलीफ़ बरदाश्त करने की क़ाबिलियत है, इस वास्ते राधास्वामी दयाल अपने निज रूप से तमाम पृथ्वी पर ऐसी मौज फ़रमा रहे हैं कि जिस से जीवों की सफ़ाई हो और इस मत में शरीक होने के क़ाबिल बनें, लड़ाई, मरी, क़हत जो आज कल बेहिसाब फैल रहे हैं ऐसी मौज के निशान हैं। इस तरह की कार्रवाई जैसी कि निज रूप से हो सक्ती है प्रगट रूप से नहीं हो सक्ती क्योंकि प्रगट रूप हर किसी को नज़र आता है तो जीव उस से लड़ने को तइयार होते हैं लेकिन गुप्त स्वरूप से उन का कुछ बस नहीं चलता, इसी मसलहत से मालिक ने अपने तईं हमेशा गुप्त

ख़ास चीज़ का टूट गया लेकिन जब उस पर कोई सदमा पड़ता है तो मालूम होता है कि किस क़दर बंधन धरा हुआ था। बंधन टूटा हुआ जब समझना चाहिये जब कि उस के भाव अभाव या हानि लाभ में उस को कोई दुख सुख न हो जैसे कि ग़ैरों के दुख सुख में इस को कोई दुख सुख नहीं होता—सो यह बन्धन सब राधास्वामी दयाल आहिस्ते आहिस्ते तोड़ेंगे कभी कोई झगड़ा पैदा करके कभी बीमारी लाकर, ग़रज़ कि उन के पास बन्धन तोड़ने की अनेक जुक्तियाँ हैं और इस तरह पर रफ़्ते रफ़्ते मोह का बीजा जो मन में धरा है जला दिया जाता है—जैसे कुटुम्बियों में लड़ाई हो जाना और एक दूसरे की तरफ़ से चित्त बिगड़ना, कुछ देर के लिये इस में मोह टूट गया, फिर आपस में मेल हो गया तो कोई हरज नहीं लेकिन जड़ बंधन की यानी मोह कमज़ोर हो गया। तन का बन्धन अलबत्ते भारी है इस का टूटना जब समझना चाहिये जब कि इस में इतनी ताक़त हो जावे कि जब चाहे जब सुरत की धार को जिस अंग से चाहे अलहदा कर ले जैसे कि पम्प में से पानी की धार को खींच लेते हैं और जब फिर चाहते हैं नीचे उतार देते हैं। यह ताक़त गहरे अभ्यास के बाद हासिल होगी। जब यह हालत

सीतल करता है—जानवरों में तो यह जौहर है ही नहीं अगर है तो बिल्कुल ख़फ़ीफ़—इनसान में अलबत्ता है और उस को मोह कहते हैं। इन्सान भी जो कि आसुरी हैं यानी जिन में हैवानियत ज़ियादा है उन में यह अंग कम है और उस को सेन्टिमेन्ट (Sentiment)यानी आसुरी प्रीत कहते हैं। जिस क़दर चेतन्य बिशेष है उसी क़दर मुहब्बत यानी प्रीत ज़ियादा है—अगर मलीनता के साथ है तो वह मोह कहलाता है और जो निर्मल प्रीत है तो उस को प्रेम यानी इश्क़ कहते हैं। पतंग दीपक पर आशिक़ है उस में ज़ाती और क़ुदरती प्रीत है रोशनी देखने से ही उस की दृष्ट हर जाती है और अपने आपे को भूल जाता है। ऐसी प्रीत जिस की मालिक से है वही प्रेमी है और वही मालिक का प्यारा है। जिस पर मालिक निज दया फ़र्माता है उस को अपनी ज़ात यानी प्रेम की बख़शिश करता है।

॥ कड़ी ॥

गुरु प्रीत बढ़ी चितवन में । सुर्त खैंच धरी चरनन में ॥
मेरी दृष्टि हरी दरशन में । अब प्रेम बढ़ा छिन छिन में ॥

२—जिस को कि इश्क़ है वह अपने तन मन का सुख आराम नहीं चाहता है बल्कि अपनी सुध बुध भी भूल जाता है। जैसे कोई बीमार है और अगर

अन्तर मैं जो इस के और कुटम्बी हैं यानी मन माया इन्द्रियाँ काल कर्म और पाँच दूत इन से लड़ाई करनी पड़ती है इस को जिहादे अकबर कहते हैं जैसे हंडरेड इयर्स वार (Hundred Years' War) यानी सौ बरस की जङ्ग वग़ैरह लड़ाई हुई हैं वैसे ही यह चार जनम का युद्ध है—सती और सूरमा एक ही पलक मैं प्रान देते हैं पर साध को जब तक तन मन का सङ्ग है तब तक दिन रात लड़ना पड़ता है—कबीर साहब ने फ़रमाया है।

साध का खेल तो बिकट बेँड़ा, जती सती और सूर की चाल आगे।
सूर घमसान है पलक दो चार का, सती घमसान पल एक लागे॥
साध संग्राम है रैन दिन जूझना, देह परयन्त का काम भाई।
कहैं कबीर टुक बाग ढीली करे, तो उलट मन गगन सों ज़मीं आई॥

५—मन जो कि भोगों का आदी है और जिस का तन से बंधन है उस बन्धन को तोड़ना और उस से न्यारा होना और घट मैं लड़ाई करना जीव की ताक़त नहीं है जैसे कृष्ण महाराज ने अर्जुन से कहा था कि लड़ाई करूँगा मैं मगर करानी तुम्हारे हाथ से है वैसे ही मालिक भी कहता है कि यह महाभारत की जङ्ग करूँगा मैं मगर कराई जीव के हाथ से जावैगी।

६—दया और बख़्शिश से काम होता है यह दया

ताक़तें उस में मौजूद हैं मगर अभी जागी हुई नहीं हैं। जैसे खान पान वग़ैरह संसारी सामान व लवाज़मा यहाँ की ताक़तों को जगाने के लिये हैं वैसेही सतसंग, अभ्यास, परमार्थी कार्रवाई वग़ैरह रूहानी ताक़त को जगाने के लिये लवाज़मा हैं इन को निरंतर यानी हमेशा करते रहना चाहिये।

८—रूह से रटन किस को कहते हैं अभी इस को ख़बर ही नहीं है जब प्रेम की रमक़ यानी झलक इस में आवेगी तब इस की जीवात्मा से आप से आप नाम का उच्चारण होता रहेगा और तब शब्द साफ़ सुनाई देगा बानी में साफ़ साफ़ कह दिया है।

नाम प्रताप सुरत अब जागी। तब घट शब्द सुनाये।
शब्द पाय गुरु शब्द समानी। सुन्न शब्द सत शब्द मिलाये॥
अलख शब्द और अगम शब्द ले। निज पद राधास्वामी आये॥
पूरा घर पूरी गति पाई। अब कुछ आगे कहा न जाये॥

यानी पहले सहसदल कँवल का शब्द पीछे त्रिकुटी का शब्द इसी तरह स्थान स्थान का शब्द सुनता हुआ और गुरु स्वरूप का ध्यान करता हुआ सुधारस पान करता हुआ और लीला बिलास देखता हुआ जीव निज घर में बासा पाता है।

९—भक्ति यानी इश्क़ निर्मल होना चाहिये स्वार्थ कपट और लपेट की भक्ती कुछ काम की नहीं।

१०—जितने साध महात्मा हुए हैँ उन सभौँ ने एक ही बोल बोली है, मसलन सूरदास वग़ैरह, इन के शब्दौँ मेँ भगवन्त की भक्ती का बयान है, संसारी लोग इस बात को क्या समझ सकते हैँ, अगर किसी से बादशाहज़ादे बोलेँ चाहे उस बात की कुछ भी हैसियत न हो तो देखिये वह फूला अङ्ग नहीँ समाता है पर जो कुछ साध महात्मा कहते हैँ उस की ज़रा भी क़दर नहीँ करता। विलायत मेँ औरतेँ मर रही हैँ कि किसी सूरत से बादशाहज़ादे के साथ नाचैँ और जो कहीँ किसी को इस का मौक़ा मिल गया तो गोया उस का उद्धार हो गया।

॥ बचन २ ॥

॥ दीनता का स्वरूप ॥

दीनता का स्वरूप सच्ची ग़रज़मन्दी है जैसे मरीज़ हकीम का और नौकरी चाहने वाला हाकिम का, क्यौँकि वहाँ अपना मतलब अटका होता है, वैसे ही जिस को कि अपने जीव का कल्यान करने की ग़रज़ है वह गुरू और मालिक के सनमुख सच्चा दीन अ-

के बग़ैर कल नहीं चलती है इसी तरह प्रेम और दीनता के बिना अंतर में चाल नहीं चलती है। मालिक दीन दयाल है जब यह दीन होता है तब मालिक दया करता है। दीनता ऐसी होनी चाहिये जैसे कङ्गला भूखा प्यासा रोटी के लिये दीन अधीन होता है और सख़्त सुस्त की बरदाश्त करता है।

॥ कड़ी ॥

दीन हीन जानो अपने को। निपट नीच मानो अपने को॥
अब अहङ्कार करो क्या किससे। मौत धार दम दम में बरसे॥
जैसे जग में महा भिखारी। दीन ग़रीबी उन चित धारी॥
कोई उस को कुछ कह लेवे। मन को अपने ज़रा न देवे॥
तुम सतसंग कर क्या फल पाया। उन का सा भी मन न बनाया॥
अब ऐसा तुम्हें करना चहिये। अपने मन आधीनी धरिये।

॥ शेर ॥

वीराँ किया जब आप को बस्ती नज़र पड़ी।
और नेस्त जब कि हम हुए हस्ती नज़र पड़ी।
देखा कि ख़ाकसारी ही आली मुक़ाम है।
ज्यों ज्यों बलन्द हम हुए पस्ती नज़र पड़ी॥

॥ कड़ी ॥

मान मनी का रोग पसरिया। बड़े बने जिन मार सही।
छोटा रहे चित्त से अन्तर। शब्द माहिँ तब सुरत गई॥

३—मालिक के साथ और जो अपने से बड़े हैं

॥ कड़ी ॥

निर्धन निर्बल क्रोधिन मानी, मैं गुन अपने अब पहिचानी।
स्वामी दीन दयाल हमारे, मो सी अधम को लीन उबारे॥

४—जो कि निरआपा है वह बादशाह की भी परवाह नहीं करता है। एक रोज़ सिकन्दर डायोजिनीज़ के पास गया उस से पूछा क्या आप को कुछ चाहिये जवाब दिया कि यही चाहता हूँ कि आप तशरीफ़ ले जाइये मुझे आप का तशरीफ़ लाना बोझ मालूम होता है इसी तरह औरङ्गज़ेब सरमद के पास गया वह मस्त थे नंगे रहते थे औरंगज़ेब ने पूछा कि नंगे क्यों रहते हो जवाब दिया कि जो गुनहगार हैं उन के लिये कपड़ों की ज़रूरत है और जो गुनहगार नहीं हैं उन को तन ढकने की ज़रूरत नहीं है औरंगज़ेब ने हुक्म दिया कि इन को फाँसी चढ़ा दो और आँखें बन्द करके ले जावो, कहा कि जिन की अन्तर की आँख खुली हुई है उन की बाहर की आँख बाँध करके क्या करोगे फिर आख़िर सूली पर चढ़ गये–यह सरमद शाह दाराशिकोह के गुरू थे और उन की साध गती थी तन में उन का बन्धन नहीं था इस लिये ख़ुशी से सूली पर चढ़ना क़बूल किया और दारा शिकोह को भी वक्त लड़ाई के कहा था कि सिर दे दो कर्म कट जायगा क्योंकि बहुत आदमी

कर कार्रवाई करना और ऊपर से जो धार आ रही है उस की ख़बर न रखना और समझना कि यह मेरी ही ताक़त है और मैं ही कार्रवाई करता हूँ इसी को आपा कहते हैं ।

दीनता किस को कहते हैं यानी अपने फ़ोकस (Focus) यानी मर्क़ज़ से हटना और दूसरे के आधीन होना यानी बृत्ती का अन्तर में सिमटना इस को दीनता कहते हैं और बृती के बाहर पसरने यानी फैलने को अहङ्कार कहते हैं और जिस जगह पर यह कार्रवाई करता है उस को प्लैन औफ़ ऐक्शन (Plane of action) कहते हैं ॥

७—अभ्यास में भी आजिज़ी मुफ़ीद है यानी अपना बल पौरुष लगाना हारिज है इस की सुरत की धार उलटी बह रही है इस को अन्तर में उलटा कर ऊपर चढ़ाना है आपे याने अहङ्कार से सुरत की धार का बाहर फैलाव होता है और दीनता से अन्तर सिमटाव होता है दीनता ऐसी होनी चाहिये कि हर दिल अज़ीज़ हो जावे यानी हर कोई इस को पसन्द और प्यार करे इस को चाहिये कि अपने को किंकर समझे [किङ्कर याने जो कुछ नहीं कर सकता] ॥

॥ साखी ३ ॥

लेने को सतनाम है, देने को अनदान।
तरने को है दीनता डूबन को अभिमान॥
पीवा चाहे प्रेम रस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में दो खड्ग, देखा सुना न कान॥
जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी, तामें दो न समाएँ॥

॥ बचन ३ ॥

॥ सच्ची प्रीत का निशान क्या है ॥

जहाँ सच्ची प्रीत है वहाँ हरचन्द कि अपना कोई मतलब नहीं निकल रहा है तो भी जब तक उसको नहीं देख लेता है तब तक चैन नहीं आता है जैसे मइया की प्रीत अपने बच्चे से होती है बेटा अगर परदेश मैं है और मइया का कोई स्वार्थ उस से नहीं निकलता है तो भी उस के देखने के लिये तड़पती है वैसे ही परमार्थ मैं जहाँ कि स्वार्थ का लव लेश नहीं है सिर्फ़ दर्शन और बचन मैं प्रीति है जब तक कि इसको यह प्राप्त नहीं होते तब तक तृप्ती और शांति नहीं आती यह शुरूआत इश्क़ की है। संसार मैं भी जहाँ इश्क़ है वहाँ सिवाय अपने माशूक़ के मिलने के और कोई

जाता है खीर पूरी सब चीज़ खाने की मुहइया कर दो तो भी शुरू में जो माँस खाने की आदत है वह जब तक कि दूसरे घर में जाकर हड्डी लाकर नहीं चूसता चैन नहीं आता है जो कि निकृष्ट हैं उन के लिये खान पान वग़ैरा स्वार्थ का इन्तज़ाम किया जाता है मगर उस में किसी वक़्त तबादला ज़रूर होता है।

४—मुक़द्दम बाहर में दर्शन और वचन हैं और अंतर में भी रूप और शब्द हैं यही रूप और शब्द इस के संग चलते हैं और अनामी पद में जहाँ कि रूप और शब्द नहीं हैं वहाँ पहुँचाते हैं इस को चाहिये कि प्रेम स्वरूप होजावे मालिक भी प्रेमस्वरूप है सुर्त भी प्रेम रूप है दोनों गुप्त हैं मगर यह अभी तन मन और आपे का रूप हो रहा है यह पर्दे जब हटाये जावेंगे यानी आपे को वार दिया जावेगा तब इसका रूप गुरू का रूप और नाम का रूप सब एक हो जावेंगे यानी सिर्फ़ प्रेम रह जावेगा—क़ौल नाभा जी—

भक्त भक्ति भगवंत गुरु, नाम चतुर वपु एक,
तिन के पग बंदन करत, नाशे बिघ्न अनेक।

॥ कड़ी ॥

अपने मालिक पै तू दे आपे को वार।
जब नहीं तू तब रहा मालिक दयार॥

॥ वचन ४ ॥

॥ भक्ती और सरन की महिमा ॥

सन्त मत मैं भक्ती की महिमा और मुख्यता की गई है जहाँ और सब गुन हैं भक्ती नहीं है तो कुछ नहीं है और जिस मैं कोई गुन नहीं है भक्ती है तो सब कुछ है वही भक्त है और वही भगवन्त का प्यारा है अगर सुरत शब्द अभ्यास भी करता है पर यह अंग नहीं है तो ख़ाली और थोथा है।

॥ चौपाई ॥

भक्तिहीन विरञ्च क्यों न होई। सब जीवन सम प्रिय मम सोई॥
भक्तिवन्त जो नीचहु प्रानी। प्रान से अधिक सो प्रिय मम बानी॥

अर्थ—जो ब्रह्मा भी है और उस मैं भक्ती यानी चरनौं का प्रेम नहीं है तो सब जीवौं के समान मुझ को प्यारा है लेकिन जो कोई कैसा ही नीच हो और उस के मन मैं भक्ती यानी चरनौं का प्रेम है वह मुझ को अपने प्रानौं से भी ज़ियादा प्यारा है।

भक्त जन भक्ती की रीत पल २ पालता है पल २ पालना क्या है, निस दिन चरन सेव करना यानी यही चाहता है कि चरन मिलैं और न सत्तलोक चाहता है न अनामी पद और जहाँ कोई दरजा या

तो वह बेहतर है—गौतम की नार जो सिला हुई थी उस पर जब रामचन्द्र ने अपना चरन छुवाया तब जागी और अपना भाग सराहा कि अगर यह ज़िल्लत न होती तो चरन कैसे मिलते—जिस को सब सुख है और भक्ती नहीं है तो सब धूल है और जिस को सब दुख हैं और भक्ती है उस को सब आनंद है

३—भक्ति सरन स्वरूप है यानी जहाँ भक्ति है वहाँ सरन है कृष्ण महाराज ने भी गीता में अर्जुन को कहा है कि सब कर्म धर्म छोड़ कर एक मेरी सरन दृढ़ करो ॥

॥ श्लोक ॥

सर्व धर्मान् परित्यज्य, मामेकं शरणं व्रज ।

अहंत्वां सर्व पापेभ्यो, मोक्ष इष्यामि मा शुच ॥

अर्थ—सब धर्मों को यानी लौकिक और बेदिक धर्मों को छोड़ कर एक मेरी सरन को प्राप्त करो ।

अर्जुन शंका करता है कि लौकिक और वेदिक यानी लोक के और वेद के धर्मों को छोड़ दूँगा तो मुझ को पाप होगा, इस का जवाब कृष्ण महाराज दूसरी कड़ी में देते हैं कि—

"मैं तुझ को सब पापों से छुडा दूँगा तू सोच मत कर"

४—सरन किस को कहते हैं दूसरे के आधीन होना उसी को सरनागत कहते हैं अपने आपे की रक्षा और

॥ बचन ५ ॥

॥ प्रीत का इज़हार क्या है ॥

प्रीत का इज़हार याद है—जब तक कि याद नहीं है तब तक सच्ची और पूरी प्रीत नहीं है—ऐसी प्रीत कब आती है जब परमार्थ का असर इस के अंतर मैं होता है। अगर कोई सतसंग भी करता है नेम से अभ्यास भी करता है, सेवा भी करता है, मगर वह जो अंतर की याद है वह नहीं है तो कुछ नहीं है—ज़ाहिर है कि अभी परमार्थ का असर नहीं हुआ है सच्ची प्रीत का निशान यह है कि याद और खटक हरदम बनी रहे जैसे परदेस मैं जब कोई जाता है तो चित्त उस का अपने कुटुम्बियौं मैं लगा रहता है चाहता है कि किसी तरह जल्दी से काम ख़तम कर के चला जाऊँ एक दिन इस को बरस के बराबर नज़र पड़ता है वैसे ही परमार्थ मैं भी उस देश के जाने की बिरह और खटक अंतर मैं होनी चाहिये पहिले उस देश और मालिक की ख़बर इस को होनी चाहिये बाद अज़ाँ उस से मिलने की बिरह और तड़प होगी—तुलसी साहब ने कहा है—

अन्तर में प्रीत जागती है और जो गुरुमुख हैं वह सतगुरु के सन्मुख आने से ही फ़ौरन जाग उठते हैं।

३—आम जीवों को कब ऐसी प्रीत आती है जब उन को गहरा दुख गहरा संताप होता है ज़ेरबारी और लाचारी होती है हर तरह तंग, ख़्वार, और ख़स्ता होते हैं तब संसार से घबराते हैं तब चित्त को चरनों में लगाते हैं मगर मन का ऐसा स्वभाव है कि जब तक दुख है तब तक तो चेतता है और जहाँ दुख गया फिर भूल जाता है और वही कार करता है।

॥ कड़ी ॥

दुखों से डर कर कुछ कुछ लगता।
गये दुख वोंही तुरत फड़कता॥

इस लिये जिस पर मालिक की निज दया है उस पर दुख और संताप का दौरा मुतवातिर चलाये रहता है ज़ेरबारी और लाचारी से हर तरह जब तंग होता है तब इस की आसा और मंसा संसार से हट कर मालिक की तरफ़ रुजू होती है—

गुरु राखो हिरदे माहीं। तो मिटे काल परछाहीं॥
भोगों की आसा त्यागो। मन्सा तज जग से भागो॥
आसा गुरु शब्द लगाओ। मन्सा गुरु पद में लाओ॥
आसा और मन्सा मोड़ा। मन इन्द्री गुरु में जोड़ी॥
दिन रात रहे गुरु ध्याना। गुरु बिन कोइ और न जाना॥
गुरु स्वाँस गिरास न बिसरे। तू पल पल गा गुरु जस रे॥

बेजान हो गये और जो कुछ भक्ति थी पच पुच गई, ज़ाहिर है कि वह स्वार्थी हैं, निर्मल भक्ति वह है जिस मैं कोई लपेट न हो और वही मालिक को पसंद और प्यारी है और मालिक भी वक़्तन फ़वक़्तन इस का इम्तिहान लेता है कि किस क़दर सतसंग के काम मैं इस की तवज्जह है और किस क़दर अपने स्वार्थ मैं अटका हुआ है—चूँकि यह सतसंग सच्चा सतसंग है यानी कुल मालिक राधास्वामी दयाल का सतसंग है वह जैसे तैसे इस के मन को तंग कर के और खैंचाखाँची कर के उद्धार ज़रूर करेंगे।

६—सवाल—गुरुमुख किस को कहते हैं।

जवाब—गुरुमुख एक ही होता है वैसे गुरुमुख यानी जिस ने गुरू की मुख्यता मुक़द्दम रक्खी है वह भी गुरुमुख है मगर बानी मैं जो कहा गया है कि—

गुरु मुख की गति सब से भारी।
गुरु मुख कोटिन जीव उबारी॥
कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ।
कोई न जाने किस समझाऊँ॥

वह गुरुमुख और है वह मालिक की निज अंस है एक तो भण्डार मैं से चेतन्य धार आके नर शरीर मैं कार्रवाई करती है उस को औतार कहते हैं दूसरी उस की निज अंस आती है जिस को पुत्र या निज

७—ब्रह्म का जो अवतार होता है उस को कला-धारी कहते हैं वैसे ही कुल मालिक का जो कला-धारी है उस को गुरुमुख कहते हैं यानी उस को सर्व शक्ती हासिल होती हैं वह तो मालिक का रूप है उस के ज़रिये से सब जीवों को फ़ैज़ पहुँचता है जो ख़ास करके सत्तसंग में लगाये गये हैं उन को धुरधाम तक पहुँचाते हैं और बाक़ी जो इधर उधर के हैं उन को सत्तलोक के दीपों में कहीं न कहीं निवास देते हैं।

॥ बचन ६ ॥

॥ प्रेम की महिमा ॥

संत मत प्रेम मार्ग यानी इश्क़ का मत है बार बार तवज्जह का किसी जानिब रूजू होना इस को प्रेम कहते हैं—जिस में कि प्रेम है वह कभी ख़ाली नहीं बैठता भजन ध्यान सुमिरन पोथी का पाठ चर्चा करना या सुनना यही कार करता रहता है अभ्यास जो बताया गया है वह भी सहज जोग है हर कोई कर सकता है हठ जोग नहीं है, मसलन प्राणायाम

दियासलाई में मसाला लगा हुआ है बिना रगड़े रोशनी प्रगट नहीं होती है वैसे ही पहले प्रेम इस को सुरत में जागना चाहिये तब प्रेम की धार से मेला होगा, मगर पाँच दूत और आपे का पर्दा पड़ा हुआ है इस लिये प्रेम प्रगट नहीं होता है ॥

३—प्रेम दो क़िस्म का है एक समझौती का दूसरा ज़ाती यानी एक अन्तःकर्ण के स्थान का और दूसरा सुर्त के घाट का—जब तक समझौती का प्रेम है तब तक जो परमार्थी कार्रवाई है वह शुभकर्म में दाख़िल है और जब ज़ाती प्रीत जागती है तब उपाशना यानी भक्ती शुरू होती है। मन रसों का रसिया है-जैसे संसार में जिस में इस को रस आता है वही काम करता है वैसे ही परमार्थ में जब इस को रस आता है तब परमार्थी कार्रवाई ख़ुशी और उमंग से करता है। प्रेम सार यानी तत्व वस्तु है और सब यानी जोग वैराग ज्ञान ध्यान लवाज़मे हैं जैसे वस्तर भूषन आराइश के लिये होता है। प्रेम मग़ज़ है और सब छिलका हैं मिंगी से ख़ाली हैं, प्रेम अनाज और दरख़्त का मूल यानी जड़ है और सब भूसा और डालियाँ हैं।

४—जैसे संसारी भोग भोगने के वक़्त जो कोई माने और हारिज होता है वह बुरा लगता है बल्कि दुश-

भाग बढ़ेगा तब एक रोज़ इस मैं भी ऐसा प्रेम पैदा हो जायगा—

॥ कड़ी ॥

सुरतवन्त अनुरागी सच्चा, ऐसा चेला नाम कहा।
गुरु भी दुर्लभ चेला दुर्लभ, कहीं मौज से मेल मिला॥

६—संत मत मैं प्रेम की महिमा है प्रेम से बिकार सब दूर होते हैं जैसे एक चिनगी से सब घास का ढेर भस्म हो जाता है एक प्रेम हो तो फिर भजन का भी सोच न करे—

॥ कड़ी ॥

प्रेम अग्नी अपने हिरदे बालिये। फ़िक्र भजन और बन्दगी का जालिये॥

अगर रहनी गहनी और करनी अच्छी है प्रेम नहीं है तो भी ख़ाली और धूल है—

॥ कड़ी ॥

प्रेम बिना सब करनी फीकी।
नेकहु मोहिं न लागे नीकी।
घट धुन रस दीजै।

॥ कड़ी ॥

जोग बराग ज्ञान सब रूखे। यह रस उन में दीखे न ताहि॥
बड़ भागी कोइ बिरला प्रेमी। तिन यह न्यामत मिली अधिकाय॥

॥ कड़ी ॥

हुई मैं राधास्वामी चरनन दास। ज्ञानी और जोगी खोदें घास॥

॥ कड़ी ॥

पी ले प्याला हो मतवाला प्याला नाम अमीं रस का रे।

॥ कड़ी ॥

प्रेम २ सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय॥

और जैसे यरक़ान यानी कंवल की बीमारी वाली आँखों को सब पीला नज़राई पड़ता है और नशेबाज़ को दरख़्त वग़ैरह झूमता नज़र पड़ता है वैसे ही प्रेमी को हर जगह मालिक नज़राई देता है—

॥ कड़ी ॥

जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है

॥ मिसरा ॥

बजुज़ मस्ती व मदहोशी दिगर चीजे़ नमी दानम।

८—पहले बिरह पीछे प्रेम आता है बिरह में तपिश और प्रेम में सीतलता है--

॥ साखी ॥

बिरह जलन्ती देखकर, साईं आये धाय।
प्रेम बूँद सों छिड़क के, जलती लई बुझाय॥

॥ साखी ॥

बिरह जलन्ती मैं फिरूँ, मोहिं बिरह का दुक्ख।
छाँय न बैठूँ डरपती, मत जल उट्ठे रुक्ख॥

जब प्रेम आवे ऐसी चाह हो कि प्रेम बढ़ता ही जावे शांति न आने पावे--

करना चाहिये एक रोज़ ज़रूर प्रेम की बख़्शिश होगी ॥

॥ बचन ७ ॥

जौहर यानी प्रेम और आपे की कार्रवाई का फ़र्क़ ॥

फूल इस बात का मुहताज नहीं है कि लोग समझैं कि उस मैं ख़ुशबू है, ज़ोति यह नहीं चाहती कि औरौं को ख़बर हो कि मैं प्रकाशित हूँ, दरख़्त जिस मैं मेवा इस क़द्र ज़ियादा है कि उस की डालियाँ नीचे झुक जाती हैं वह नहीं चाहता है कि लोगौं को मालूम होवे कि मैं फ़लदार हूँ, ऐसे ही जिस मैं कि जौहर यानी प्रेम है वह इस बात का ख़्वास्तगार नहीं होता कि आलम मैं आशकारा होवे कि मुझ मैं जौहर है वह अपने मैं आप मगन है, जैसे मालिक अपने मैं आप सरशार और मगन है वैसे ही उस की निज अंश जिस मैं जौहर है अपने प्रेम दीनता ग़रीबी और रस मैं महूव और मसरूर है अपने औसाफ़ का इज़हार आप नहीं करता अल-बत्ता फूल की ख़ुशबू जब भरपूर होती है तब आप

की कार्रवाई है—जो कि समझदार हैं उन को नुमाइश से नफ़रत आती है। बाज़े लोग अपने हसब नसब और गुन की महिमा और तारीफ़ आप करते हैं और इस से उन को तसकीन आती है ऐसे जीव निहायत ओछे पात्र हैं और समझना चाहिये कि आपे की गिरफ़्त में हैं, और जिस में कि जौहर है उस में नम्रता और दीनता है जिस क़दर बन पड़ता है अपने औसाफ़ को छिपाता है, जैसे लोग धन हीरा जवाहिर वग़ैरह औरों से छिपाये रखते हैं वैसे ही अपने गुनों को भक्त जन छिपाये रखता है—यह जौहर और आपे की कार्रवाई का फ़र्क़ है और यही इस चर्चा का मतलब है।

४—जब किसी की तारीफ़ की जाती है तो अक्सर लोग मगन होते हैं और अंतर में फूल जाते हैं और ख़ुशामद करने वाले को सलाम करते हैं कि आप ने क़दरदानी की लेकिन जोकि भक्त जन हैं उन की जब कोई तारीफ़ करता है तो मुँह मोड़ लेते हैं बल्कि रो देते हैं और सराहने वाले को अपना दुशमन समझते हैं—भक्त जन के लिये तो यह हुक्म है—

॥ कड़ी ॥

गुरु की ताड़ और मार सह धर कर पियार।
मूर्खों की अस्तुती पर ख़ाक डार ॥

पति मिले वह सब सुहागिनें यानी प्रेमी सुरतें उन के चरणों में खेलती हैं और अचरज रूपी फाग उन के साथ रचाती हैं यानी भक्ति का विलास करती हैं। जैसे होली में धूल उड़ाई जाती है वैसे तन मन धन जो धूल के समान हैं उन को भक्त जन उड़ाते हैं यानी तन मन धन को सतगुरु के चरणों में निछावर करते हैं—और जैसे रंग से होली खेल कर फगुआ लिया जाता है वैसे ही भक्त जन प्रेम रूपी रंग घोलते हैं और गुरु के चरणों में डाल कर मगन होते हैं यानी उन के चरणों में प्रेम प्रीत कर के मगन होते हैं और फगुआ यानी भक्ति दान ले कर सब कोई अपना काम बनाते हैं। ऐसी होली जो कोई सतगुरु के साथ खेलता है यानी प्रेम प्रीत करता है उस को राधास्वामी दयाल अपने निज चरणों में मिला देते हैं।

॥ बचन ९ ॥

॥ सरन की महिमा ॥

सरन का दर्जा बड़ा भारी है बड़े भाग उन के हैं जिन को सरन प्राप्त है। जब तक बंधन है तब तक

जो कुछ करें करें राधास्वामी,
और न कोई दूजी आत ।

मगर सिर्फ़ ज़बानी कहने से कुछ नहीं होता, चाहिये कि सरीहन इस को नज़राई पड़े कि मैं कुछ नहीं कर सकता हूँ सब उन्हीं के हुक्म से होता है। राधास्वामी दयाल जिस पर निज दया फ़र्माते हैं उस का बल पौरुष सब छीन लेते हैं और जो अङ्ग जिस में ज़बर है वही परगट करके सफ़ाई करते हैं, मसलन कोई क्रोधी है या कामी है या किसी में ईर्षा और बिरोध प्रबल है तो उसी अंग में ज़ियादा बरतावा कराके उस अङ्ग को प्रगट करते हैं और बाद इस के जो रंज अफ़सोस और पछतावा होता है उस से इस का मसाला ख़ारिज होता है और सफ़ाई होती जाती है और यह समझता है कि मैं पहले से भी गया गुज़रा हो गया मगर असल में दया है यानी सफ़ाई हो रही है ।

३—भक्त जन जिसको कि परख पहिचान है अपने तईं आपे और करम में गिरफ़्तार देखता है हरचन्द दुख तकलीफ़ उठाता है मगर सरन का सहारा और आधार रखता है—वह जब और लोगों को इसी तरह आपे और कर्म की क़ैद में मुबतिला देखता है तब उन पर भी दया भाव लाता है कि किसी सूरत से

गुरु सरन आज मैं पाई। मेरे आनँद अधिक बधाई॥

जब तक कि कर्म नहीं चुका है तब तक सरन पूरी नहीं है यानी जिस क़दर जिसके काल कर्म का कर चुका हुआ है उसी क़दर उस की सरन है और ज़ितना बाक़ी है उतनी ही सरन मैं कसर है।

(१)

सतगुरु सरन गहो मेरे प्यारे। कर्म जगात चुकाय।

(२)

कोई गहो गुरु की सरन सम्हार।

यह शब्द बड़े काम के हैं और इन मैं इस चर्चा का सार है।

॥ बचन १० ॥

॥ पतिबर्त यानी गुरुमुखता का बरनन ॥

पतिबर्त्ता स्त्री की मिसाल गुरुमुख से सर्वाङ्ग करके पूरी और ठीक होती है—जैसे जो पतिबर्त्ता स्त्री है उस के पति की जो ख़्वाहिश होती है सो उस की भी होती है और अपने दुख सुख का वह कुछ भी ख़याल नहीं करती है जिस मैं उस का पति राज़ी

३—जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पति के घर में रहती है और जो कुछ सामान पती ने उस के लिये मौजूद किया है उस में राज़ी रहती है उसी तरह जो गुरु-मुख है उस के लिये यह संसार गोया मालिक का घर है उस में से जो कुछ थोड़ा बहुत मालिक ने उस को दिया है उस में राज़ी रहता है कभी और ज़ि-यादा होने की चाह नहीं उठाता है—गुरुमुख मालिक का निज अंस है उस की गति भारी है उस के संग बहुतेरे जीवों का उद्धार हो जाता है—

॥ कड़ी ॥

गुरुमुख की गत सब से भारी। गुरुमुख कोटिन जीव उबारी॥
कहँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ। कोई न जाने किस समझाऊँ॥

४—जैसे कोई स्त्री बिभचारनी होती है वैसे ही जो कि मत में शरीक होकर और उपदेश लेकर फिर छोड़ जाते हैं वे मनमुख हैं बाज़ की स्त्री ऐसी लड़ाकी होती है कि वह उस के ख़ौफ़ से सतसंग छोड़ देता है—जैसे एक शख़्स था जोरू के डर से भाग गया और सतसंग भी उसने छोड़ दिया—ऐसे जीव मनमुख कहलाते हैं यानी मन की समझौती पर चलते हैं, वे देर अबेर ज़रूर धोखा खावेंगे और गिरते पड़ते रहेंगे। सतसंगी को चाहिये कि जिस वक़्त रूखा फीका पन दुख और तकलीफ़ उस को हो उस वक़्त अपनी

सब की [illegible] ज़रूर की जावेगी और गढ़त के कई नमूने हैं जैसे मामूली पत्थर को स्थूल औज़ारों से गढ़ते हैं और जो संगमरमर का पत्थर है उस को सूक्ष्म औज़ारों से, और सोना या हीरे के लिये और ज़ियादा नाज़ुक औज़ार इस्तेमाल करते हैं—ऐसे ही करमों के अनुसार हर एक की गढ़त होती है जो कि भक्त जन हैं उन को ज़ियादे तकलीफ़ नहीं होती है और जिस क़दर भक्ती पक्की होती जावेगी उतना-ही उन का आपा दूर होगा और सुर्त रूपी आपा क़ायम होता जावेगा।

६—परमार्थियों का अगर किसी वक़्त आपस में लड़ाई झगड़ा भी होता है तो उस में से ज़रूर कोई न कोई परमार्थी फ़ायदा निकलता है मसलन अगर कोई लड़कर सतसंग छोड़ जावे तो जैसे बाग़ की घास को जब माली निकाल देता है तब जो और पौदे हैं उनकी परवरिश ज़ियादा होती है उसी तरह ऐसे लोगों के छोड़ जाने से सतसंग की रौनक़ बढ़ती है। भक्त जन अगर किसी वक़्त भूल चूक भी करता है तो पछताता है झुरता है इस से चेतन्यता बढ़ती है और फिर वह आइन्दा होशियारी के साथ अपना बरताव करता है जब उस की पूरी तरह से गढ़त और सफ़ाई हो जाती है तब उस के मस्तक में शब्द

॥ साखी २ ॥

पतिबर्ता के एक तू, तुझ बिन और न कोय ।
आठ पहर निरखत रहे, सोइ सुहागिन होय ॥

॥ साखी ३ ॥

पतिब्रर्ता पति को भजे, पति भज धरे बिश्वास ।

आन दिशा चितवे नहीं, सदा जो पिउ की आस ॥

और जो कि बिभिचारन है यानी मन के बिकारों मेँ जिसका बरताव है उस की बात दूसरी है—

॥ साखी १ ॥

नार कहावे पीव की, रहे और संग सोय ।

जार सदा मन में बसे, खसम ख़ुशी क्यों होय ॥

॥ साखी २ ॥

बिभिचारन बिभिचार में, आठ पहर हुशियार ।
कहैं कबीर पतिबर्त बिन, क्यों रीझे भरतार ॥

८—जैसे यहाँ सतसंग मेँ जो औरत लड़के वाली है जब लड़का रोता है तब निकाली जाती है ऐसे ही सत्तलोक से भी सुरतेँ जिनमेँ कि माया की मिलौनी थी जब वह प्रगट हुईं तब निकाली गईं क्योँकि वहाँ के हंसोँ के आनन्द मेँ फ़रक़ पड़ता था ऐसे ही यहाँ सतसंग मेँ लड़कोँ के रोने से सतसंग का जो रस और आनन्द है उस मेँ फ़र्क़ पड़ता है। औरतोँ को जब सतसंग का हर्ज आप मालूम पड़ेगा तब लड़कोँ से

सब की गढ़त ज़रूर की जावेगी और गढ़त के कई नमूने हैं जैसे मामूली पत्थर को स्थूल औज़ारों से गढ़ते हैं और जो संगमरमर का पत्थर है उस को सूक्ष्म औज़ारों से, और सोना या हीरे के लिये और ज़ियादा ना.ज़ुक औज़ार इस्तेमाल करते हैं—ऐसे ही करमों के अनुसार हर एक की गढ़त होती है जो कि भक्त जन हैं उन को ज़ियादे तकलीफ़ नहीं होती है और जिस क़दर भक्ती पक्की होती जावेगी उतना-ही उन का आपा दूर होगा और सुर्त रूपी आपा क़ायम होता जावेगा।

६—परमार्थियों का अगर किसी वक़्त आपस में लड़ाई झगड़ा भी होता है तो उस में से ज़रूर कोई न कोई परमार्थी फ़ायदा निकलता है मसलन अगर कोई लड़कर सतसंग छोड़ जावे तो जैसे बाग़ की घास को जब माली निकाल देता है तब जो और पौदे हैं उनकी परवरिश ज़ियादा होती है उसी तरह ऐसे लोगों के छोड़ जाने से सतसंग की रौनक़ बढ़ती है। भक्त जन अगर किसी वक़्त भूल चूक भी करता है तो पछताता है झुरता है इस से चेतन्यता बढ़ती है और फिर वह आइन्दा होशियारी के साथ अपना बरताव करता है जब उस की पूरी तरह से गढ़त और सफ़ाई हो जाती है तब उस के मस्तक में शब्द

॥ साखी २ ॥

पतिबर्ता के एक तू, तुझ बिन और न कोय ।
आठ पहर निरखत रहै, सोइ सुहागिन होय ॥

॥ साखी ३ ॥

पतिबर्ता पति को भजे, पति भज धरे बिश्वास ।
आन दिशा चितवे नहीँ, सदा जो पिउ की आस ॥

और जो कि बिभिचारन है यानी मन के बिकारौँ मैँ जिसका बरताव है उस की बात दूसरी है—

॥ साखी १ ॥

नार कहावे पीव की, रहे और संग सोय ।
जार सदा मन मेँ बसे, ख़सम ख़ुशी क्योँ होय ॥

॥ साखी २ ॥

बिभिचारन बिभिचार मेँ, आठ पहर हुशियार ।
कहैँ कबीर पतिबर्त बिन, क्योँ रीझे भरतार ॥

८—जैसे यहाँ सतसंग मैँ जो औरत लड़के वाली है जब लड़का रोता है तब निकाली जाती है ऐसे ही सत्तलोक से भी सुरतैँ जिनमैँ कि माया की मिलौनी थी जब वह प्रगट हुईं तब निकाली गईं क्यौँकि वहाँ के हंसौँ के आनन्द मैँ फ़रक़ पड़ता था ऐसे ही यहाँ सतसंग मैँ लड़कौँ के रोने से सतसंग का जो रस और आनन्द है उस मैँ फ़र्क़ पड़ता है । औरतौँ को जब सतसंग का हर्ज आप मालूम पड़ेगा तब लड़कौँ से

उलटी सुल्टी हालतें मौज से इस के परख करने के लिये होती हैं, इस से यह मन पक्का होता है।

दृष्टांत २–एक स्त्री की बात है कि उस का पति कुष्टी था और वह पतिव्रता थी और तन मन धन से पति की सेवा करती थी। एक रोज़ उस के पति ने किसी वेश्या को देखा और उस पर मोहित हो गया। अपनी स्त्री से कहा मुझे इस वेश्या के घर ले चल स्त्री बड़ी खुशी से, उस को अपनी चड्ढी पर चढ़ा कर ले गई। दुनिया की स्त्रियाँ तो ऐसी बात पर अपनी जान दे देती हैं लेकिन उसने तो तन मन धन अपने पति के अरपन किया था सो बहुत ही ख़ुशी से उस की आज्ञा मानी। जब वेश्या के घर पहुँची तब मालिक उस पर प्रसन्न हुआ और अंतर में उस को प्रेरना हुई कि जो कुछ चाहे वह माँग ले स्त्री ने कहा कि जो मेरे पति की इच्छा वह मेरी भी इच्छा है तब पति को प्रेरना हुई। उस ने कहा जो मेरी माशूक़ यानी वेश्या की इच्छा वही मेरी इच्छा है फिर वेश्या को प्रेरना हुई कि जो कुछ चाहे माँग उस ने ख़याल किया कि मेरा तो यार सारा शहर है सब का उद्धार होवे तो अच्छा है पस उस की माँग पर फ़ौरन सारे शहर का उद्धार हुआ। अब देखिये सिर्फ़ एक भक्तिन के परताप से सारा नगर तर गया

मन चूर होगा और तब ही चरनधूर होगा—और जब चरनधूर हो जावेगा तब हर हालत में चाहे उल-टी हो चाहे सुलटी मालिक की मौज अनुसार बर-तेगा और उस में राज़ी रहेगा—और जब अन्तर का रस आवेगा. तब निहायत ही मगन हो जायगा और मालिक का शुकराना अदा करेगा और तन धन जो कुछ यहाँ के पदारथ हैं सब चरनों पर क़ुरबान और न्यौछावर कर देगा और फिर इस तरफ़ के भोगों पर निगाह भी नहीं करेगा। दुनिया में भी जो कोई मदद करता है तो लोग उस के शुकरगुज़ार होते हैं और वह शख़्श उन को प्यारा लगता है, इसी तरह अन्तर में जब सहारा मिलता है और पर-मानन्द प्राप्त होता है तब मालिक का शुकराना अदा करता है और उलटी सुलटी हालत जो कुछ आयद होवे उस में रंज नहीं करता बल्कि उस में अपना नफ़ा समझता है और यक़ीन करता है कि मेरा प्रीतम जो कुछ करेगा उस में फ़ायदा ही होगा बल्कि दुख और तकलीफ़ जब होती है तब और ज़ियादा प्रीत मालिक के चरनों में उस की पक्की होती है।

२—दुनिया में भी जहाँ जिस की सच्ची मुहब्बत है वहाँ दुख और तकलीफ़ जो कुछ पेश आती है उस

मन चूर तब होगा जब आपा दूर होगा, और जब आपा दूर होगा तब यह सूर होगा, तब तूर सुनेगा, नूर झलकेगा, मूर से मिलेगा, और पूरे पद को जाके प्राप्त होगा।

३—चरन सहसदल कँवल में हैं जब यह वहाँ पहुँचे तब चरनधूर होवे—जैसे पानी को आग देते हैं तब भाप और गैस रूप होकर ऊपर चढ़ता है ऐसे ही मन का जहाँ थाना है वहाँ उस को भी जब बिरह की आग लगेगी तब सूक्षम हो कर ऊपर की तरफ़ चढ़ेगा और जाकर सहसदल कँवल में चरनधूर होगा। सतसङ्ग करके मन को जब तोड़ेगा तब क़ाबिल बनेगा—

सतसँग करना मन तोड़ सरन सन्तन की।
अन्तर अभिलाषा लगी रहै चरनन की॥

४—जो कि चरनधूर हुआ है उस ने जिस वक़्त कि ध्यान की कमान खैंची यानी गुरु स्वरूप का ध्यान किया और अन्तर में स्वरूप प्रगट हुआ फ़ौरन उस की सुरत जैसे तीर छूटता है वैसे ही अन्तर में चढ़ती है और जैसे बाहर जब तीर छोड़ते हैं तो निशाना बाँधते हैं वैसे ही सहसदलकँवल का जो शब्द है वह इस का निशाना है, त्रिकुटी में गुरु स्वरूप का दरशन होता है, सत्तलोक में सत्त शब्द से मेल होता है

और तकलीफ़ हुआ तो बिलकुल अभाव ले आता है—इस तरह की हालत इस पर अकसर गुज़रती रहती है।

६—कोई तो ऐसे हैं कि घंटे दो घंटे अभ्यास करते हैं पर उस में ऊँघते और गुनावन करते रहते हैं लोग समझते हैं कि बड़े अभ्यासी हैं मगर हैं असल में कोल्हू के बैल कि बैठे घर ही में हैं और समझते हैं कि हम पचास कोस चले हैं—

आसन मारे क्या हुआ, मरी न मन की आस।
तेली केरा बैल ज्यों, घर ही कोस पचास॥

इस तरह न प्रेम आता है और न अन्तर में चाल चलती है उलटा अहङ्कारी होता है और जो दो घंटे अभ्यास दुरुस्ती से बने तो प्रेम में रँग जावे—इस से तो बेहतर है जो कि पाँच ही मिनट भजन में बैठता है पर जिस वक़्त तवज्जह चरनों में जोड़ी फ़ौरन मन निश्चल हो गया और रस आने लगा। राधास्वामी दयाल ने गुरुभक्ती पर ज़ियादा ज़ोर दिया है इस से सहज में काम बनता है और प्रेम बढ़ता है और जो कि गुरु भक्ती की महिमा नहीं जानते और कोल्हू के बैल के मुआफ़िक़ दो दो घंटे अभ्यास करते हैं असल में उन को सतसंग की कसर है।

॥ कड़ी ॥

प्रिथम सीढ़ी भक्ति गुरु की। दूसर सीढ़ी सुरत नाम की॥

८—अब देखिये हर तरह की तकलीफ़ झेलने को तइयार है भक्त के लिये इस से बढ़ कर और क्या है, मगर मालिक नहीं चाहता है कि भक्त जन को ऐसी तकलीफ़ होवे। वह सिर्फ़ यह चाहता है कि संसारी चाह न उठावे, मामूली तौर पर अपना गुज़ारा करे, उलटी सुलटी हालत जो कुछ होवे उस में मौज पर राज़ी रहे भजन और भक्ति करता रहे—इस तरह आहिस्ता आहिस्ता काम बन जायगा पर जब तक मन चूर नहीं होगा चरन धूर नहीं होगा—इस में इस का चारा नहीं है यह निज दात है, जिस का भाग है उस को यह दात मिलती है, सो इस का भाग भी सहज २ गुरू बख़्शेंगे—

भाग बिना क्या करे बिचारी। यह भी भाग गुरू से पा री॥
राधास्वामी कही जुक्ति यह सारी। उन के चरन से प्रेम लगा री॥

॥ बचन १२ ॥

क़ुदरती कारख़ाना देख कर कि कैसे ज़मीनी और आसमानी पसारा चल रहा है कौन इस का करतार है कहाँ वह छिपा हुआ है कैसे उस से मिलें, जिस घट में ऐसे पुरुष के दर्शन और दीदार की बिरह

२—जब तक बंधन है तब तक बिरह और प्रेम नहीं जागते हैं और यह काम जल्दबाज़ी का भी नहीं है मंज़िल दूर दराज़ है ऊँची गैल और राह रपटीली है डिग जाने का ख़तरा है।

॥ साखी ॥

साहब का घर दूर है, जैसे लम्बी खजूर।
चढ़े तो चाखे प्रेम रस, गिरे तो चकनाचूर ॥

बन्धन भारी है कटने में अरसा चाहिये जैसे गाय खूँटे में बँधी हुई इधर उधर चरती और बिचरती है और खूँटे की ख़बर नहीं है वैसे ही जीव की भी हालत है और जब बन्धन कटते हैं तब जैसे जहाज़ लंगर से छूटता है, पक्षी पिंजरे से निकलता है, ग़ुब्बारा रस्सी से छूटता है या पतंग आकाश में चढ़ती है ऐसे ही सुरत अधर में उड़ती है—

॥ कड़ी ॥

नाम रँगीला दुलहा तेरा, उड़ो मगन अस चंग।

३—कहने का मुद्दा यह है कि विरह सुरत में होना चाहिये तब नाम से मेला होगा। और जो ऊपर से दया की धार आती है, यानी अमृत की धार जो टपकती है, उस की कैफ़ियत यह है कि जैसे कोई खाने की चीज़ देखने से ज़बान पर लुआब आता है इसी तरह सुध रस टपकता है पर जब तक अन्तर में

॥ लटका ॥

व्याकुल विरह दिवानी, झड़े नित नैनन पानी ।
हर दम पीर पिया की खटके, सुध बुध वदन हिरानी ॥
होश हवास नहीं कुछ तन में, वेदन जीव भुलानी ।
वहु तरङ्ग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की वानी ॥
नाड़ी वैद विथा नहि जाने, क्यों औषध दे आनी ।
हिये में दाग़ जिगर के अन्दर, क्या कहूँ दर्द बखानी ॥
सतगुरु वैद विथा पहिचाने, बूटी है उन की जानी ।
तुलसी यह रोग रोगिया बूझे, जिन को पीर पिरानी ॥

५-जैसे पतंग दीपक पर आशिक़ होता है और अपने तन को जला देता है वैसे ही बिरही अपना मन यानी आपा भस्म करता है ।

॥ चौपाई ॥

तुम दीपक मैं भई हूँ पतङ्गा । भस्म किया मन तुम्हरे संगा ॥
तुम सूरज मैं किरनी आई । तुम से निकसी तुमहिं समाई ॥

पतंग दीपक पर आशिक़ है मीठा के निकट नहीं जाता है ऐसे ही बिरही मालिक से मिलना चाहता है पदार्थ का गाहक नहीं है ; दाता से दाता ही को माँगना चाहिये दात में नहीं अटकना चाहिये और जो दात चाहेगा तो न दात ही मिलेगी और न दाता मिलेगा । अगर रस लेने या सिद्धि शक्ति हासिल करने या कोई स्थान खुलने की ख़ाहिश है तो भी स्वारथी है, ऋषि मुनि सब अपने आपे के रस और

॥ लटका ॥

व्याकुल विरह दिवानी, झड़े नित नैनन पानी ।
हर दम पीर पिया की खटके, सुध बुध वदन हिरानी ॥
होश हवास नहीं कुछ तन में, वेदन जीव भुलानी ।
बहु तरङ्ग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की बानी ॥
नाड़ी वैद बिथा नहि जाने, क्यों औषध दे आनी ।
हिये में दाग़ जिगर के अन्दर, क्या कहूँ दर्द बखानी ॥
सतगुरु वैद बिथा पहिचाने, बूटी है उन की जानी ।
तुलसी यह रोग रोगिया बूझे, जिन को पीर पिरानी ॥

५-जैसे पतंग दीपक पर आशिक़ होता है और अपने तन को जला देता है वैसे ही बिरही अपना मन यानी आपा भस्म करता है ।

॥ चौपाई ॥

तुम दीपक मैं भई हूँ पतङ्गा । भस्म किया मन तुम्हरे संगा ॥
तुम सूरज मैं किरनी आई । तुम से निकसी तुमहिं समाई ॥

पतंग दीपक पर आशिक़ है मीठा के निकट नहीं जाता है ऐसे ही बिरही मालिक से मिलना चाहता है पदार्थ का गाहक नहीं है ; दाता से दाता ही को माँगना चाहिये दात में नहीं अटकना चाहिये और जो दात चाहेगा तो न दात ही मिलेगी और न दाता मिलेगा । अगर रस लेने या सिद्धि शक्ति हासिल करने या कोई स्थान खुलने की ख़्वाहिश है तो भी स्वारथी है, ऋषि मुनि सब अपने आपे के रस और

सिद्धि शक्ति में गल गये और जो सार बस्तु थी उस को भूल गये-यह प्रीत ऐसी है जैसे बेश्या की जिसका सरोकार धन से है, या जैसे कोई कपड़ों का आशिक़ होता है यानी खोल से प्रीत करता है और जो तत्व बस्तु यानी जान है उस की ख़बर भी नहीं रखता।

६—पतंग जहाँ दीपक देखता है वहाँ दौड़ता है यह नहीं पूछता है कि यह दीपक राजा के घर जलता है या कङ्गाल के घर—

॥ साखी ॥

उत्तम और चण्डाल घर, जहँ दीपक उजियार।
तुलसी मते पतङ्ग के, सभी जोत इक सार॥

ऐसे ही जिस को मालिक से मिलने की ख़ाहिश है वह यह नहीं देखता कि गुरू ब्राह्मन है या चमार जहाँ शहद है वहाँ मक्खी आप से आप इकट्ठी होती हैं, दीपक पतंग को नहीं पुकारता है कि आओ पतङ्गो हम यहाँ बैठे हैं पर जहाँ जोत है यानी सतगुरु हैं वहाँ भक्तजन आप से आप दौड़ते चले आते हैं और संसारी जो कि मक्खी और उल्लू रूप हैं भिन-भिना के भाग जाते हैं। पतंगा जिस क़दर दीपक के नज़दीक जाता है और तपन होती है उतनाही ज़ियादा तेज़ी के साथ जलने के लिये दौड़ता है और अङ्ग नहीं मोड़ता है ऐसे ही भक्तजन पर दुख तकलीफ़

जो कुछ नाज़िल होती है निहायत ख़ुशी के साथ झेलता है और शिकायत शिकवा नहीं करता है बल्कि भक्ति मारग में क़दम आगे ही बढ़ाता है—

॥ कड़ी ॥

बुलहवस को दर्द इश्क़ होता नहीं । सोज़ परवाने का मक्खी को नहीं ॥

॥ साखी ॥

सूरा नाम धराय कर, अब क्या डरपे वीर ।
मँड रहना मैदान में, सन्मुख सहना तीर ॥ १ ॥

खेत न छाँड़े सूरमा, जूझे दो दल माहिं ।
आसा जीवन मरन की, मन में राखे नाहिं ॥ २ ॥

अब तो जूझे ही बने, मुड़ चाले घर दूर ।
सिर साहब को सौंपते, सोच न कीजे सूर ॥ ३ ॥

सूरे सीस उतारिया, छाँड़ी तन की आस ।
आगे से गुरु हरखिया, आवत देखा दास ॥ ४ ॥

सूर चला संग्राम को, कबहू न देवे पीठ ।
आगे चल पाछे फिरे, ता को मुख नहिं दीठ ॥ ५ ॥

७—जैसे घास में अग्नि की चिनगी डालने से कूड़ा करकट सब जल जाता है इसी तरह इश्क़ की आग से सब अङ्ग भस्म हो जाता है सिवाय प्रीतम के कुछ नहीं रहता है—

॥ कड़ी १ ॥

इश्क़ वह शोला है, जिस घट में वह रौशन हो गया ।
एक प्रीतम रह गया, और बाक़ी सब जल भुन गया ॥

॥ कड़ी २ ॥

प्रेम जब आया सभी को रद किया।
एक प्रीतम रह के बाक़ी वह गया ॥

॥ साखी ॥

बिरह तेज़ तन में तपे, अङ्ग सभी अकुलाय।
घट सूना जिव पीव में, मौत ढूंढ़ फिर जाय ॥

॥ शेर ॥

मकानम लामकाँ बाशद, निशानम बेनिशाँ बाशद ।
न तन बाशद न जाँ बाशद, चे बाशद इश्के, जानानम ॥ १ ॥
अलाया शमस्तबरेज़ी, चिरामस्ती दरीं आलम।
बजुज़ मस्ती व मदहोशी, दिगर चीजे, नमी दानम ॥ २ ॥

८-जैसे मन से काम क्रोध वग़ैरह मलीन धारें उठती हैं ऐसे ही सुरत से बिरह और प्रेम की धारें उठती हैं मगर सुरत मन माया के ख़ोलों में जज़्ब होगई है। जैसे गरमी में रोशनी और रेत में पानी है या जैसे चोरी की चीज़ को चोर छिपाता है तो जब तक रगड़ा नहीं दिया जाता है तब तक वह परगट नहीं होती है इसी तरह जब तक दुख तकलीफ़ और गढ़त का रगड़ा इस पर नहीं पड़ता तब तक मन माया जो कि सुरत को निगले हुए हैं उसे नहीं उगलते और जब सुरत बरामद होती है तब प्रेम प्रगट होता है।

९-जैसे इतर निकाला जाता है तो ख़ुशबू के ज़र्रे ऊपर उड़ते हैं वैसे ही नीचे के घट से निज घट में जब

सुरत भरी जाती है तब मन के अंग अंग उड़ाये जाते हैं और पुराना ख़ून बदल के निर्मल किया जाता है। साध महात्माओं का ख़ून पवित्र होता है और बि-शेष चेतन्य होने के बाइस से बीमार को छू दें तो वह अच्छा हो जाता है। डाक्टर लोग कहते हैं कि सात बरस के बाद सब का ख़ून बदलता है पर परमार्थ में इस का पुराना स्वभाव और आदत भी बदलाई जाती है अंग अंग की धूल उड़ाई जाती है। परमार्थ कमाना कोई आसान काम नहीं है छठी का दूध निकाला जाता है।

॥ साखी ॥

दूध छठी का निकसे भाई। सिर बेचे तो मारग पाई ॥

॥ साखी ॥

माँस गया पिंजर रहा ताकन लागे काग।
साहब अजहुँ न आइया, कोइ मन्द हमारा भाग ॥ १ ॥
कागा सब तन खाइयो, चुन चुन खइयो माँस।
दो नैना मत खाइयो, पिया मिलन की आस ॥ २ ॥
कागा नैन निकास दूँ, पिया पास ले जाय।
पहिले दरस दिखाय के, पीछे लीजो खाय ॥ ३ ॥
साँईं सेवत जल गई, माँस न रहिया देह।
साँईं जब लग सेइहूँ, यह तन होय न खेह ॥ ४ ॥
बिरहा सेती मति अड़े, रे मन मोर सुजान।
हाड़ माँस सब खात है, जीवत करे मसान ॥ ५ ॥
या तन का दिवला करूँ, बाती मेलूँ जीव।
लोहू सींचूँ तेल ज्यों, कब मुख देखूँ पीव ॥ ६ ॥

॥ कड़ी ॥

पिया बिन कैसे जिऊँ मैं प्यारी। मेरा तन मन जात फुका-री ॥-

१०-बिरही को चिन्ता और फ़िक्र निसि बासर लगी रहती है कि कैसे पिया से मिले। प्रीतम की पीर हर दम हृदय में सालती रहती है जब कलेजा फटता है तब दरशन होता है-

॥ साखी ॥

हाय हाय पिय कब मिलैं, छाती फाटी जाय।
ऐसा दिन कब होयगा, दरशन करूँ अघाय ॥ १ ॥

बिन दरशन कल ना पड़े, मनुवाँ धरे न धीर।
चरनदास गुरु चरन बिन, कौन मिटावे पीर ॥ २ ॥

आह जो निकसे दुख भरी, गहरे लेत उसाँस।
मुख पियरो सूखे अधर, आँखें खरी उदास ॥ ३ ॥

अगिन धरे हियरा जरे, भये कलेजे छेद।
बिरहिन तो बौरी भई, क्या कोइ जाने भेद ॥ ४ ॥

बिरह जलन्ती मैं फिरूँ, मोहिं बिरह का दुक्ख।
छाँह न बैठूँ डरपती, मत जल उट्ठे रूख ॥ ५ ॥

॥ कड़ी ॥

जिगर फटा दिल टुकड़े हुआ। तब राधास्वामी का दरशन लिया ॥

साँप जैसे काटता है तो अन्तर में ज़हर की लहरें उठती हैं ऐसे ही बिरही के अन्तर में बिरह और दर्द की हिलोरें उठती हैं दिन रात बिरह की अग्नि में जलता है-बिरह की चोट सही नहीं जाती है-

॥ कड़ी ॥

कहूँ लग बरनूँ चोट बिरह की। कोई न जाने साल जिगर की ॥
बिरह अगिन तन मन मेरा फूँका। झाल उठी जग दीन्हा लूका ॥

॥ लटका ॥

प्रीतम पीर पिरानी, दरद कोई बिरले जानी ॥ टेक ॥
डसत भुवङ्ग चढ़त सनननन, ज़हर लहर लहरानी।
घनन घनन घमाटी आवे, भावे अन्न न पानी ॥
भँवर चक्र की उठत घुमेरें, फिरैं दसौं दिस आनी।
अन्दर हाल बिहाल हलावत, दुर्गम प्रीति निभानी ॥
आशिक़ इश्क़ इश्क़ आशिक़ से, करना मौत निशानी।
मुरदा हो कर ख़ाक मिले जब, तब पद अमर लिखानी ॥
पिया को सोग रोग तन मन में, सतगुरु सुध अकुलानी।
तुलसी यह मारग मुशकिल का, धड़ बिन सीस बिकानी ॥

११—बहुतेरे समझते हैं कि हम सतसंग करते हैं, थोड़ा बहुत अभ्यास भी करते हैं, स्वारथ परमारथ दोनौं अच्छी तरह से बनते हैं, एक रोज़ उद्धार हो जायगा, लेकिन यह नहीं जानते कि परमारथ जीते जी मरना है, दाल भात का निवाला नहीं है, कुल कुटुम्बियौं से तोड़ना पड़ेगा अन्तर और बाहर—

॥ कड़ी १ ॥

मन तोड़त तन अकुलाना। क्या करन बताऊँ जन्तरी ॥

॥ कड़ी २ ॥

मन मारो तन को जारो। इन्द्री रस भोग बिसारो ॥

॥ कड़ी ३ ॥

घर आग लगावे सखी। सोइ सीतल समुंद समावे॥

॥ कड़ी ४ ॥

घर फूँका मैं आपना लूका लीना हाथ।

वाहु का घर फूँक दूँ, जो चले हमारे साथ॥

कहने का मुद्दा यह है कि घर मैं इस के आग लगे तो ढोलक बजावे क्योंकि बन्धन कटता है—ऐसी हालत होनी चाहिये सच्ची सच्ची बात तो यह है जिन को बिरह और तड़प है वह अन्तर मैं छिपाते रहते हैं बाहर कहते नहीं फिरते-

॥ साखी ॥

हिरदय भीतर दौं जले, धुआँ न परगट होय।

जाके लागी सो लखे कै, जिनहिं लगाई सोय॥ १॥

नाम वियोगी विकल तन, ताहि न चीन्हे कोय।

तम्बोली के पान ज्यों, दिन दिन पीला होय॥ २॥

॥ शेर ॥

आशिक़ाँ रा शश निशाँ हस्त ए पिसर।

आह सरदो रङ्ग ज़रदो चश्म तर॥ १॥

गर विपुरसी सेह निशाने औं कुदाम।

कम ख़ुर्दनो कम गुफ़्तनो ख़ुफ़्तन हराम॥ २॥

अगर ज़बान से नहीं बोलते हैं तो उन के चेहरे से मालूम होता है कि प्रेम भरपूर है।

॥ साखी ॥

प्रेम छिपाया ना छिपे, जा घट परघट होय।
जो पै मुख बोले नहीं, तो नैन देत हैं रोय॥

१२-विरही की हालत हमेशा फ़िराक़ में ग़म और अलम ही की नहीं रहती है जब विसाल होता है तब दुख दर्द सब दूर हो जाता है और तब वह प्रेम में मगन और मसरूर हो जाता है-

॥ कड़ी १ ॥

बजी बधाई हर्ष समाई, भाग चला वैराग।
भक्ति भावनी निर्मल करनी, खेलत निज कर फाग॥

॥ कड़ी २ ॥

पूरा सतगुरु पाइया, पूरी पाई जुग्त।
हसन्दियाँ, खचन्दियाँ, विच्चों पाई मुक्त॥

॥ कड़ी ३ ॥

आँख न मूँदूँ कान न रूँधूँ, काया कष्ट न धारूँ।
खुले नैन मैं हँस २ देखूँ, सुन्दर रूप निहारूँ॥

पहिले बिरह होती है पीछे प्रेम प्रगट होता है-जीव बिचारा प्रीत करता है और मालिक इस को धक्के देता है, धक्के देने से मतलब यह है कि इसका आपा दूर करता है।

॥ कड़ी ॥

सतगुरु तोहि छिन छिन पोसें। हँगता तेरी सब विधि खोसें॥
तू कर उन चरनन होशें। सतगुरु से मत कर रोसें॥

सतगुरु सब विधि, यानी तन मन धन मान बड़ाई श्रोहदे ख़ानदान अभ्यास वग़ैरह का अहङ्कार जो इस के मन में समाया रहता है, उस को तोड़ते और निकालते हैं।

१३–जैसे पति चाहता है कि मेरी स्त्री मुझ से ही प्रीत करे दूसरे की तरफ़ मुतवज्जह न होवे ऐसे मालिक भी चाहता है कि भक्तजन सिर्फ़ उससे ही प्रीत करे तन मन और इन्द्रियाँ से प्रीत न करे।

॥ साखी ॥

नारि कहावे पीव की, रहे और सँग सोय।
यार सदा मन में बसे, ख़सम ख़ुशी क्यों होय॥

वैसे तो हर कोई कहता है कि हम भक्ति करते हैं मगर जब क़दम आगे बढ़ावे तब ख़बर पड़े कि प्रीत क्या चीज़ है और एक रस नेह निबाहना कैसा दुर्लभ है–

॥ दोहा ॥

जो मैं ऐसा जानती, प्रीत करे दुख होय।
नगर ढँढोरा फेरती, प्रीत न कीजो कोय॥

॥ मिसरा ॥

कि इश्क़ आसाँ नमूद अव्वल, वले उफ़्ताद मुशकिलहा।

॥ कड़ी ॥

गुरू से लगन कठिन मेरे भाई॥

प्रेम का मारग सहज नहीं है–

॥ साखी ॥

आब आँच सहना सुगम, सुगम खड़ग की धार।
नेह निवाहन एक रस, महा कठिन ब्यौहार ॥ १ ॥
लड़ने को सब ही चले, शस्तर बाँध अनेक।
साहब आगे आपने, जूझेगा कोइ एक ॥ २ ॥
तीर तुपक से जो लड़े, सो तो सूर न होय।
माया तज भक्ती करे, सूर कहावै सोय ॥ ३ ॥
हँस २ कन्थ न पाइयाँ, जिन पाया तिन रोय।
हाँसी खेले पिउ मिले, तो कौन दोहागिन होय ॥ ४ ॥
यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिँ।
सीस उतारै भुइँ धरे, तब पैठे घर माहिँ ॥ ५ ॥
जब लग मरने से डरे, तब लग प्रेमी नाहिँ।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समझ लेहु मन माहिँ ॥ ६ ॥
सीस उतारे भुइ धरे, ऊपर राखे पाँव।
दास कबीरा योँ कहे, ऐसा होय तो आव ॥ ७ ॥
धड़ सोँ सीस उतार के, डार देइ ज्योँ ढेल।
काहू सूर को सोहसी, यह घर जाने का खेल ॥ ८ ॥

॥ चौपाई ॥

प्रेम खेलन का जो तोहि चाव। सिर धर तले गली मेरी आव ॥
प्रेम खेलन का यही सुभाव। तू चल आव कि मुझे बुलाव ॥
प्रेम खेलन का यही बिबेक। मैँ तोहि देखूँ तू मोहिँ देख ॥
देखत देखत ऐसा देख। मिट जाय दुबिधा रह जाय एक ॥

॥ बचन १३ ॥

॥ भक्ति का बीज ॥

सुरत का रुख़ अन्तरमुख है पर इन्द्रियों में जब धार आती है तब उन की कार्रवाई आप से आप होती है उसमें कोई ख़ास जतन की हाजत नहीं होती या जो सुभाव जिस में प्रबल है वह देर सबेर ज़रूर अपना इज़हार करता है—जैसे बीज है कि दरख़्त का नमूना उस में मौजूद है बोने से नक़्श के अनुसार दरख़्त पैदा होता है ऐसे ही जिस में कि भक्ति का बीज पड़ा हुआ है देर सबेर उस का भी इज़हार ज़रूर होता है। संतों का जो बीजा है वह ज़ियादा पुर असर है उस का मैलान और झुकाव परमार्थ की तरफ़ है और एक रोज़ इस की सतसंग में शिरकत ज़रूर होती है—

॥ सोरठा ॥

सन्त डारिया बीज, घट धरती जेहि जीव के।
को अस समरथ होय, जो जारे उस बीज को॥
कोई काल के माहिं, वह बीजा अंकुर गहे।
जब जब आवें सन्त, अंकुरी उन सँग रहे॥
वह सींचें निज पौद, होय भक्ति वह पेड सम।
फल लागें अति से सरस, भोगे सतगुरु मेहर से॥

कारज कीना पूर, सन्त धूर हिरदे धरी।

सूर हुआ मन चूर, नूर तूर घट में प्रगट॥

२—फिर जब प्रेम का किनका बख़शिश होता है तब काम बन जाता है यानी पूरा हो जाता है गोया भक्ति का पेड़ तइयार होगया, अरसा तो ज़रूर लगेगा धीरज से अपना काम करते रहना चाहिये, पौदे का सींचना, बाड़ लगाना यानी इस की रक्षा और हिफ़ाज़त के लिये इर्द गिर्द काँटा वग़ैरह लगाना, यह सब बन्दोबस्त मालिक आप करता है और यह सब लवाज़िमा संजम और परहेज़ है, और भक्ति यानी प्रेम जौहर, सार बस्तु और हीर है—धीरे धीरे इस दरख़्त के पत्ते और शाख़ें निकलती हैं और बाद इस के भक्ति का फूल खिलता है यानी इसी के अंतर में मालिक का स्वरूप प्रगट होता है।

॥ कड़ी ॥

मैं वृक्ता राधास्वामी सुफल से। मैं शाखा राधास्वामी फूल से॥

वैसे महिमा तो फूल ही की है मगर बाज़ पेड़ के पत्ते भी बड़े सुगन्धित होते हैं।

३—हृदय रूपी ज़मीन जब फटती है तब कुला फूटता है और यही जिगर का फटना है इसके लिये पहिले सफ़ाई की ज़रूरत है जैसे किसान जब बीज डालता

है तो पहिले खेत को कमा लेता है जो बे कमाये हुए बीज डाल दे तो कुछ नहीं पैदा होता है इसी तरह हृदय रूपी ज़मीन को कमाने के वास्ते गुरू की प्रीत और सफ़ाई ज़रूर है। सो पहिले खोदा खादी होती है बाद इस के पानी और खाद पड़ती है पानी और खाद पड़ने से कुछ सीतलता आती है मगर जब खोदा खादी और फाँवड़े बाज़ी होती है यानी गढ़त होती है तब यह चिल्लाता है वहाँ ज़मीन जड़ है बोलती नहीं और यह बोलता पुरुष है। बाज़ी ज़मीन में चाह रूपी कंकड़ और पत्थर पड़े होते हैं तो ज़ियादा खोदा खादी की ज़रूरत होती है और जो ज़मीन पथरीली है तो इस के लिये और इन्तज़ाम किया जाता है। अब इससे ज़ाहिर हुआ कि प्रेम के आने के लिये पहिले हृदय रूपी ज़मीन की सफ़ाई करना ज़रूरी है। यानी पहिले गढ़त होगी पीछे प्रेम की बख़शिश होगी।

४—जैसे पहिले कुले फूटते हैं तब फूल खिलता है वैसे ही तीसरे तिल का परदा जब पहिले फटता है तब पीछे दरशन होता है, वहाँ बाहर पेड़ निकलता है और अन्तर में ऊपर पेड़ खिलता है कहने का मुद्दा यह है कि भक्ति का बीज मुख्य है इसी को संस्कार, भाग और क़िस्मत कहते हैं, कार्रवाई मालिक

आप कराता है, और सब का जुदागाना भाग है। प्रेम की जब बख़्शिश होगी तब काम बनेगा, इसके जतन से कुछ नहीं होगा, करनी भी मेहर दया से होगी—

॥ कड़ी ॥

मेहर दया करनी करवाई। करनी कर बहु मेहर बढ़ाई ॥ १ ॥
करनी मेहर संग दोउ चलते। तब फल पूरा चढ़ चढ़ लेते ॥ २ ॥

॥ बचन १४ ॥

॥ भक्ती की अवस्थाएँ ॥

जैसे बच्चे को अपनी मइया का आधार होता है वैसे भक्त जन को जो कि अभी बालक रूप है अपने भगवन्त का आसरा रहता है।

२-जहाँ परस्पर प्रीत है वहाँ मदद और हिफ़ाज़त की आशा है जैसे छोटा बच्चा और मइया है तो बच्चे को अपनी मा का ही आसरा रहता है और सिवाय अपनी मा के और किसी को नहीं जानता है दुख सुख में मइया की ही गोद में मदद के लिये दौड़ता है और वह उस की रक्षा के लिये हर दम तइयार रहती है वैसे ही भक्त जन जो कि बालक

रूप है अपने भगवन्त का आसरा रखता है और दुख सुख ख़ाह स्वारथ परमारथ मैं उसी की तरफ़ दया और मदद के लिये रुजू और मुख़ातिब होता है और जो कोई दूसरा मदद करता है तो उस को नापसन्द करता है—

॥ साखी ॥

बने तो सतगुरु से बने, नहिं बिगड़े भरपूर।

तुलसी बने जो और से, ता बनिबे में धूर॥

३—कभी कभी बालक समझता है कि मइया मेरे साथ कठोरता करती है मसलन बीमारी मैं वह उस को दवा पिलाती है तो असल मैं बालक के सेहत और आराम के लिये दवा दी जाती है कोई कठोरता नहीं है इसी तरह कभी कभी सतसंग मैं उलटी सुलटी हालत पैदा करके इस के कर्म काटे जाते हैं यानी मन का रोग दूर किया जाता है और यह घबराता है कि मेरे साथ कठोरता हो रही है मगर दरहक़ीक़त है इस मैं दया ही दया।

४—सख़्ती के भी दरजे हैं एक नाक़िस करमौं के सबब से और दूसरे मौज से।

दोनौं मैं दया शामिल है—बालक जब बहुत खेल कूद करता है तब मइया उस को रोकती है और यह उस को वाक़ई सख़्ती समझता है और जो कहीं

पीट दिया तो चिल्लाता है मगर असल में इस में इसका फ़ायदा मुतसव्वर है, मा की कोई दुश्मनी नहीं है, और वह जो मार पीट करती है तो उस से कोई उस के प्यार में फ़र्क़ नहीं पड़ता है प्यार बदस्तूर क़ायम है बल्कि मारते वक्त भी भीतर से प्यार करती रहती है—बाज़े लड़के तो इधर उधर उपट देते हैं (यानी बड़बड़ाते फिरते हैं) बाज़े रो देते हैं। ऐसे ही भक्त जन को दुख देना मालिक को मंज़ूर नहीं है और जो कभी दिया जाता है तो इस की बेहतरी के लिये और दया और मदद बदस्तूर क़ायम रहती है-

॥ साखी ॥

दास दुखी तो मैं दुखी आदि अन्त तिहुँ काल।
पलक एक में प्रगट होय छिन में करूँ निहाल॥

बाज़े बालक ऐसे होते हैं कि जिस चीज़ पर रोस करते हैं वह चीज़ जब फिर उन को दी जाती है तो लोट पड़ते हैं और लेते नहीं हैं ऐसे ही जो किसी पर मालिक ताड़ मार के पीछे दया करता है तो बाज़े उसे लेते नहीं हैं और नख़रे करते हैं।

५—परमारथ में बालक कब होता है। जब चरन धार का आधार इस को होता है और आधार तब होता है जब इस की सुरत को चरनधार अपने में लपेट लेती है और तब बिना ध्यान भजन में बैठे जब

चाहे चरन रस लेता है—यहाँ भी जब बच्चा पेट में होता है तो मा के .खून से उस की देह बनती है और बाहर इस के बढ़ाव और पुष्ट होने के लिये मा का दूध जो कि .खून से बनता है इस का अहार होता है इसी तरह परमारथ में भी जब चरनधार इस को अपने में लपेट लेती है और चरन रस इस का अहार हो जाता है और उसी का असर होता है तब यह बालक बनता है—वहाँ अन्तर बाहर .खून का रिश्ता है और यहाँ चेतन्य यानी अमृत धार का रिश्ता है और जिस में कि भक्ति का बीज पड़ा हुआ है वह एक रोज़ ज़रूर बालक बनता है बग़ैर बीज के बा-लक नहीं पैदा होता है ।

६—बालक होना पहिली गति है दूसरी गति स्त्री पुर्ष की है यह तब होती है जब भक्ति की जवानी आती है जैसे लड़कपन से तरुन अवस्था आती है और सब अंग काम वग़ैरह के जागते हैं ऐसे ही भक्ति की भी जब जवानी आती है तब प्रेम वग़ैरह अंग जागते हैं और जैसे स्त्री पुरुष आपस में मिलते हैं वैसे ही भक्तजन को भगवन्त से तद्रूप होने की ताक़त होती है । जब तक बालपन है तब तक पिता पुत्र का भाव है और जब भक्ति की जवानी आती है तब स्त्री पति का भाव होता है । भक्ती में तीन प्र-

कार का भाव होता है पहिला स्वामी सेवक का, दूसरा पिता पुत्र का, तीसरा स्त्री पति यानी प्रेमी प्रीतम का—पहिले भाव में सेवक के दिल में ख़ौफ़ और अदब ज़ियादा रहता है दूसरे में दया का भरोसा रहता है, तीसरे में प्रेम की मुख्यता रहती है।

७—बालक बाज़ दफ़े अदम-तवज्जही भी करता है यानी खेल कूद में मइया को भूल जाता है इसी तरह बालक भक्त भी बाज़े संसारी पदारथ और कारोबार में ज़ियादा तवज्जह करता है और जैसे लड़का खेल कूद के लिये मा से चट्टा बट्टा माँगता है वैसे यह भी बाज़ी संसारी वस्तु के लिये अर्ज़ मारूज़ करता है तो जैसे मइया लड़के को दिलासा देती है वैसे ही सतगुरु भी हाँ हाँ करते रहते हैं और सुनते हैं मगर करते वही हैं जिसमें कि उस की भलाई है—

॥ कड़ी ॥

जिस में तेरी होय भलाई। स्वारथ और परमारथ सार।
वैसीही करें मौज दया से। दोऊ में हित मानो यार॥
खेल खिलावें बाल समान। देखे मात हर्ष मन आन॥
रक्षक शब्द जान और प्रान। सो पहलू छोड़े न निदान॥
मन की गढ़त करावें दमदम। वह हैं मित्र वही हैं हमदम॥
भूल चूक बख़्शें वह छिन छिन। सङ्ग रहें इस के वह निस दिन॥
यह मन कच्चा बूझ न जाने। उन की गत कैसे पहिचाने॥

सवाल—हम तो अभी बालक भी नहीं हैं फिर क्या हैं।
जवाब—तुम अभी अंडा हो।

॥ बचन १५ ॥

॥ भोला भक्त किस को कहते हैं ॥

जो कि भोले भाले हैं उन पर दया बिशेष है—जो कि दीन अधीन है और ग़रीबी से बरताव करता है यानी हर वक्त, जिस के सुरत मन सिमटे और चित्त एकाग्र रहता है, जानता बूझता सब कुछ है फिर भी अनजानों के माफ़िक़ बरताव करता है और स्वभाव जिसका कोमल है उसको भोला भाला कहते हैं-

॥ कड़ी ॥

प्रेम भरी भोली भाली सुरतिया। पल पल गुरु को रिझाय रही॥
दीन होय लागी सतसँग में। बचन सुनत हरषाय रही॥

२—जैसे जहाँ मइया है वहाँ बच्चा रहता है और बच्चों से खेल कूद करता है पर मइया के दूध का आधार रखता है और हर वक्त, उस की डोरी प्रीत की मइया के साथ लगी रहती है। वैसे ही भक्त जन भी जब मइया के देश में होवे यानी ब्रह्मांड में जब

चेतन्य धार से मेला होवे और हर वक़्त सुरत की डोरी चरनौं मैं लगी रहे और नित्त अमी अहार करे और हंसौं यानी प्रेमी जनौं से हेल मेल करे तब यह बच्चा हो सकता है और जब तक ऐसा कोमल नहीं है तब तक मइया दूर है और बच्चा परदेश मैं है।

३—नीचे देस मैं भी राधास्वामी दयाल अपने बच्चौं की सम्हाल करते हैं जैसे बच्चा जो अभी गर्भ मैं है वह हरचन्द पैदा नहीं हुआ है तो भी मइया की प्रीत उस से होती है और मइया के ख़ून से उस की परवरिश होती है ऐसे ही जिस का कि अभी चेतन्यधार से मेला नहीं हुआ है और पिण्ड के परे ब्रह्मांड मैं नहीं पहुँचा है उस की रक्षा और सम्हाल भी बराबर होती रहती है।

४—जिस की कि देह स्वरूप सतगुरु से प्रीत सच्ची और पूरी है उस को अन्तर मैं रसाई ज़रूर होती है अगर रसाई नहीं है तो समझना चाहिये कि अभी प्रीत मैं कसर है—जिनकी कि अन्तर मैं रसाई है और जो भोले भक्त हैं उन की वही कैफ़ियत होती है जैसी कि यहाँ भोले जीवौं की, जैसा कोई कहे वह सही मानने को तइयार रहते हैं और कुछ याद नहीं रहता जिस तरह मालिक रक्खे उस मैं राज़ी रहते हैं और हर वक़्त मौज को निहारते रहते हैं और जैसे यह

चलावे वैसे चलते हैं और विशेष दया के अधिकारी होते हैं ।

॥ वचन १६ ॥

॥ प्रेम की महिमा ॥

सन्त मत में प्रेम की महिमा भारी है—जब तक प्रेम नहीं है तब तक चाल अनेड़ी है और जिस में कि प्रेम है वह गोया मालिक की राह पर चला ।

जिस घट में कि मालिक के चरन बस गये वहाँ मन माया की कुछ पेश नहीं जाती, जैसे सूरज जब उदय होता है तब तमरूपी जो अन्धकार है वह दूर हो जाता है वैसे ही प्रेम के प्रकाश से घट के जो दूत हैं वे सब भागते हैं और वहाँ सील छिमा सन्तोष का उजारा हो जाता है—

॥ कड़ी ॥

गुरु किरपा सूर उगाना । अब हुआ जक्त बेगाना ॥ १ ॥
चोरी अब चोरन त्यागी । घर उन के अग्नी लागी ॥ २ ॥
साहू अब घट में जागे । पहरा दे शब्द अनुरागे ॥ ३ ॥
तन नगरी बिच बजत ढँढोरा । भागे चोर ज़ोर भया थोड़ा ॥ ४ ॥
सील छिमा आय थाना गाड़ा । काम क्रोध पर पड़ गया धाड़ा ॥ ५ ॥

जब तक प्रेम घट में नहीं जागा है तब तक मन माया नाच नचाते रहते हैं—

॥ कड़ी ॥

प्रेम दात बिन सुनो मेरे प्यारे। यह मन नाच नचाता हो ॥ १ ॥
मेरा बस या से नहि चाले। भोगन में मद माता हो ॥ २ ॥

२—अगर रस भी आवे, सुरत मन भी सिमटें, शब्द भी सुनाई दे और सूरज चाँद भी नज़राई पड़ें मगर प्रेम नहीं है तो कुछ नहीं है। प्रेम चेतन्य धार से मेला होने को कहते हैं और वह मेला यहाँ पिण्ड में नहीं होता ब्रह्मांड में होता है—जब सीस देगा तब मेला होगा—

॥ साखी ॥

यह तो घर है प्रेम का, ख़ाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुइँ धरे, तब पैठे घर माहिं ॥ १ ॥
धड़ सोँ सीस उतार के, डार देय ज्यों ढेल।
काहू सूर को सोहसी, यह घर जाने का खेल ॥ २ ॥

सीस का उतारना आपे के खो देने को कहते हैं, परदा जो जीव और मालिक के बीच में हायल है वही सीस और आपा है।

३—मोहनी रूप का जब दरशन भक्त जन को होता है या उस का ख़याल करता है तब उसमें इस क़दर महव और मगन हो जाता है कि अपनी भी इस को सुध बुध नहीं रहती है—

॥ कड़ी ॥

दरशन करत पिण्ड सुध भूली । फिर घर बाहर सुध क्या आय ॥

अगर यह इस को ख़बर है कि मैं दरशन कर रहा हूँ तो यह भी उस के प्रेम की कसर है-दिल का हुजरा जब साफ़ होगा तब मोहनी रूप के चरन उस में पधारेंगे—

॥ शेर ॥

दिल का हुजरा साफ़ कर, जानाँ के आने के लिये।
ध्यान ग़ैरों का उठा, उस के बिठाने के लिये ॥

४-प्रेमी जन के संग करने से भी इश्क़ पैदा होता है, जो कि सच्चे हैं वे हमेशा ऐसी सङ्गत को पसन्द करते हैं और जो झूठे हैं भक्तजन से विरोध रखते हैं। जैसे संसारियों का संग करने से उन का असर होता है वैसे ही परमार्थ में भक्तजन का संग करने से भक्ती का असर होता है । सच्चे और भक्तजन की मालिक हर वक्त, स्वारथ और परमारथ की सम्हाल आप फ़रमाता है, अव्वल परमारथ की बाद उस के स्वारथ की सम्हाल करता है । जिस में कि आपा नहीं है उस की इस तरह की हिफ़ाज़त होती है-जहाँ आपा है वहाँ जतन है, प्रेम और मौज की गुञ्जाइश वहाँ नहीं है ।

॥ साखी ॥

जब हम थे तब गुरु नहीं, अब गुरु हैं हम नाहिं।
प्रेम गली अति साँकरी ता में दो न समायँ॥

५-कहने का मुद्दा यह है कि राधास्वामी दयाल के चरनौं की प्रीत ऐसी होनी चाहिये जैसे चकोर की चन्द्रमा के साथ और पतंग की दीपक के साथ है-

॥ कड़ी ॥

मैं तो चकोर चन्द्र राधास्वामी। नहिं भावे सतनाम अनामी॥ १॥
बिन जल मछली चैन न पावे। कँवल बिना अल क्यों ठहरावे॥ २॥
स्वाँति बिना जस पपिहा तरसे। सुत वियोग माता नहिं सरसे॥ ३॥
अस अस हाल भया अब मेरा। का से बरनूँ कोई न हेरा॥ ४॥

॥ कड़ी ॥

तुम दीपक मैं भई हूँ पतङ्गा। भस्म किया मन तुम्हरे सङ्गा॥ १॥
तुम भृङ्गी मैं कीट अधीना। मिल गये राधास्वामी अति परवीना॥ २॥

६-निशाना राधास्वामी दयाल के चरनौं से मेल करने का बाँधना चाहिये, जब तक मेला नहीं है तब तक जितने परमार्थी काम किये जाते हैं सब कर्म में दाख़िल हैं। जब चरनौं से मेला होगा तब प्रेम प्रगट होगा और तब उपासना यानी भक्ती शुरू होगी।

सवाल-मोह और प्रीत में क्या फ़र्क़ है?

जवाब-मायक अङ्ग के साथ जो मुहब्बत है उस

को मोह कहते हैं और मायक अङ्ग से रहित यानी चैतन्य से जो मुहब्बत है उस को प्रीत कहते हैं। संसारी प्रीत मन के घाट पर की जाती है और परमार्थी प्रीत सुरत के घाट पर की जाती है। परमारथ मेँ भी जब तक किसी का घाट नहीं बदला है तब तक जो प्रीत प्रतीत और प्रेम है वह मन के घाट का है सुरत के घाट का नहीं है यह हैवानी प्रेम क़ाबिल एतबार के नहीं है, छिन रूखा छिन फीका हो जाता है।

॥ साखी ॥

घड़े घटे छिन एक में, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम पिञ्जर बसे, प्रेम कहावे सोय॥

॥ बचन १७ ॥

भक्ति किस को कहते हैं और भक्ति का फल क्या है

संसार मेँ भक्ति क्या है और उस का फल क्या है पहिले उस को समझना चाहिये—प्रीत भक्ति मुह-ब्बत एक ही है।

॥ कड़ी ॥

भक्ति इश्क़ प्रेम यह तीनों। नाम भेद है रूप समान॥

संसार के जितने पदारथ हैं उन सब का ज्ञान हासिल करने के लिये द्वारे हैं मसलन रूप के लिये नेत्र, शब्द के लिये कान, वग़ैरह। ज्ञान इन्द्रियों के ज़रीये अन्तःकरन के स्थान से धार उठकर बार बार किसी मुक़र्रर द्वारे पर जब आती है तब उसको प्रीत यानी मुहब्बत कहते हैं और जब पदारथ से मेला होता है तब उस को उस मुहब्बत का फल कहते हैं। जहाँ मुहब्बत है वहाँ उस के द्वारे पर बड़े ज़ोर शोर से धार की आमद होती है और बहुतेरा हटाओ पर हटती नहीं, और यह भी ज़रूर नहीं कि प्रीत करने के लिये बाहर स्थूल पदारथ मौजूद होवे, मसलन आँख है उस में अक्स बाहरी चीज़ का पहिले से मौजूद है अब उस का ख़याल करने से ही प्रीत जागती है। बाहरी रूप और शब्द का रस ऐसा भारी है कि लोग उस में महव और मस्त हो जाते हैं तो अन्तरी रूप और शब्द में किस क़दर रस और असर होगा जिस का हद और हिसाब नहीं है।

॥ कड़ी ॥

जान मुरदों की उठें क़बरों से भाग। ऐसा अन्तर का है बाजा और राग॥

२—अब परमार्थ में भक्ति क्या है और उस का फल

क्या है इसका बरनन किया जाता है। मालिक चेतन्य का भंडार है, सत चित आनन्द रूप है। जो कि पूरे गुरू हैं वह भी चेतन्य स्वरूप हैं और वही द्वारा मालिक से मिलने के हैं, उन का स्वरूप बार बार ख़याल में लाना गोया मालिक से मेल करना है और यही उस की भक्ति है। जिस मत में कि इस द्वारे यानी गुरू की महिमा नहीं है वह मत बाचक है, मनमत है।

३—तीसरा तिल जिस को शिव-नेत्र या दिव्य चक्षु और ज्ञान चक्षु कहते हैं वहाँ जब धार आती है तब चेतन्य स्वरूप का ज्ञान और उससे संजोग होता है और यही भक्ति का फल है। जब सिर्फ़ किसी क़दर धार का चेतन्य रूप से संजोग होता है तब उस को भेद भक्ति कहते हैं और जब सर्व अङ्ग करके संजोग होता है तब उस को अभेद भक्ति कहते हैं।

४—चार प्रकार की भक्ति है।

१ सालोक—अपने इष्ट के लोक में बास करना,

२ सामीप—अपने इष्ट के निकट रहना,

३ सारूप—अपने इष्ट का प्रगट रूप धारना।

४ सायुज्य—अपने इष्ट की ज़ात यानी लक्ष स्वरूप से मिल कर एक हो जाना।

भगवन्त से तदरूप होना यानी सर्व अङ्ग से

संजोग करना इस को सायुज्य भक्ति कहते हैँ—इसी पर कहा है कि—

भक्ति भक्त भगवन्त गुरु, नाम चतुर बपु एक।
तिन के पग वन्दन करत, नासैं बिघन अनेक॥

५—अब भक्ति मैँ क्या बिघन पेश आते हैँ उसका थोड़ा सा बयान किया जाता है।

संसार मैँ गुज़ारे मात्र बरताव करना चाहिये ज़ियादती मैँ हर्ज और नुक़सान है यह उसूल है, तजरबा जब होता है तब साफ़ मालूम पड़ता है। मसलन तरकारी लेना वग़ैरह घर का जो काम है बाज़ार मैँ गये और निपट आये इस मैँ चित्त की बृत्ती का बंधन और फँसाव ज़ियादा नहीँ होता, काम पूरा हुआ फिर उस से कोई सरोकार नहीँ रहा, मगर जो कहीँ नाटक का तमाशा है या कोई जलसा या मीटिङ्ग है वहाँ जाना और उस मैँ तवज्जह देना इससे भारी हर्ज होता है, धीरे धीरे परमारथ से तवज्जह हटती जायगी और ऐसे जलसौँ मैँ चित्त उलझा रहेगा। जैसे कोई जुवारी या शराबी है या कोई रोज़गार पेशा करता है दरजे बदरजे उसका चित्त उस मैँ ऐसा अटक जाता है कि जो ज़रूरी संसारी काम हैँ वह भी भूल जाते हैँ, इसी तरह भक्ति मारग मैँ शरीक होके अगर कोई और काम ज़ियादती से

करेगा तो परमार्थी कार्रवाई उस की धीरे धीरे मुल्तवी हो जावेगी और यह भक्ति की रीत नहीं है।

६—भक्तजन को चाहिये कि हमेशा मन की चौकीदारी करता रहे कि कहीं इधर उधर .फुजूल कामों में तो नहीं फँसता है और यही समाधानता है; और चरनों में प्रीत भाव करना इस को सरधा कहते हैं। कहने का मुद्दा यह है कि सरधा और समाधानता के साथ सुरत शब्द योग की कमाई करो, निरन्तर सतसङ्ग करो, अपने चेतन्य को जगाओ और बिशेष करो, अन्तर का द्वारा खोलो, चरनों से मेल करो, तब तुम भक्त बनोगे।

७—भक्ति का स्वरूप क्या है—जैसे कामी पुरुष को कामिन देखते ही काम अंग जागता है ऐसे ही गुरू का दरशन अन्तर ख़ाह बाहर करते ही भक्त के सुरत मन का सिमटाव होता है और चित्त हमेशा गुरू की याद में लगा रहता है और सिवाय गुरू के और कुछ भी प्यारा नहीं लगता है जैसा कि कहा है।

॥ कड़ी ॥

जस कामी को कामिन प्यारी। अस गुरुमुख को गुरु का गात॥
खाते पीते चलते फिरते। सोवत जागत विसर न जात॥
खटकत रहे भाल ज्यों हियरे। दरदी के ज्यों दर्द समात॥
ऐसी लगन गुरू सँग जाकी। वह गुरमुख परमारथ पात॥

८—भक्ति में चार प्रकार का भाव है-(१) पिता पुत्र, (२) स्त्री पति, (३) स्वामी सेवक, (४) सखा भाव। जब तक संजोग नहीं है तब तक पिता पुत्र भाव है और जब संजोग हुआ तब स्त्री पति का भाव है; स्वामी सेवक भाव दास अंग से प्रीत करने को कहते हैं और दोस्त आशना और मित्र भाव सखा भाव कहलाता है। इन सब में पिता पुत्र का भाव अच्छा है, और जो गुरुमुख है उस की गति न्यारी है उसकी रत होने की गति है, कलेजा छेक उठता है, अन्तःकरन से धार उठने से दिल टुकड़े होता है, दरशन करते ही मन हर जाता है और सुध बुध सब भूल जाती है—

॥ कड़ी ॥

गुरु प्यारे के नैन रँगीले, मेरा मन हर लीन।

कहने का मुद्दा यह है कि बेरूनी कार्रवाई कम करो अंतरमुख वृत्ती लाओ, सतसंग निरन्तर करो, चरनों में प्रीत बढ़ाओ, घट द्वारा खोलो, यही भक्ति की रीत है॥

॥ बचन १८ ॥

सरन कब ली जाती है? जब तक मन का मसाला झाड़ा न जायगा और दुख तकलीफ़ से इसका आपा

यानी बल पौरुष तोड़ा न जायगा तब तक सच्ची सरन हरगिज़ नहीं लेगा।

२—मन में मलीनता और करम का बोझ यानी मसाला धरा हुआ है इस लिये जीव लाचार है, हरचन्द यह जतन और कोशिश करता है, सोचता और बिचारता है, पछताता और झुरता है कि कभी ऐसा काम नहीं करूँगा, मगर फिर भी भूल जाता है और समझौती जो ली है वह काम नहीं देती। बाज़ दफ़े क़सम खा लेता और क़ौल क़रार भी करता है तौभी इस की कोई पेश नहीं जाती है—

॥ शब्द ॥

सखी री मेरा मनुवाँ निपट अनाड़ी। गुरु वचन चित्त नहिं धारी॥
सोचत समझत फिर फिर भूलत। भक्ती रीत दिसारी॥
कैसी करूँ कुछ बस नहिं चाले। गुरु दयाल बिन कौन सम्हारी॥
क़ौल क़रार किये मैं बहुतक। लज्जित नहिं निज बचन तुड़ा री॥
ऐसा ढीठ निलज्ज भोग बस। गुरु का नहिं भय भाव रखा री॥

इस तरह जब यह लाचार होता है और देखता है कि मेरी कोई ताक़त मन माया से लड़ने की नहीं है और बिलकुल हार जाता है और जतन कोशिश कर के थक जाता है तब आजिज़ होके अपना बल पौरुष छोड़ता है और राधास्वामी दयाल की सरन लेता है

और कहता है कि चाहे रक्खो बचाओ चाहे मारो बहाओ मैं आप की सरन हूँ—

॥ कड़ी ॥

जतन करूँ तो बन नहिं आवत । हार हार अब सरन पड़ा री ॥
यह भी बात कहूँ मैं मुँह से । मन से सरना कठिन भया री ॥
सरना लेना यह भी कहना । झूँठ हुआ मुँह का कहना री ॥
तुम्हरी गत मत तुम ही जानो । जस तस मेरा करो उबारी ॥

३—और यह भी इसको मालूम होता है कि किस क़दर काल, करम, मन, माया, संसारी चाहें, और बिघन बलवान हैं और उन से मुक़ाबला करना यानी जतन और कोशिश करना, पछताना, झुरना, और रोक टोक करना, वाक़ई मन के साथ लड़ाई करना है, और मेरी कुछ पेश नहीं जाती है ; सो जब यह मन से हारेगा और अपना बल पौरुष छोड़ेगा तब राधास्वामी दयाल की सच्ची सरन लेगा—यह हालत भी अभ्यासी के ऊपर गुज़रेगी और आख़िर में इस दरजे की सरन ली जायगी । अगर किसी के अन्तर में अभी भँगार भरी हुई है और न जतन न कोशिश मन से लड़ने के लिये करता है और शुरू में ही कहता है कि मैं ने तो राधास्वामी दयाल की सरन ली है वह आप ही मन को मारेंगे, तो यह दग़ाबाज़ी झूठी और आलसपने की सरन है, इस से जो असल मतलब है वह

तो निकलाही नहीं, यानी मतलब यह है कि यह अपना जतन और कोशिश करके जब हार जाय और थक जाय और देख ले कि मेरी ताक़त मन माया से लड़ने की नहीं है तब इस का आपा बल और पौरुष दूर होगा और मसाला जो अंतर में धरा हुआ है वह भी ख़ारिज होगा और तब संसार से इस को डर ख़ौफ़ और रंज होगा और करम का बोझ ढीला होगा—जब तक करम का क़रज़ा नहीं चुकाया है तब तक सरन हरगिज़ नहीं ली जा सक्ती है, जैसा कि कहा है—

॥ शब्द ॥

सतगुरु सरन गहो मेरे प्यारे, कर्म जगात चुकाय ॥ टेक ॥

अर्थ—कर्म का महसूल चुकाकर सतगुर की सरन लो, यानी जिस क़दर जिसने अपने करम का कर चुकाया है उसी क़दर गोया उस ने सरन ली है।

भूल भरम में सब जग पचता। अचरज बात न काहू सुहाय ॥ १ ॥

अर्थ—माया का परदा चढ़ा हुआ है इसलिये भूल और भरम है और सारा जगत इसी में पच रहा है, सतगुर की सरन लेना जो अनोखी बात है किसी को भली नहीं मालूम होती है।

भागहीन सब जग माया बस। यह निर्मल गत कोई न पाय ॥ २ ॥

अर्थ—माया के बस होकर सतगुरू की सरन नहीं

लेता इस लिये सारा जगत भागहीन है और इसी लिये यह निर्मल गत जो सतगुरु की सरन लेनी है किसी को प्राप्त नहीं होती है।

जिस पर दया आदि करता की। सो यह अमृत पीवन चाय ॥ ३ ॥

अर्थ—मगर जिन जीवौं पर कि आदि करता यानी कुल मालिक राधास्वामी दयाल की दया है वह सरन रूपी निज चेतनधार का अमृत रस पीने की चाह उठाते हैं।

कहाँ लग महिमा कहूँ इस गत की। बिरले गुरमुख चीन्हत ताहि ॥ ४ ॥

अर्थ—ऐसी हालत के प्राप्ती की जो महिमा है वह कहाँ तक बरनन की जावे, गुरमुखौं में भी कोई बिरले उस को समझ सक्ते हैं [गुरमुख उस का नाम है जिसने कुल संसारी प्रीतौं पर मालिक की प्रीत को फ़ायक़ किया है]

बिन गुरु चरन और नहिं भावे। इस आनँद में रहे समाय ॥ ५ ॥

अर्थ—ऐसे गुरमुख को सिवाय गुरु चरन के कुछ अच्छा नहीं लगता है और वह इस के आनन्द में मगन रहता है—गुरु चरन से मतलब बाहर सतगुरु स्वरूप और अन्तर में उन की निज चेतन की धार यानी शब्द स्वरूप से है।

दरशन करत पिण्ड सुध भूली। फिर घर बाहर सुध क्या आय ॥ ६ ॥

अर्थ—दर्शन करते ही पिण्ड की सुध भूल जाती है

यानी अपने तन की ही ख़बर नहीं रहती तो घर मेँ या बाहर उस के क्या हो रहा है इस की भला क्या ख़बर रहेगी ।

ऐसी सुरत प्रेम रँग भीनी । तिन की गति क्या कहूँ सुनाय ॥ ७ ॥

अर्थ—ऐसी प्रेम रङ्ग मेँ भीगी हुई जिन की सुरत है उन की हालत क्या कही जा सकती है ।

जोग वैराग ज्ञान सब रूखे । यह रस उन मेँ दीखे न ताहि ॥ ८ ॥

अर्थ—जोग से यह मतलब है कि सुरत की धार को जो कि आँखोँ मेँ है उलटाना और चढ़ाना और चेतन धार से मिलाना—वैराग यानी संसार से उपराम होना और भोग बिलास से बृत्ति को हटाना—ज्ञान यानी जानने और निरनय करने की ताक़त—अगर यह तीनोँ भी किसी मेँ हैँ मगर निज चेतन धार का जो अमृत रस है वह हासिल नहीं हुआ है तो कुछ नहीँ है और जो रस कि उस चेतन धार मेँ पाया जाता है वह इन तीनोँ मेँ नहीँ है इस लिये वह रूखे फीके हैँ ।

बड़भागी कोइ बिरला प्रेमी । तिन यह न्यामत मिली अधिकाय ॥ ९ ॥

अर्थ—प्रेमियोँ मेँ भी कोई बिरला प्रेमी होता है जिस को यह अमृत रस बिशेष मिलता है ।

राधास्वामी कहत सुनाई । यह आरत कोइ गुरमुख गाय ॥ १० ॥

अर्थ—राधास्वामी दयाल फ़रमाते हैँ कि ऐसे पूरन

मिलाप की प्रीत के रस की महिमा कोई गुरमुख बरनन कर सकता है।

४—कहने का मुद्दा यह है कि जब तक मसाला ख़ारिज नहीं होगा तब तक यह हारेगा नहीं और न सरन ली जायगी और न आपा, बल, पौरुष दूर होगा यह आपा परदा है, इसी को अहंकार कहते हैं। जब आपा दूर होगा तब दीनता आवेगी, जब दीन होगा तब मालिक को सर्व समरथ समझैगा, जब तक अहंकार है तब तक मालिक का दरशन हरगिज़ नहीं होगा। ऋषि मुनि जो थे वे सब झूठे और अहङ्कारी थे, मसलन शृङ्गी ऋषि, पाराशर, नारद—उन का अहंकार तोड़ने के लिये उन की बुरी दशा की गई थी। ब्रह्म का दरशन भी जब तक नीचे दरजे का जो आपा है वह दूर नहीं होता तब तक नहीं होता है, ब्रह्म को भी आपा पसन्द नहीं है इसलिये ऋषि मुनियों को इस क़दर हँसी हुई और उन को लाज लगाई गई कि आज तक उन की निन्दा की बातें चली आती हैं।

५—भक्तजनों को भी हर तरह की तकलीफ़ होती है—कहीं लड़ाई झगड़ा है, कहीं लाज लगा के और निंदा कराके उन का आपा तोड़ा जाता है। कुटुम्बियों के साथ लड़ाई झगड़ा और दुख तकलीफ़ का होना तो गोया भक्त जन का गहना है और यह

निज दया है—देखो मीरा बाई को कि कितने झगड़े टंटे उन के पीछे लगाये गये थे। जिस क़दर जिसकी भक्ति है उसी क़दर लड़ाई झगड़ा दुख और तकलीफ़ उस के लिये पैदा किये जाते हैं मगर संसारी लोग जैसे आपस में लड़ते हैं और कचहरी में मुक़द्दमे करते हैं उस क़िस्म के लड़ाई झगड़े भक्तों की हालत में नहीं होते हैं बल्कि ऐसे जिनसे कि परमार्थी नफ़ा होवे। सतसंग में भींचा भींची ज़रूर होगी, कैसा ही कोई क्यों न हो उस की वहाँ गढ़त की जायगी, बग़ैर दुख और तकलीफ़ के काम नहीं होगा। और फिर ऐसा भी नहीं है कि रक्षा नहीं होती है, हर तरह राधास्वामी दयाल भक्त जन की सँभाल करते हैं।

॥ बचन १६ ॥

प्रीतम की याद का नाम प्रेम है और यही सुमिरन ध्यान है। जब तक घट में धार की आमद नहीं है तब तक याद नहीं आती है और इसके जतन से कुछ नहीं होता है।

प्रीतम की याद का नाम प्रेम है, जब याद आवेगी

तब प्रेम आवेगा, जहाँ याद है वहाँ प्रीतम आप मौजूद है, और जब वह मौजूद है तब याद बनी रहती है, और चूँकि प्रीतम कुल मालिक है तो जब उस की याद है तब गोया उस के चरन हिरदे में बस गये इससे भक्तजन निहायत ही मगन और सरशार रहता है विकारी अंग इसके झड़ते जाते हैं और सकारी अङ्ग प्रवेश करते जाते हैं। जितने कि परमार्थी काम किये जाते हैं उन में अगर प्रीतम की याद नहीं है तो वह फीके हैं, और जो याद है तो उन का फल भी मिलता है यानी प्रेम आता है नहीं तो ख़ाली है।

२—कहने का मुद्दा यह है कि जितने जतन किये जाते हैं उन सब से मालिक की याद का असर बड़ा भारी है। जब दया की धार आती है तब याद आती है और जब तक ऐसी हालत नहीं है तब तक भक्ती सिर्फ़ जतन है—अगर भजन भी किया सुरत मन भी सिमटे और प्रीतम की याद नहीं तो उसकी कुछ भी हैसियत नहीं है, वह करनी प्रेम से रहित है और छिलका है—

॥ कड़ी ॥

प्रेम बिना सब करनी फीकी। नेकहु मोहिं न लागे नीकी।
घट धुन रस दीजे॥

३—प्रेम मुक़द्दम है हर दम प्रीतम की याद करना यह भक्ती की रीत है, इसी को ध्यान कहते हैं, और यही सच्चा सुमिरन है—

॥ कड़ी १ ॥

गुरु याद बढ़ी अब मन में। गुरु नाम जपूँ छिन छिन में॥

॥ कड़ी २ ॥

खाते पीते चलते फिरते। सोवत जागत बिसर न जात॥
खटकत रहै भाल ज्यों हियरे। दर्दी के ज्यों दर्द समात॥
ऐसी लगन गुरू सँग जाकी। सो गुरुमुख परमारथ पात॥
जब लग गुरु प्यारे नहिँ ऐसे। तब लग हिरसी जानो जात॥

ध्यान तब होता है जब मालिक का या उस के औतार का दरशन नर शरीर मैं होता है, बग़ैर दरशन के ध्यान नहीं होगा और न प्रेम आवेगा।

४—जिस को प्रीतम की याद नहीं है उस मैं गोया ऊँचे देश की धार आई नहीं है, और जिसके चित्त की वृत्ती प्रीतम के जानिब मुख़ातिब है उसका घाट चाहे नीचा ही हो तौ भी सत्त देश की धार आकर उस मैं वासा करती है बग़ैर धार की आमद के चाहे कितना ही सुरत मन के समेटने के लिये खैंचा तानी करै और तिल के खोलने का जतन करै कुछ नहीं होगा। ख़याल या अनुमान करने से कभी सुरत मन नहीं सिमटैंगे न तिल का द्वारा खुलेगा। गुरु स्वरूप का जो ध्यान करते हैं वह स्वरूप चूँकि सत्तधार ने

धारन किया है उस का सूक्ष्म रूप जो इस के अंतर मैँ प्रगट होता है. वह मन के घाट का नहीं है वह रूप भी सत्त धार धारन करती है उस को हर दम हिरदे मैँ धारने से तिल का ताला खुलता है—

॥ कड़ी १ ॥

गुरु कुञ्जी जो विसरे नाहीँ । घट ताला छिन मेँ खुल जाही ॥

॥ कड़ी २ ॥

कहेँ कबीर निरभय हो हंसा । कुञ्जी बतादूँ ताला खुलन की ।

॥ कड़ी ३ ॥

दसवेँ द्वार कुञ्जी जब दीजे । तब दयाल का दरशन कीजे ॥

॥ कड़ी ४ ॥

अनहद बानी पुंजी । सन्तन हथ राखी कुंजी ॥

॥ कड़ी ५ ॥

ताते शब्द किवाड़, खोलो गुरु कुंजी पकड़ ॥
महल माहिँ धस जाय, गुरुमुख को रोकेँ नहीँ ॥

५—मालिक से मिलने के लिये सतगुरु गोया द्वारा हैँ, बग़ैर गुरू के मालिक से मेला हरगिज़ नहीँ हो सक्ता है । अभ्यास से अगर कोई मालिक से मिलना चाहे तो हरगिज़ नहीँ मिल सकता है । जो कुछ होता है मालिक की दया मेहर से होता है, इसके जतन से कुछ नहीँ होता है । जब तक जतन करता है मज़दूरा है, कुरम फल भुगतता है, चाहिये कि अलावा किसी

जतन के अन्तर में बिरह और खटक खलती रहे। जैसे पपीहा निस दिन स्वाँत बूँद के लिये पिउ प्यारा पिउ प्यारा पुकारता रहता है वैसे ही इस को दिन रात प्रीतम के नाम की रटन करनी चाहिये। अभ्यास का फल यही है कि तड़प और बेकली मालिक से मिलने की अन्तर में जागे और जब तक नेम से नपा तुला अभ्यास करता है तब तक कुछ नहीं है-

॥ साखी ॥

जहाँ प्रेम तहँ नेम नहिं तहाँ न बुधि ब्यौहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिने तिथि वार॥

६—सवाल—ध्यान किस तरह करना चाहिये, आप ने तो जतन और जुगती को उड़ा दिया ?

जवाब—जैसे किसान खेत का ध्यान करता है, सूम धन का, इस तरह ध्यान करना चाहिये, इस में कोई ख़ास जतन और जुगत की ज़रूरत नहीं होती है। जिस से मोहब्बत है उस का स्वरूप हरदम चित्त में समाया रहता है यही ध्यान है, यानी प्रीतम की प्रीत और याद का नाम सुमिरन ध्यान है, और यही जतन और जुगती का नतीजा है, और यह जो जतन करता है यानी आँखें बन्द करता है और ध्यान में बैठता है वह भी एक जुगती है उस प्रीत को पैदा करने के लिये जैसे मा तकलीफ़ के वक्त भी अपने बच्चे को

दूध पिलाना नहीं भूलती है या सूम को हर दम रुपियों की याद रहती है और ख़बर है कि कै रुपये खरे हैं और कै खोटे हैं, वैसे ही इस को दुख हो चाहे सुख हर दम प्रीतम की याद जो बनी रहै तो सच्चा ध्यान है। संसार में जिन को आपस में मोहब्बत होती है उन का ज़रूर कोई न कोई तअल्लुक़ है तब तो प्रीत करते हैं, वैसे ही मालिक से प्रीत के लिये भी ज़ाती तअल्लुक़ होना चाहिये यानी संसकार होना चाहिये, और जैसे संसार में हालत बदलती रहती है, कभी दुख कभी सुख होता है, वैसे ही परमारथ में भी होता है यानी कभी रूखा फीका होता है और कभी प्रीत प्रतीत आती है। जो कि संसकारी है उसको भी कभी सरन दृढ़ होती है कभी प्रेम आता है कभी शब्द सुनाई देता है कभी कुछ कभी कुछ होता है इस तरह हालत बदलती रहती है, लेकिन ऐसे संसकारी का बन्दोबस्त मालिक आप करता है जतन से कुछ नहीं होता है। अब इस का यह मतलब नहीं है कि जतन जुगती नहीं करना चाहिये, अगर जतन नहीं करेगा तो आलसी होजायगा—ऐसा बचन है कि अगर मौज पर रहोगे और जतन नहीं करोगे तो आलसी हो जाओगे, इस वास्ते मौज के आसरे जिस क़दर हो सके जतन करते रहना चाहिये।

७—मन इन्द्रियों के घाट पर बैठ कर मौज २ पुकारना ऐसा है जैसे ब्रह्मज्ञानी सिद्धान्त पद को हासिल किये बिना अपने को ब्रह्मज्ञानी कहते हैं, और जैसे उन्होंने धोखा खाया वैसे ही जो कि बिना जतन के मौज के आसरे रहते हैं धोखा खाते हैं। जब तक कि मन इन्द्रियों के घाट के परे नहीं पहुँचा है और मौज की परख पहिचान नहीं है तब तक जतन ज़रूर करना चाहिये। जतन में आपे की आमेज़िश है यह समझता है कि मैं करता हूँ और आपे से मालिक को नफ़रत है, जतन में रगड़ तपन और खैंचातानी है फिर भी जतन करते रहना और नतीजा मौज पर छोड़ना चाहिये। अगर संसकार है तो जतन से भी फ़ायदा होता है नहीं तो कुछ नहीं होता है। जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये जैसे देह का बढ़ाव होता है वैसे ही रूहानी ताक़त का भी बढ़ाव होता है यानी धीरे २ परमार्थी परवरिश पाने से इस में प्रीतम की प्रीत समाती जाती है और याद बढ़ती जाती है॥

॥ बचन २० ॥

जैसे कि कोई स्त्री अपने पति के ख़ुश करने को

अपना सिंगार करती है इसी तरह परमार्थी को मालिक के राज़ी करने के लिये अपना सिंगार बनाना चाहिये। परमार्थी का सिङ्गार सील छिमा और दीनता है सब से दीनता और निर्बलता के साथ बरते, अगर लड़ाई झगड़ा भी हो तो भी दीनता और सीलता के अङ्ग को न छोड़े, सब से प्यार और मोहब्बत रक्खे, तो उस के अन्दर से प्रेम की छींट उड़ कर दूसरे को भी सीतल कर देगी। हम लोग राधास्वामी दयाल के बच्चे मैल कीचड़ में भरे हैं, जब पिता प्यारे ने पानी डाला यानी प्रथम दया फ़रमाई तो मैल फूला, कुछ अर्से बाद रगड़ दिया यानी गढ़त फ़रमाई और फिर जल दया का छोड़ा तो निर्मल होगया तब उस को पोंछ कर कपड़ा पहिनाया और तेल लगा कर ज़ेवर से आरास्ता किया और चमक दमक देकर उस को ताज पहिना कर अपनी निज गोद में बिठाया यानी पूरन प्रेम की दात देकर अपने निज चरनों में खींच लिया, जीव को चाहिये कि ऐसी निर्बलता और दीनता करे जैसे बैंत होता है कि जिधर चाहो झुकालो या जैसे रुई साफ़ करके रक्खी जाती है कि उस में एक भी बिनौला या तिनका नहीं रहता इसी तरह कोई किसी क़िसम की अकड़ पकड़ जीव में बाक़ी न रह जावे।

॥ बचन २१ ॥

तमाम सतसङ्ग और भजन वग़ैरह से मतलब और नतीजा यह है कि मालिक के चरनौं का प्रेम हिरदे में बस जावे और उस के चरन एक छिन को जुदा न हौं इस लिये मालिक से यही प्रार्थना करना चाहिये कि मुझ को न तो कोई बड़ी समझ बूझ चाहिये न कोई ऊँचा मुक़ाम और न रचना की कैफ़ियत देखना दरकार है, मुझ को तो दया करके अपने चरनौं का प्रेम बख़्शिये—

॥ कड़ी ॥

चरन न भूले देह भुलानी। वाह मेरे प्यारे राधास्वामी॥

मुझ को तो हमेशा अपने चरनौं में रखिये चरनौं से कभी जुदा न कीजिये—

॥ कड़ी ॥

छिन नहिं बिछड़ूँ चरन सरन से। यही दास को बख़्शिश होय॥

जो कोई सच्चे तौर से ऐसी माँग माँगता है उस को प्रेम का किनका ज़रूर बख़्शिश होता है, देरी का सबब यही है कि अभी हमारा हिरदय इस क़ाबिल नहीं है कि मालिक का नूर झलके जब हमारे हिरदय को अपने बैठने के लायक़ और आँखौं को अपने दे-

रखने के लायक़ बना ले तब अपने चरन कँवल बिराजमान करे। जितनी परमार्थी कार्रवाई है उस का नतीजा और फल यही है, जैसे गुलाब का पेड़ जो बोया जाता है और उस के शाख़ और पत्ते निकलते हैं और फिर फूल निकलता है और फिर उस फूल का अर्क़ या इत्र खींच लिया जाता है और जब इत्र निकल आया तो डाल और पत्ते से कुछ मतलब नहीं और इत्र खींचने के बाद वह फोक सब फैंक दिया जाता है इसी तरह परमार्थ में जब मालिक के चरनों से मेला हुआ और हर दम उसके चरनों का प्रेम हिरदे में बस गया तब और परमार्थी कार्रवाई जैसे सतसंग और सेवा वग़ैरह से कुछ ज़ियादा सरोकार नहीं रहता फिर दूसरे नंबर पर यह कार्रवाइयाँ रह जाती हैं।

॥ बचन २२ ॥

दीनता सुरत का अंग है और अहंकार मन का अंग है क्योंकि सुरत अंतर के अंतर शब्द से मिली हुई और उस की तरफ़ मुतवज्जह है और मन अपने ही नुक़्ते पर घूमता है और बाहर की तरफ़ रुजू है और नुक़्ते से मतलब यह है कि मन उस चीज़ पर जिसमें

स को नफ़े की आशा है या जिस में इस की बड़ी
कड़ और प्रीत है घूमता है और उसी का इस को
अहंकार है—चूँकि इन दोनों के असली सुभाव यह हैं
इस वास्ते इन की आपस में मुख़ालिफ़त है क्योंकि
देखा जाता है कि जो शख़्स बड़ा अहङ्कारी शेख़ी-
बाज़ अकड़ कर चलनेवाला है या कोई दिखावे का
काम करता है तो लोग उस को नापसंद करते हैं और
ख़ामख़ाह तबीयत चाहती है कि किसी तरह इस का
अहङ्कार झाड़ा जावे, वजह यह है कि इस अंग से सु-
रत को ज़ाती नफ़रत है तो ज़ाहिर है कि उसके अंशी
यानी मालिक को भी इस अंग से मुख़ालिफ़त और
नफ़रत होगी और जब कि सब कोई दीनता को पसंद
करता है इसी तरह मालिक को भी दीनता पसन्द
होगी इस वास्ते मालिक की यही मौज है कि जिस
तरह हो सके इस मन का आपा रेता जावे इस
मतलब से हमेशा मन के ऊपर ताड़ मार होती रह-
ती है और कौंचा काँची बराबर जारी रहती है
क्योंकि जब तक मन का आपा नहीं टूटेगा और दीन-
ता न आवेगी तब तक सुरत का शब्द से मेला नहीं
होगा और मालिक का दीदार प्राप्त न होगा सो यह
कार्रवाई मालिक की ख़ास दया से भरी हुई है लेकिन
जीवों को बुरी मालूम होती है जैसा कि इस मिसाल

से ज़ाहिर होगा—एक पिंजरा ऐसा ख़्याल करो कि उस में कई ऊपर तले के दरजे हैं और हर एक ऊपर का दरजा नीचे के दरजे से ज़ियादा बेहतर और आराम-देह है अब अगर सब के नीचे के दरजे में कोई परन्द मसलन एक तोता हो और उस को ऊपर के दरजे में ले जाना चाहैं तो उस को कौंचा जाता है और वह उस के फ़ायदे के वास्ते है इसी तरह इस जिस्म में दर्जे हैं और मन ऊपर चढ़ाने के लिये कौंचा जाता है। अलावा इस कार्रवाई के एक तरकीब दीनता के आने की और है वह यह है कि मालिक के चरनों में प्रेम आवे जब प्रेम आवेगा तो ख़ुद बख़ुद दीन अधीन हो जावेगा और तमाम आपा इस का ग़ायब हो जावेगा अगर प्रेम की छींट भी उड़ कर लगैगी या थोड़ी भी बिरह उस के दर्शनों की होगी तो बहुत मुफ़ीद है और जल्द काम बनावेगी।

मिसाल दीनता की—जैसे बच्चा कि उस में किसी तरह की मान बड़ाई और अहंकार कुछ नहीं है कैसा सब को प्यारा लगता है हर कोई उस को गोद में उठा लेता है सबब यह है कि अभी सुरत उस की किसी क़दर असली हालत में है और लड़ाई झगड़ा जो मन का अंग है उस से पाक है। सुरत दीनता स्वरूप शब्द स्वरूप प्रेम स्वरूप और आनंद स्वरूप

अपने में आप मगन है और यही मालिक का भी स्वरूप है। जब मन का परदा हटै तब सच्ची दीनता ज़ाहिर हो सो यहाँ तो पिण्डी मन का परदा है इस के ऊपर निज मन का परदा है उसके आगे महाकाल है जहाँ से कि अहं शब्द प्रगट हुआ तो जब तक सुरत ब्रह्मांड के पार न होगी तब तक कोई न कोई आपा रहैगा और ताड़ मार भी थोड़ी बहुत जारी रहैगी।

सवाल—जब सुरत दीनता स्वरूप है और मालिक भी दीनता स्वरूप है तो यह जो बचन किसी महात्मा का है कि मालिक कहता है कि मेरे पास वह चीज़ लेकर आ जो मेरे पास नहीं है और वह सच्ची दीनता है इस का क्या मतलब है?

जवाब—इस दीनता से मतलब सच्ची ग़रज़मंदी से है और उस दीनता से मतलब अपने आप में मगन होने से है सो नतीजा दोनों का आख़िर में एकही है।

॥ बचन २३ ॥

प्रेम से सब रचना हुई है और क़ायम है और प्रेम से ही प्रकाश है, देखो सूरज और चाँद वग़ैरह में जो इस क़दर प्रकाश है वह प्रेम की ही छटा से है और

...ना तअल्लुक़ रखते हैं यह सूरज चाँद वग़ैरह पिण्ड से ...और हर नूर होगा, फिर ब्रह्मांड में किस क़दर प्रकाश और ...हुतसी क़दर और जिस क़दर प्रेम का प्रकाश होगा उ... दूर। चाँद अँधेरा माया का कम होगा। इस सूरज और ...कुंड में के क़रीब किस क़दर लतीफ़ माया है फिर ब्रह्मां... हीं बहुतही ज़ियादा लतीफ़ माया होगी। जहाँ प्रेम ... है वहाँ माया का ग़लबा होगा और जहाँ प्रेम ... नूर मौजूद है वहाँ माया का अंधेरा नहीं रह सक्ता ... सत्त लोक में प्रेम का सिंध है वहाँ जो थोड़ी माया है भी तो वह भी उसके प्रताप से सत्त क़ुदरत और प्रकाशवान हो रही है फिर जहाँ कि प्रेम का सोत पोत है वहाँ के नूर का क्या अंदाज़ हो सक्ता है वहाँ तो अंधेरे का नाम निशान भी नहीं है।

२—जिसके घट में प्रेम प्रगट हो उस की महि... क्या कही जा सक्ती है। जब प्रेम प्रगट हुआ तो ... सब अंधेरा दूर हो जाता है। बानी में कहा है कि हंसों का जिस्म बारह २ सूरज के नूर के मुवाफ़िक़ प्रकाश रखता है और हंसिनियों का चार २ सूरज के मुवाफ़िक़। प्रेम सब जगह मौजूद है और सब के घट में इस का प्रकाश है अलबत्ते इतना फ़र्क़ है कि कहीं बूँद रूप और कहीं लहर समान और कहीं सिंध स्वरूप और एक जगह प्रेम का सोत पोत है। प्रेम

का प्रकाश घट घट मैं इसी तरह मौजूद है जैसे दूध मैं घी या काठ मैं अग्नी। अब अगर दूध मैं से घी निकालना मंज़ूर हो तो उस को बिलोना चाहिये और अगर काठ मैं से आग निकालना चाहैं तो किसी ऐसी चीज़ के पास ले जावैं कि जिसमैं शोला प्रगट हो—ऐसी चीज़ सन्त सतगुरु हैं, वही प्रेम की चिनगी इस के घट मैं लगावैंगे और वही उस को रोशन करने के लिये जब जब जैसा मुनासिब होगा जतन करैंगे। जैसा कि आग रोशन करने के लिये जतन करना होता है तो जिस लकड़ी को प्रकाश स्वरूप बनाना मंज़ूर है उस को जलती हुई लकड़ी के पास रख देना चाहिये या जो जलती हुई लकड़ी न मिले तो कई लकड़ियाँ को जिन मैं चिनगी पड़ी हुई है इकट्ठा रखने से भी थोड़ी देर मैं शोला बरामद होगा; इस से मतलब साधसंग से है साधसंग से भी प्रेम की तरक्क़ी हो सक्ती है मगर जल्दी काम संत सतगुरु से ही बनेगा॥

॥ भाग छठवाँ ॥

॥ मिश्रित ॥

॥ बचन १ ॥

बाज़े सतसंगियों की ख़ाहिश होती है कि आम तौर पर सन्त मत प्रगट किया जावे और कोई पैम्फ़्लेट (छोटी पुस्तक) छप जावे मगर अभी मौज नहीं है संसारी लोगों को क़दर नहीं है पढ़ेंगे और बहुत हुआ तो कहेंगे वेरी एक्सट्राआर्डिनरी (यानी बहुत अनूठा है) और चुप करके पुस्तक ताक़ पर धर देंगे कहने का मुद्दआ यह कि संत मत अधिकारी प्रति है अन अधिकारी प्रति नहीं है, जैसे अगले ज़माने में ओंकार का मंत्र सिर्फ़ अधिकारियों को बतलाते थे अनअधिकारियों को नहीं सुनाते थे इसी तरह आम तौर पर सन्त मत प्रगट करने के लिये अभी जीवों का अधिकार नहीं है, वैसे तो बचन बानी स्वामी जी और हुज़ूर महाराज के मौजूद हैं और २ भी वक़्त मुनासिब पर होंगे मगर लोग नाचने लगेंगे जितनी उन की साइंस (इल्म) की थियरीज़ (ख़यालात) हैं सब रेड़ हो जावेंगी।

२—विलायत के लोग संतमत के अभी लायक़ नहीं हैं, इन की बेरूनी ताक़त बड़ी तेज़ होती है ख़ास करके क्रोध अङ्ग उन में विशेष होता है और रग रग उन के भरम से भरे हुए हैं। यह जब सतसंग में आवेंगे तब बड़ी २ सूरतें पैदा करेंगे और बड़े नख़रे मचावेंगे, यानी मन उन का बड़ा चक्कर लावेगा॥

३—बानी में बाज़ ऐसे लफ़्ज़ हैं कि लोग समझते हैं कि हँसी की है मगर एक २ अक्षर में गूढ़ मतलब हैं मसलन॥

"गुरू का मैं दामन पकड़ा।
नहीं छोड़ूँ अब तो जकड़ा॥"

इस शब्द में जो कहा है।

"अब कटा क्रोध का लकड़ा।
और मरा लोभ का बकरा।
मैं मारा मन का मकड़ा॥"

इस का अर्थ यह है कि जैसे लकड़ा ख़ुश्क होता है वैसे क्रोध भी ख़ुश्क होता है तो क्रोध को जीतना गोया ख़ुश्क लकड़ी को काटना है। लोभ से यह मतलब है कि दुनिया के सामान में तवज्जह करना, जैसे बकरा पत्ते को खाता है कहीं इधर झक मारा कहीं उधर झक मारा वैसे ही संसार के जीव भी दुनिया के पदार्थों के पीछे मर रहे हैं और झुर रहे हैं तो

पत्तौं को न खाना यानी दुनिया के सामान के पीछे न पड़ना लोभ का बकरा मारना है। और मन का मकड़ा, जैसे मकड़ा जाल बिछाता है वैसे ही मन भी जाल बिछाता है इस को तोड़ना यह मन का मकड़ा मारना है—प्रेम बानी के लफ़्ज़ मुश्किल नहीं हैं मगर इन में भी गुप्त भेद हैं विद्या बुद्धी वाले अनुभवी बातौं को क्या समझ सकते हैं और यहाँ बुद्धी चतुराई का काम नहीं है यहाँ तो प्रेम का खेल है।

॥ कड़ी ॥

बुधि बल से वह करते तोल।
कभी न पावें डाँवा डोल॥
यह मारग है प्रेम भक्ति का।
चलना चढ़ना सुरत शब्द का॥

॥ बचन २ ॥

सार बचन नसर के २५० बचन में लिखा है कि जिस को पूरे सतगुर मिले और वह उन की सेवा और सतसंग और प्रीत और परतीत भी करता है पर इस अरसे में पूरे सतगुरु गुप्त हो गये और उस का काम अभी पूरा नहीं हुआ यानी कुछ अन्तर में नहीं खुला तो जो उस की चाह है कि मेरा काम

पूरा होवे तो जो सतगुरु के बनाये हुए सतगुरु मिलें तो उन से वैसे ही प्रीत और परतीत और उन की सेवा और सतसङ्ग करे और सतगुरु पहले को उन्हीं में मौजूद समझे। जानना चाहिये कि पूरा काम बनने से मतलब यह है कि जिस की सुरत ने मुख्य अंग से अन्तर में रसाई की है। और फिर उसी बचन में कहा है कि "पिछलों का अक़ीदा यानी मानना इस सबब से बेफ़ायदा है कि उन से प्रीत नहीं हो सकती न तो उन को देखा है और न उनका सतसंग किया, और जो सतगुरु मिले नहीं तो उन के चरनों में प्रीत नहीं हो सकती इस वास्ते अनुरागी यानी शौक़ीन सेवक को चाहिये कि सतगुरु प्रत्यक्ष से यानी अपने वक़्त के से प्रीत करे और सतगुरु पहिले में सिवाय देह स्वरूप के भेद और फ़र्क़ न करे और अपना काम पूरा करवावे—इस बचन में दो हिस्से कुछ आपस में ज़िद्दैन मालूम होते हैं और लोग इस पर हुज्जत करते हैं और कहते हैं कि यह बचन सिर्फ़ उन के लिये है जिन को सतगुरु का दरशन नहीं हुआ और हम को जो सतगुरु का दर्शन सतसंग और सेवा मिली फिर दूसरे गुरू करने की क्या ज़रूरत है, मगर यह उनकी ग़लती है। इस बचन में जिनको सतगुरु मिले और काम पूरा नहीं बना और जिनको सतगुरु

नहीं मिले दोनों के वास्ते हिदायत है। "पिछलों का अक़ीदा बाँधना बेफ़ायदा है,, यह उन को हिदायत है जिनको सतगुरु नहीं मिले और यह मज़मून बीच में बतौर एक दूसरे ज़िक्र के आया है मगर उस मज़मून से जो निसबत उन के है कि जिन को सतगुरु मिले और काम पूरा नहीं हुआ ग़ैर मुतअल्लिक़ नहीं है—असल में दोनों एक दूसरे से बड़ा तअल्लुक़ रखते हैं—अगर इस बचन में इस तरह की इबारत की ज़ाहिरी नामुवाफ़िक़त न होती तो निरनय की ज़रूरत न थी, ग़रज़ यह कि जिसको सतगुरु मिले और काम पूरा नहीं हुआ और जिसको सतगुरु नहीं मिले दोनों के वास्ते वक़्त के सतगुरु के करने की ज़रूरत है॥

२—मालूम हो कि यह बचन लाला सुदर्शन सिंह के सवाल का जवाब है, उन्होंने स्वामी जी महाराज से ख़त में दरियाफ़्त किया था स्वामी जी महाराज ने हुज़ूर महाराज को जवाब लिखने के लिये कहा और जो हुज़ूर महाराज ने लिखा था वह स्वामी जी महाराज ने सुना और कहा ठीक है लाला सुदर्शन सिंह को भेज दो। जब स्वामी जी महाराज ने चोला छोड़ा तब लोग हुज़ूर महाराज को मत्था टेकने लगे और गुरू भाव में बरतने लगे लेकिन हुज़ूर महाराज मंज़ूर नहीं करते थे तब लाला सुदर्शन सिंह साहब

ने कहा कि आप का ही लिखा हुआ ख़त मेरे पास रक्खा है उस में तो ऐसा लिखा है कि जिस का काम पूरा नहीं हुआ है उस के लिये संतगुरु वक़्त की ज़रूरत है और वह खत ले आये वह यह बचन है।

३—और उसी बचन में साफ़ २ कह दिया है कि जब सतगुर गुप्त होते हैं तब उस वक़्त किसी को अपना जानशीन मुक़र्रर करके उस में ख़ुद आ समाते हैं यानी अपने निज अंश में आ समाते हैं और किसी दूसरे में नहीं समाते मगर लोग इस बचन को नहीं पढ़ते हैं और न पढ़ना चाहते हैं हठ बस होके यानी अपमान का ख़याल करके नहीं मानते हैं दूसरे जन्म में झक मारके मानना पड़ेगा।

४—सवाल कोई कहते हैं जब सतगुरु गुप्त होते हैं तब उन की सुर्त सत्त लोक में जाती है फिर वह दूसरी देह में जिस में कि आगे ही रूह है कैसे आ समाती है ?

जवाब—जैसे समुद्र में से लहर के पीछे लहर चली आती हैं [कराँची में तो सब ने देखा था समुद्र में बराबर एक के पीछे दूसरी लहर चली आती थी] वैसे ही भंडार से भी धार एक के पीछे दूसरी बराबर चली आती है जो धार का आना ही बन्द हो जावे

तो और बात है मगर वह तो होगा नहीं क्यौंकि हुक्म है सब जीवौं का उद्धार करना है।

॥ कड़ी ॥

गुरु प्यारे करें आज जगत उद्धार।

अगर किसी को परख पहिचान करनी हो तो कुछ दिन संग रह कर देखे अलबत्ता करामात नहीं दिखाते हैं सुर्त मन के सिमटाव और चढ़ाई से परख पहिचान कर ले बाज़ीगर जैसे बाज़ी करता है वह खेल यहाँ नहीं है और न आगे ऐसा था अलबत्ता कभी २ अपनी बु.ज़ुर्गी और बड़ाई का लखाव करा देते हैं अगर किसी को पहिचान करनी हो तो जैसे आगे की थी (यानी हुज़ूर महाराज और स्वामीजी महाराज के वक़्त में] वैसे ही अब भी कर ले मगर हठ बस होके उस वचन को नहीं मानते हैं—कोई कहते हैं यह बचन स्वामी जी महाराज का नहीं है यह उन की ग़लती है इस का जवाब इस बचन की दफ़ा २ में आ चुका है।

५—सवाल—इसी यचन में लिखा है कि जब सतगुरु वक़्त गुप्त होते हैं वह उस वक़्त किसी को अपना जा नशीन मुक़र्रर करके उस में ख़ुद आ समाते हैं और जब मौज ऐसी कार्रवाई की नहीं होती है तब अपने धाम में जा समाते हैं हुज़ूर महाराज ने गुप्त

होने के वक़्त अपना जा नशीन ज़रूर मुक़र्रर किया होगा ?

जवाब—हाँ सन्त नित्य अवतार हैं कोई ऐसा वक़्त नहीं कि सन्त नहीं होते हैं।

सवाल—यह तो गुप्त सन्तों की बात है प्रगट संतों की बात को गुप्त सन्तों से क्यों मिलाया जाता है?

जवाब—सतगुरु जब गुप्त होते हैं तब बग़ैर सतगुरु के पिंड में रसाई सतसंग और अभ्यास करने से हो सकती है और जीवों का काम बदस्तूर जारी रहता है जैसे हम लोग सब आपस में भाई हैं मिलकर सत-संग और चर्चा करते हैं जब ज़रूरत होगी तब सतगुरु भी प्रगट होंगे।

॥ बचन ३ ॥

॥ निर्मल बुद्धि और जहल मुरक्कब ॥

निर्मल परमार्थी बुद्धि का हासिल करना निहा-यत ही दुर्लभ और बड़ा मुशकिल है थोड़ा सा पर-मार्थ करके अपने को पूरा समझना यह महज़ गँवार-पना और नादानी है यानी एक तो न जानना और

दूसरे समझना कि मैं जानता हूँ येही कम्पौण्ड इग-नोरेन्स (Compound ignorance) यानी जहल मुरक्कब है।

जब तक अन्तःकरन के अस्थान पर जहाँ कि मन के बिकारी अङ्ग सब मौजूद हैं बैठा हुआ है तब तक इस की समझ बालकपने और गँवारपने की है इस से कहना चाहिये कि तुम औरों को क्या सम-झाते हो समझाने वाला आप समझा लेगा तुम को चाहिये कि अपने जीव के कल्यान का फ़िकर करो।

विद्या बुद्धि और चतुराई का यहाँ काम नहीं है कुछ दिन बहू बेटे और माल असबाब का मोह छोड़ कर चेत कर सतसंग करो तो ख़बर पड़े कि परमार्थ क्या चीज़ है बाज़ साधू या कोई गृहस्थी इधर उधर की बातें सीख कर औरों को उपदेश देने लगते हैं यानी अपना मन तो थिर नहीं किया है औरों को धीर बँधाते हैं और अपने लिये तो पानी प्राप्त नहीं औरों को क्षीर बख़शते हैं ऐसे लोग अक्सर धोखा खाते हैं विद्या बुद्धि और चतुराई यह भी एक काल का विघन है।

॥ कड़ी ॥

विद्या भी बुद्धि विषय पिछानो। यह आशक्ती भली न जान।

२—एक तो जोश और उमँग की हालत होती है यानी क़ुदरती जोश और उमँग में राधास्वामी दयाल

की महिमा और गुन गाना, यह तो मालिक की निज सेवा है उस पर दया नाज़िल होती है, वहाँ आपा नहीं है, वहाँ जो कुछ है राधास्वामी दयाल की मौज का इज़हार है, मगर दूसरी हालत विद्या बुद्धि और चतुराई की है ज़रा सी बात को इधर खींचेंगे उधर तानेंगे मसलन कहेंगे ब्रह्म माया सबल है ऐसे है और वैसे है यह आपे की कार्रवाई है कहाँ वह हालत और कहाँ यह हालत यहाँ आपे की बखेर है और वहाँ प्रीत का इज़हार है—

॥ कड़ी ॥

वचन गुरु सुन सुन मोहित मन । प्रीत लगी अब राधास्वामी चरनन ॥

फ़ारसी में कहा है—

आँ कस कि नदानद व विदानद कि बिदानद ।
दर जिहल मुरक्कब अबदुद्दहर बिमानद ॥
आँ कस कि विदानद व विदानद कि नदानद ।
असपे तरबे ख़ेश व अफ़लाक रसानद ॥

यानी जो शख़्स कि नहीं जानता है और समझता है कि मैं जानता हूँ वह हमेशा जिहालत की हालत में रहता है और जो शख़्स जानता है और समझता है कि मैं कुछ नहीं जानता वह अपनी ख़ुशी का घोड़ा आसमान में पहुँचाता है यानी दायमी ख़ुशी हासिल करता है ।

३—कहने का मुद्दा यह कि जिहल मुरक्कब का रोग बड़ा भारी है अगर और न हुआ तो शायरी और तुक बन्दी होने लगी यह भक्ती की रीति नहीं है राधा-स्वामी दयाल की भक्ति करना दीनता करना सतसंग अंतर और बाहर करना यह सतसंगी को चाहिये और जहाँ कि मौज का इज़हार हो रहा है वहाँ की बात जुदा है वहाँ हर जगह मालिक ही नज़र आता है आपे की गुञ्जाइश नहीं है ॥

॥ बचन ४ ॥

॥ अन्तरी स्वरूप का दर्शन ॥

अक्सर लोग ख़ाहिश करते हैं कि अन्तर में दर्शन मिले ख़ाहिश तो अच्छी है मगर पूरे गुरू का दर्शन ऊँचे घाट पर होता है जब इसका चेतन्य बि-शेष होगा तब सुरत बरामद की जावेगी नहीं तो बी-मार हो जावेगा या चोला छूट जावेगा। बाज़े वक्त़ सुपने में जब ज़ियादा सिमटाव होता है तब दरशन होता है मगर असल दर्शन और भी दूर है पुकार और प्रार्थना करते रहना चाहिये जब क़ाबिलीयत होगी तब मंजूर होगी वह दर्शन नीचे घाट पर नहीं होता

ऊब होगा सुरत मैं उलट फेर हो जावेगा काया मैं खलबल मच जायगी--जब कि बीमारी ऐसी होवे जिस मैं तन सूख जावे खाट से लग जावे और मन मसल मसल कर महीन हो जावे या तंगी ऐसी सख़्त होवे कि पटरा हो जावे जिगर और हिरदा हिलने लगे कलेजा काँपने लगे तब अलबत्ता दर्शन हो सकता है--

॥ कड़ी ॥

घोर उठा घट भीतर भारी। उमगा हिरदा चोट करारी।
जिगर फटा दिल टुकड़े हुआ। तब राधास्वामी का दरशन लिया॥

चेतन धार का हटना यही जिगर का फटना है जैसे बीमारी मैं धार खिंच जाती है।

२--इस लिये बेहतर है कि जिस घाट पर बैठा है अभ्यास करता रहे चाह तरक़्क़ी की रक्खे जब वक़्त आवेगा तब वह असल दर्शन भी हो जावेगा ख़्वाहिश अंतर मैं यही रहे कि मोहनी स्वरूप का दर्शन होवे--

॥ कड़ी ॥

मन मोहन निज रूप तुम्हारा। मेरे हिये मुकर मैं धर दो।

इस तरह जब थोड़ा बहुत सतसंग और अभ्यास करता है तब इस को समझ आती है और तजरबा होता है कि किस क़दर भारी काम है और जो कुछ होता है मालिक की मेहर से होता है वरना मेरे मैं

कोई ताक़त नहीं है और जो कुछ परमार्थी लाभ फ़िल-हाल हो रहा है उस को ग़नीमत समझ कर मालिक की दया का शुकराना हरदम अदा करता रहे।

॥ बचन ५ ॥

॥ पूरे संसकार का लखाव ॥

सतगुरु के सनमुख आने से ही सुरत मन का सिमटाव होवे और सहसदल कँवल में चढ़ जावे चाहे उपदेश लिया हो या न लिया हो इसको पूरा संसकार कहते हैं यह खेल और है जब कि बीमारी हो व तन मन सूख जावँ हड्डी हड्डी की धूल उड़ने लगे तब सुर्त मन का सिमटाव हो वह दर्जा नीचा है। अगर कोई दिन रात भजन करे, सतसंग करे, नाम का सुमिरन करे और सुरत मन का सिमटाव नहीं है तो कर्म है—अच्छा है करता रहे एक रोज़ ऐसी हालत हो जावेगी। और जिस में कि पूरी क़ाबिलीयत है यानी चेतन भरपूर है वह सुरतवंत है वह सतगुरु के सनमुख आते ही खिंच जाता है और अन्तर में दर्शन पाने से फ़ौरन उस की प्रीत प्रतीत जागती है और वही संसकारी है।

२—जैसे भृङ्गी कीट की तलाश में रहता है और शब्द सुनाता है जोकि लायक़ है उस को अपने जैसा कर लेता है इसी तरह अगले जो संत महातमा हुए हैं वह संसकारी जीवों की खोज और तलाश में निकलते थे और उन को ही सिर्फ़ उपदेश करते थे आम तौर पर जैसे कि अब राधास्वामी दयाल दया फ़रमा रहे हैं उपदेश नहीं करते थे और न समझौती देते थे मगर आज कल की नई रोशनी वाले विद्या बुद्धी के ग़ुलाम हो रहे हैं अपनी चतुराई और बुद्धी को पेश किये बिना मानते नहीं है जब तक उनकी बोली में उन को नहीं समझाया जाता है तब तक क़दर नहीं करते—

॥ कड़ी ॥

बुधिवानों की बुद्धि हिराई। विद्यावान नहीं कुछ पाई।
बुधि और विद्या दोनों हारे। सन्त मते पर सिरधुन मारे।
बुधिविचार से समझा चाहें। कभी न पावें भटका खावें॥

३—रूह कोई अलहदा ताक़त है इस को विद्या बुद्धी वाले नहीं मानते हैं इन का कहन है कि चन्द ताक़तों की मिलौनी से एक नई ताक़त पैदा होती है जिस को रूह कहते हैं और वह मरने के बाद नेस्त व नाबूद हो जाती है यह उन की ग़लती है जितनी ताक़तें हैं मसलन गर्मी रोशनी बिजली वग़ैरह सब का भंडार

है तो रूह का भी ज़रूर कोई मख़ज़न यानी भंडार होगा और कितनी ही ऐसी रूहें आज कल पैदा हुई हैं जिन्हों ने अपने अगले जनम का हाल बयान किया है तो ज़ाहिर है कि उन का कहना ग़लत है सायंस वाले कहते हैं कि हवा में गरमी है तब सोज़िश होती है मगर क्यों ऐसा होता है क्या इस का कारन है इससे नावाक़िफ़ हैं और कहते हैं कि वज़नदार माद्दे पर आकर्षण शक्ति का असर होता है। ईथर (आकाश) बेवज़नदार है इस पर आकर्षण शक्ति का असर नहीं होता और अगर सब वज़नदार माद्दे का रूप बेवज़नदार हालत में बदल दिया जावे तो भी आकर्षण शक्ति का असर नहीं होता तो अब बतलाइये कि कैसे आकर्षण शक्ति सब ताक़तों पर हावी हो सकती है सिर्फ़ रूह ही एक ताक़त है जो सब पर हावी है और सब पर हुकूमत करती है।

४—यह लोग विद्या नारि के ग़ुलाम हैं किसी के कहने को नहीं मानते हैं विद्या नारि के ज़रिये से समझाए जाएं तब मानते हैं इस लिये इनके वास्ते यानी सायंटिफ़िक (विद्या के) तर्ज़ में सन्त मत समझाया जाता है। आगे जो संत हुए उन्होंने मामूली तौर पर बचन कहे अब सायंस की बोली में समझाया जावेगा।

सवाल—सिर्फ़ गुरुमुख ऐसा संसकारी होता है कि दर्शन करते ही सुरत मन सिमटते हैं या और भी जीव ऐसे होते हैं।

जवाब—और भी होते हैं मगर बहुत कम।

॥ वचन ६ ॥

मौज से मुवाफ़िक़त करना किस को कहते हैं ॥

उलटी सुलटी हालत में खुश होके शुकराना अदा करना बल्कि दुख सुख को भूल जाना और मालिक के चरन रस में ऐसा मगन और सरशार होना कि कि दुख सुख की ख़बर भी न हो इस को मौज से मुवाफ़िक़त करना कहते हैं।

॥ कड़ी ॥

कभी मेहर से शहद देवें तुझे। मुनासिब समझ ज़हर देवें तुझे।
तू चुप होके ले और सिर पर चढ़ा, तू ख़ुश होके पी और कह यह सदा।
कि धन २ है धन २ हैं सतगुरु मेरे। उतारेंगे भौजल से बेशक परे॥

दृष्टांत—एक भक्त और भक्तिन किसी महात्मा के के पास आया करते थे बहुत ही सेवा और भक्ती की एक दफ़ा महात्माने उनके इम्तिहान लेने के लिये कहा

कि हम तुम्हारे लड़के का बलिदान लेना चाहते हैं तुम दोनों अपने हाथ से तलवार लेकर उस का गला काटो अगर तुमहारी आँखों से आँसू निकला तो वह बल हमारे काम का नहीं रहेगा दोनों ने ख़ुशी से मंजूर किया लड़के से पूछा उसने भी बड़ी ख़ुशी से क़बूल किया बल्कि अपना भाग सराहा कि मेरा तन मा बाप और गुरू की सेवा में काम आता है, तब वह महात्मा के सामने आये मा ने दोनों हाथ से लड़के के हाथ और पाँव पकड़े और बाप तलवार चलाने लगा तो बाप की बाईं आँख से आँसू टपकने लगा महात्मा ने कहा कि बस यह बल अपवित्र हो गया उस ने कहा कि यह दायाँ हाथ तो सेवा कर रहा है और बायाँ हाथ ख़ाली है इस लिये बाईं आँख रो रही है गुरू सुनकर प्रसन्न हुए लड़के को बचा लिया और तीनों पर दया दृष्टि की।

२—कहने का मुद्दा यह है कि जैसा कि कहा है—

ज़िल्लत इज़्ज़त जो कुछ होवे। मौज विचारो कर भक्ती॥

भक्ति मारग में जब ज़िल्लत होती है तब तो ऐसा कहा है फिर किसी को किसी तरह की शिकायत करने की गुंजाइश कहाँ है, मान अपमान समान सम-

भक्ती का मारग झीना रे।
नहिँ अचाह नहिँ चाहना चरनन लौलीना रे॥

न तो चाह होवे न अचाह यानी न रग़बत होवे न नफ़रत साधारन सुभाव होना चाहिये, यहाँ की आस बास छोड़ के निरबास जब होगा तब मौज से मुवाफ़िक़त कर सकता है वरना जब तक बन्धन है तब तक मौज से मुवाफ़िक़त नहीं कर सकता।

३—जैसे घास के ढेर मैं चिनगी डालने से कूड़ा करकट सब जल जाता है वैसे ही मौज धार जहाँ प्रगट होती है वहाँ विकारी अंग सब नाश हो जाते हैं और अन्तर बाहर उस की कार्रवाई एकसी होती है ऐसा नहीं कि बाहर से मौज २ कहना और क्रोध बिरोध की कमान चढ़ाये रहना—जो कि सच्चे भक्तजन हैं उन की बात निराली है जैसे कोयल अपने बच्चे को कौवे के घोसले मैं छोड़ आती है जब बड़ा होता है तब उस को अपनी बोली सुनाकर साथ ले जाती है वैसे ही भक्त जन जहाँ तहाँ संसार मैं पलते हैं जब वक़्त आता है तब सतगुरु आकर सत्तदेश की बोली और भेद सुनाकर उनको अपने संग ले जाते हैं।

४—मतलब यह है कि उलटी सुलटी हालतों मैं मौज से मुवाफ़िक़त करना और भक्ति मारग मैं मुस्तक़िल रहना सूरमाओं का काम है और जो कायर हैं

उन की जब तक ख़ातिर और ख़ुशामद होती है तब तक तो उन को भक्ति भी प्यारी लगती है और जो कहीं गड़बड़ होने लगी और मन के ख़िलाफ़ कार्रवाई शुरू हुई तो भागने को तैयार हुए भक्ति तो यह है जो उलटी सुलटी हालतों में क़ायम रहे बल्कि क़दम और आगे बढ़ता रहे।

॥ साखी ॥

भक्ति भाव भादों नदी, सभी चलीं घहराय।
सलिता सोइ सराहिये, जो जेठ मास ठहराय॥

॥ साखी ॥

भक्ति दुहेली गुरू की, नहिं कायर का काम।
सीस उतारे भुइँ धरे, सो लेसी सतनाम॥

॥ बचन ७ ॥

॥ अभ्यास का असर और संजम ॥

अभ्यास का असर यह है कि सुरत मन का सिमटाव और खिंचाव होवे-वैसे त्याग, वैराग, योग, ज्ञान, ध्यान, रहनी गहनी साफ़ और सुथरी होना यह सब लवाज़मे हैं, मगर असल मतलब और नतीजा अभ्यास का यह है कि सुरत मन का सिमटाव होवे। बाज़े

अभ्यासी घबड़ा जाते हैं कि क्या मामला है—हरचन्द कि गहरा रस भी आता है सिमटाव व खिंचाव भी होता है तौ भी पता नहीं लगता है न थाह लगती है किस तरह चाल चलेगी व कब मंज़िल तै होगी अनंत तरंगें अन्तर में उठती हैं जिन का कोई हद्द हिसाब नहीं है ।

॥ कड़ी ॥

घट समुद्र लख ना पड़े, उट्ठें लहर अपार ।
दिल दरिया समरथ बिना, कौन उतारे पार ॥

२—शायर जो शायरी करते हैं थोड़ा बहुत सिमटाव उन का भी होता है, किस क़दर लोग उन की महिमा करते हैं और योगी योगेश्वरों की गती किस क़दर भारी है तीन लोक का भेद उन को मालूम होता है और जो कि साध और संत हैं उन की गति अगम अगाध अपार और अथाह है लोग समझते हैं कि छठे चक्र में पहुँचना सहज है, ज़रा अंतर में पैठें तो ख़बर पड़े, लड़कों का खेल नहीं है, जीते जी मरना है, रग २ बन्द २ रोम २ अंग २ से, हिरदे से, जिगर से, कलेजे से, फेफड़े से, जहाँ २ सुरत जज़्ब हो गई है वहाँ से निकालनी है । मौत के वक़्त कौन ऐसा आला और औज़ार है जहाँ से कि सुरत नहीं निकाली जाती है । अभ्यास में भी इसी रस्ते पर

चलना होता है। विशेष अङ्ग से जब चढ़ाई होती है तब इस तरह की हालत होती है गुरू इस के मददगार होते हैं और बीच २ में सहारा भी मिलता है, कबीर साहब ने कहा है—

॥ दोहा ॥

मत तू हंसा डिगमिगे, गहु मेरी परतीत।
काल मार मर्दन करूँ, ले चलूँ भौजल जीत॥

॥ शब्द ॥

सहेली मत तू मन में हार, दिखाऊँ जग का वार और पार।
चढ़ाऊँ सूरत उलटी धार, शब्द सँग खेय उतारूँ पार॥
गुरू को धर ले हिये मँझार, नाम धुन घट में सुन झनकार।
तरंगें उठतीं बारम्बार, भँवर जहाँ पड़ते बहुत अपार।
मेहर से पहुँची दसवें द्वार, राधास्वामी दीना पार उतार॥

॥ साखी १ ॥

खेत न छाँड़े सूरमा, जूझे दो दल माहिं।
आसा जीवन मरन की, मन में राखे नाहिं॥

॥ साखी २ ॥

अब तो जूझे ही बने, मुड़ चाले घर दूर।
सिर साहब को सौंपते, सोच न कीजे सूर॥

॥ साखी ३ ॥

यह तो गत है अटपटी, सट पट लखे न कोय।
जो मन की खट पट मिटे, चट पट दर्शन होय॥

॥ साखी ४ ॥

मन मारो तन को जारो, इन्द्री रस भोग बिसारो।

तुम निद्रा आलस टारो, गुरु के सँग शब्द पुकारो।

सतसँग तुम नित ही धारो, गुरु दरशन नित्त निहारो।

३—वाक़ई अभ्यास मेँ जिन को चलाना होता है सुरत के खिँचाव मेँ उन को बड़ी तपिश होती है राम-कृष्ण जो बङ्गाल मेँ हुए हैँ उन का जीवन चरित्र हम ने पढ़ा तो मालूम हुआ कि दिन मेँ कुछ वक़्त गले तक पानी मेँ पड़े रहते थे। जो कि टेकी हैँ यानी थोड़ा बहुत सतसंग और अभ्यास करते हैँ और बैल के मुवाफ़िक़ पड़े रहते हैँ उन की बात और है अलबत्ता जो कि चलनेवाले हैँ उन की हालत और कैफ़ियत बयान की गई है जब जिस की क़ाबिलियत होती है तब अन्तर मेँ उसका सिमटाव और खिँचाव होता है और रस आता है। लड़ाई का रस सूरमा जो है उस को मिलता है कायर को नहीँ मिलता है इसी तरह उलटी सुलटी हालत और तन मन की चोट मेँ भक्त जन को मज़ा आता है और जो स्वार्थी है वह भागता है और डरता है। भीमसेन को जब तक तीर नहीँ लगता था मज़ा नहीँ आता था और भीष्म पितामह तीरोँ की सेज बनाकर उस पर सोते थे, इस को सूर रस कहते हैँ।

४—कहने का मुद्दा यह है कि घट का भेद अथाह और अपार है जो कि कम हैसियत है वह इस बात को नहीं समझ सकता है बड़े संजम और परहेज़ करने पड़ते हैं खान पान की भी सम्हाल करनी पड़ती है। एक शख़्श था उस ने धीरे धीरे खाना छोड़ दिया पहिले आध सेर खाता था फिर डेढ़ पाव, फिर आध पाव, छटाँक, आख़िर बिलकुल छोड़ दिया, सिर्फ़ दूध पीता था यहाँ तक कि वह भी छोड़ दिया, सिर्फ़ एक तोला दूध पीता रहा, एक रोज़ मलाई दे॰ी सेर भर खा लिया पागल हो गया। वैसे ही अभ्यासी को भी खान पान में एहतियात करनी पड़ती है अगर किसी संसारी की या और कोई ग़ैर मामूली चीज़ खाता है तो हर्ज और नुक़सान होता है जैसे नशे की चीज़ों में नशा है वैसा खाना खाने में भी नशा है अभ्यासी अगर ज़ियादा इस्तेमाल करे तो पागल हो जाने का ख़तरा है। मुसलमान जब रोज़ा खोलते हैं तब पहिले शर्बत पीते हैं उस के बाद एक दो छुहारा खाते हैं फिर धीरे धीरे अनाज इस्तेमाल करते हैं अगर एक दम अनाज खा लेवें तो ज़रर पहुँचने का ख़ौफ़ है॥

॥ वचन ८ ॥

॥ कर्मफल ॥

कर्म जब अपना ज़ोर शोर करता है तब गफ़लत आ जाती है और जीव बिचारा लाचार हो जाता है कुछ भी उस की पेश नहीं जाती जैसे नशेबाज़ जब नशा पीते हैं तब ग़ाफ़िल हो जाते हैं अपने तन की भी उन को सुध नहीं रहती वैसे ही जब कर्मफल उदय होता है जीव बेबस हो जाता है जिस मंडल में कि नक़्श पड़े हुए हैं वहाँ जब यह गुज़र करता है तब कर्म फल जाग उठता है और भुगतना पड़ता है काल कर्म मन माया इन्द्रियाँ इन सब से मुक़ाबला करना पड़ता है, हमेशा डरते रहना चाहिये न मालूम किस वक़्त इन का इज़हार हो, मिसालें बहुतेरी यहाँ सतसंग में मौजूद हैं, जब कर्म फल उदय हुआ और देखा कि यहाँ रहने के क़ाबिल नहीं है तब सतसंग से उन की अलहदगी की गई और जब कर्म चुक जावेंगे तब फिर सतसंग में शरीक हो जावेंगे।

२—मन का सुभाव है कि अपने में कसर नहीं देखता औरों में हमेशा कसर देखता है और जो कि सच्चे हैं उन को अगर कोई उन की कसर जता देता है तो वह उस का शुकराना अदा करते हैं—

मेरी प्यारी सहेली हो दया कर कसर जता दो री।

३-मौत के वक़्त सब नक़्शा इस के सनमुख खड़े होते हैं यही धर्मराय की बही है सब के कर्म का बेग चल रहा है सारे मंडल के मंडल का जब कर्म उदय होता है तब वबा बीमारी और सख़्ती वग़ैरह फैलती हैं॥

सवाल—कै बरस तक कर्म फल भुगतना पड़ता है ?

जवाब—इस का कोई नेम नहीं है जैसा जिस का हिसाब है उसी अनुसार भोगता है, बाज़ों का कर्म फल में चोला छुड़ाया जाता है, बाज़े सतसंग से अलहदा किये जाते हैं जैसे कोई ईसाई हो गया कोई कुछ कोई कुछ किसी की हालत और ही हो गई, रहनी गहनी रोज़गार पेशा सब बदल गया, हरचन्द सुरत वही है और चोला भी वही है मगर फिर भी गोया जन्म बदल गया और जब कर्मफल चुक जाता है तब फिर सतसंग में शरीक कर लिया जाता है।

॥ बचन ९ ॥

मौज की परख पहिचान तब आती है जब आपा दूर होता है॥

मालिक की मौज निराली है। जिस को उस की

परख पहिचान आई वह निर्भय और दया के आसरे हो गया, कार्य मात्र संसार में उस की कार्रवाई रह जाती है। एक मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना सार है और सब लवाज़में हैं, जिस को ऐसी हालत है उस के लिये हर दम दया की धार जारी है। मालिक दया का भंडार है, वहाँ सिवाय दया के और कुछ नहीं है। दुख सन्ताप जो कर्म अनुसार होता है वह भी इसकी सफ़ाई और दुरुस्ती के लिये है—हर किसी को अपने अपने दरजे के मुआफ़िक़ सँभाल होती है।

२—जब मौज की इस को परख पहिचान आती है तब मालिक को हाज़िर नाज़िर देखता है और हालत उस की बदली जाती है, सिर्फ़ समझौती से काम नहीं होता है—और जब तक जतन और संसारी मदद की आशा है तब तक मौज से मुवाफ़िक़त नहीं कर सक्ता है—और जिस को कि परख पहिचान आई है वह अगर किसी वक़्त भूल चूक भी करता है तो भी दया उस के संग है। जब तक आपा है तब तक मौज की परख पहिचान नहीं आवेगी और यही आपा यानी मन का मान भक्ति मार्ग में नाशायाँ है—

मान मद त्याग करो गुरु संग।
जब लग सजना मान छोड़ो, तब लग रहो तुम तंग॥

३—जब आपा दूर होता है तब भक्ति और दीनता

इस मेँ आती है और जैसे मइया अपने बच्चे की रक्षा और सँभाल करती है वैसे ही राधास्वामी दयाल अपने भक्त जन की हिफ़ाज़त करते हैँ–और जब यह देखता है कि हरचन्द मुझ मेँ कोई गुन और क़ाबिलियत नहीं है तो भी राधास्वामी दयाल दया फ़रमा रहे हैँ तब यह सच्चा दीन आधीन होता है, अपने को नीच और नालायक़ समझता है और तहे दिल से शुकराना अदा करता है–इस का शुकराना अदा करना ही प्रेम और सरन स्वरूप है। पहिले यह जब तन मन अरपन करेगा तब अमर देश की बख़्शिश होगी राधास्वामी दयाल महा दानी और महा दयाल हैँ पर जब यह दीन होगा और अपने को नाक़ाबिल समझेगा तब वह दया फ़रमावैँगे।

४–जोगी जोगेश्वर हरचन्द तीन लोक की चोटी पर पहुँचे थे चूँकि उन्हौँ ने अपने को दीन और नाक़ाबिल नहीं समझा दरबार से ख़ारिज और महरूम रहे। इस लिये राधास्वामी दयाल शुरू मेँ भक्तजन को दिखाते हैँ और यक़ीन कराते हैँ कि तुझ मेँ कोई गुन या क़ाबिलियत नहीं है जो कुछ परमार्थी कार्रवाई तू करता है वह मालिक की मौज और दया से है–इस तरह इस के आपे की जड़ काटी जाती है और मौज की परख पहिचान आती है॥

॥ बचन १० ॥

सार बचन नज़्म बचन नम्बर ७४ पर शरह

जो कोई बिना भाव के साध को खिलाता है तो उस का तो फ़ायदा है पर साध का नुक़सान है यानी अभाव से खिलाने का मतलब यह है कि जिस को साध की क़दर नहीं है और जो ख़ुद भक्त नहीं है यानी संसारी है वह अगर साध को खिलावे तो साध का हरज है और खिलाने वाले का तो फ़ायदा ही है। जितनी चीज़ें कि हम लोग छूते हैं या हम लोगों के क़ब्ज़े में हैं, मसलन धन वग़ैरह, इन में हम लोगों के आपे का कुछ असर आ जाता है तो जो कोई कि जिस किसी की चीज़ इस्तेमाल करता है उस इस्तेमाल करने वाले पर उस चीज़ के ज़रिये से उस शख़्स की रूह का असर पहुँचता है जिस की कि वह चीज़ है। अब जो वह शख़्स परमार्थी है तो उस की चीज़ के इस्तेमाल करने वाले पर परमार्थी असर पैदा होगा और इस्तेमाल करने वाले की रूह का असर उस चीज़ वाले की रूह पर भी बज़रिये उस चीज़ के पैदा होगा। अब जब कि खिलाने वाला

संसारी हुआ तो जो साधू कि खाता है उस के ऊपर भी संसारी असर पैदा होगा इस में साधू का हरज है लेकिन चूँकि साधू अभ्यासी है इस सबब से उस खिलाने वाले के ऊपर परमार्थी असर पैदा होगा–इस तरह से उस का फ़ायदा है और साधू का नुक़-सान है।

२–सबूत इस बात का कि जितनी चीज़ें हमारे कार-आमद या हमारे क़ब्ज़े में हैं उन में कुछ हमारे आपे का असर है यह है कि जितना काम किया जाता है सब सुरत की ताक़त से किया जाता है तो जो चीज़ें कि हमारे पास हैं वे इस सुरत की ताक़त से काम करने का बदला हैं जैसे कोई पचास रुपया तनख़ाह पाता है तो पचास रुपया एवज़ है उस की एक महीने की मेहनत का जो वह अपनी सुरत की ताक़त से करता है यानी जो काम कि उस पचास रुपये में लिया गया वह बराबर है सुरत की ताक़त के जो कि ख़र्च की गई–इससे ज़ाहिर हुआ कि जितनी चीज़ें हमारे पास हैं उन सब में हमारी चेतन्यता का असर है क्योंकि उन में हमारी चित्त की बिरती का बन्धन है।

॥ वचन ११ ॥

पहिले परमार्थी चाह होनी चाहिये फिर अभ्यास करने से जो रस आनंद आता है वह इसका आधार हो जाता है, फिर नशे और सरूर की जो हालत है वह होती है, बाद इसके जब मेला होता है तब प्रेम यानी इश्क़ पैदा होता है और बन्धन सब दूर हो जाते हैं ॥

जो कि जिग्यासू है वह हर वक्त सच्चे परमार्थ और सच्चे लाभ हासिल करने की खोज और तलाश मैं रहता है और जब तक पूरा यक़ीन उसको नहीं होता शांती नहीं आती है। यह जिग्यासा की हालत भी अच्छी है और जब भेद मालूम होता है तब अभ्यास करके अन्तर मैं परमार्थी रस आनन्द आता है और फिर वह रस उसका आधार हो जाता है—

॥ कड़ी ॥

जब लग पूरा मिले न मिलानी। तब लग खोजत रहे जहानी ॥
खोजन में जो दिवस बितानी। वह साधन में वृथा न जानी ॥
सतगुरु पूरे जभी भिटानी। प्रेम प्रीत से सेवा आनी ॥

तब वह भेद नाम दें दानी। नाम जुक्ति तुम रहो कमानी॥
नाम प्रताप मुक्ति गति पानी। बिना नाम नहिँ ठौर ठिकानी॥

पहिले परमार्थ की चाह होनी ज़रूर है और जब तीब्र चाह होती है और मेला होता है तब प्रेम की हालत होती है। शुरू मैँ नेम से सतसंग सुमिरन ध्यान और भजन करते हैँ और जब प्रेम आता है तब नेम की ज़रूरत नहीँ रहती, हरदम लगन लगी रहती है—

॥ साखी ॥

जहाँ प्रेम तहँ नेम नहिँ, तहाँ न बुधि ब्योहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिने तिथि वार॥

२—जब तक नेम और आनन्द का आधार है तबतक गोया आपे की परवरिश है जैसे तन की परवरिश के लिये खाना खाते हैँ और खाने से शांती और आराम आता है वैसे ही शुरू मैँ इस को आनंद का आधार होता है और उस के न मिलने से घबराता है, मगर यह भी अपने आपे की परवरिश के लिये है बाद इस के जल मीन की हालत होती है। शुरू मैँ जो रस आनंद आता है, उस मैँ इस को आसूदगी मालूम होती और शांती आती है। शांती का आना भी अच्छा है मगर तृप्त नहीँ होना चाहिये तड़प और बिरह जगाते रहना चाहिये।

॥ कड़ी ॥

साध सङ्ग कर सार रस, मैं ने पिया अघाई।
प्रेम लगा गुरु चरन में, मन शान्त न आई॥
तड़प उठै बेकल रहूँ, कस पिया घर जाई।
दरशन रस नित नित लहूँ, गहे मन थिरताई॥
सुरत चढ़े आकाश में, करे शब्द बिलासा।
धाम धाम निरखत चले, पावे निज घर वासा॥

३—अभ्यास में पहिले इस को रस आता है फिर बन्द हो जाता है तब यह घबराता है कि क्या मामला है। असल में यह दया का निशान है, इससे बिरह और तड़प जागती है और चाल आगे चलती है, जैसे शराबी शुरू में एक दो घूँट पीते हैं धीरे धीरे बढ़ाते जाते हैं यहाँ तक कि ऐसी हालत हो जाती है कि हरदम बोतल और प्याला पास रहता है जब चाहा तब चढ़ा लिया, वैसे ही इस को चाहिये कि सुरत को अमृत रस का घूँट पिलावे, दिन दिन सरूर और आनन्द बढ़ता ही जावे, और जैसे नशेबाज़ हर दम मख़मूर रहता है वैसे ही आठों पहर का ध्यान रहै। यह हालत दूसरी है—पहिली हालत में अपने आपे की परवरिश यानी आनन्द का आधार होता है और दूसरी में आठों पहर का ध्यान होता है—प्रेम और भी आगे छिपा हुआ है यानी पूरा प्रेम यह भी नहीं है, जब दरशन होता है तब ऐसा प्रेम

आता है। जब तक मेला नहीं है तब तक सिर्फ़ आनन्द का आधार है।

४—पहिले चाह पीछे हाजत फिर नशे की हालत और इस के बाद इश्क़ पैदा होता है—

॥ शब्द ॥

गुरु प्रीत बढ़ी चितवन में। सुत खैंच धरी चरनन में।
मेरी दृष्टि हरी दरशन में। अब प्रेम बढ़ा छिन छिन में॥

यानी दृष्टि जो कि दर्शन कर रही है वह भी हर गई तो बाक़ी क्या रहा, प्रेम ही प्रेम रहा—यह पूरे प्रेम की सूरत है—

॥ साखी ॥

लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी होगइ लाल॥

॥ कड़ी ॥

नर रूप दिखावैं जब ही। मन खैंच चढ़ावैं तब ही॥
दे मदद बढ़ावैं आगे। मन जुग जुग सोया जागे॥

मन जब जागेगा तब अंतर में चलेगा, तिल का ताला टूटेगा, चरनौं से मेला होगा, और प्रेम प्रगट होगा, प्रेम यानी इश्क़ का दरजा बड़ा भारी है आपे की वहाँ गुञ्जाइश नहीं है। जब तक अन्तःकरन यानी आपे के घाट पर बैठा हुआ है तब तक प्रेम से रहित है और करनी भी फीकी है—

॥ कड़ी ॥

प्रेम बिना सब करनी फीकी। नेकहु मोहिं न लागे नीकी।
घट धुन रस दीजे ॥

५—एक अङ्ग इश्क़ का और बाक़ी रह गया उस का थोड़ा सा निर्णय करते हैं, और वह अंग आवरन का है यानी पाँच कोष हैं उन में तन और मन का कोष भारी है इन को दूर करना पड़ता है, यानी तन मन इस क़े जरजर हो जाते हैं, हड्डी हड्डी की धूल उड़ाई जाती है, तन मन इन्द्री सूख जाते हैं, तब इश्क़ की आमद होती है, शब्द सुनाई देता है, और अंतर में चढ़ाई होती है—

॥ कड़ी ॥

क्या कहूँ मिले गुरु भारी। उन भेद दिया पद चारी ॥
मैं पिऊँ शब्द रस सारी। मेरे लगा ज़ख़्म अब कारी ॥
मन तन पर फिरती आरी। क्यों जीऊँ जिवना हारी ॥
तब दया करी गुरु प्यारी। अब दीना शब्द सम्हारी ॥
मैं चढ़ गइ गगन अटारी। वहाँ खेलूँ नित्त शिकारी ॥

बाहरी ज़ख़्म दायमी नहीं है—चेतन धार के खिंच जाने से माया उस के लिये तड़पती है इससे तपिश होती है, फिर जब धार की आमद होती है तब तपन दूर हो जाती है और ज़ख़्म रफ़ा हो जाता है, और अन्तर का जो ज़ख़्म है उस पर जब नाम की

धार यानी बिशेष चेतन धार आती है तब शान्ती होती है और शीतलता हिरदे मैं समाती है–

॥ कड़ी ॥

सतगुरु अब करें सम्हारी। तब हिरदे घाव पुरारी॥
मोहिं नाम देहिं निज सारी। यह मरहम निच लगा री॥
राधास्वामी करें दया री। मैं उन पै जाउं बलिहारी॥

६–दया से ममता और बन्धन सब दूर हो जाते हैं मसलन लड़के से मुहब्बत है तो लड़का लड़ाका हो जाता है, कार्रवाई उस की अनाप शनाप हो जाती है, सामने जवाब देता है जिस से रंज और अफ़सोस होता है और प्यार के बदले बिरोध की धार अंतर मैं उठती है। अगर किसी का दोस्त आशना वग़ैरह मैं बंधन है तो उन से भी जब तवज्जह अंतरमुख होती है इस क़दर नफ़रत आ जाती है कि सब पुराने दोस्त आशना और हिमायती जमदूत नज़राई पड़ते हैं। कहने का मुद्दा यह है कि जतन और कोशिश करते रहना चाहिये, हरचन्द इस के जतन से कुछ नहीं होता है सब बख़्शिश और दया से होता है इस लिये मेहर दया के आसरे कार्रवाई करते रहना मुनासिब है, तो जीते जी अपनी मुक्ति आँखौं से नज़र आ जावेगी॥

॥ बचन १२ ॥

॥ भजन का आसन ॥

१-भजन का आसन जो राधास्वामी मत में बतलाया गया है वैसा और किसी मत में नहीं है, यह आसन क़ुदरती है और उसका गुप्त भेद यह है कि जब कोई भजन में बैठता है तो गोया हलक़े बाँधता है। पहिला हलक़ा पाँव से कमर तक बँधता है, दूसरा कमर से कन्धों तक, तीसरा कन्धों से कानों तक चौथा कानों से आँखों तक होता है। सुरत उतरते वक़्त पेचदार आकार यानी घूम के साथ हलक़ा बाँधती हुई चली आई है, फिर चढ़ती भी इस तौर से है।

२-पिण्ड में तीन धारें हैं-इँगला पिंगला और सुखमना। दायें बायें की जो शाखें हैं वह पहिले सिमटती हैं, फिर दाईं बाईं धारों को जोड़ कर सुरत की बैठक पर मिलाने से एक धार होकर रवाँ होती है ; जैसे बिजली के जब दो सिरे मिलाते हैं तब धार चलती है वैसे ही दायें बायें तरफ़ की दो धार जब सुरत की बैठक पर मिल कर सुखमना के साथ एक होती हैं तब धार ऊपर चढ़ती है।

३-बिजली के दो सिरे यानी दायाँ और बायाँ

क़ुतुब कहलाते हैं। एक को पाज़िटिव (positive) दूसरे को निगेटिव (negative) कहते हैं। जब हलक़ा पूरा बँधता है तब बिजली की धार रवाँ होती है, यानी बिजली की धार चलाने के लिये पहिले हलक़ा पूरा होना ज़रूर है, और हलक़े जितने ज़ियादा होंगे उतनी ही आसानी से धार रवाँ होगी। संतों के सुरत शब्द अभ्यास का आसन क़ुदरती तौर पर ऐसे भारी फ़ायदे का है कि इस से जिस्म में अनेक हलक़े बन कर बिजली यानी चेतन की धार सहज में खिंचनी शुरू हो जाती है चाहे वह ज़ियादा मालूम पड़े या नहीं।

४—इस आसन का नाम कुक्कुट आसन है क्योंकि यह आसन मुरग़ी की बैठक से मिलता है, जैसे मुरग़ी के अङ्ग अङ्ग बैठक की हालत में मुड़े रहते हैं वैसे ही अभ्यासी के अङ्ग अङ्ग अभ्यास के आसन में मुड़े रहते हैं। वैराग लाचारी की हालत में काम में लानी चाहिये।

॥ बचन १२ ॥

जैसे कि आज कल विद्या वग़ैरह के मदर्से हैं इसी तरह संतों ने फ़क़ीरी का स्कूल भी जारी किया है।

सच्चे फ़क़ीरों की महिमा तो लोग बयान करते हैं कि जिस पर वह दृष्टी डाल दें उस का काम बन जावे लेकिन यह ताक़त उन को किस तरह हासिल होती है इस का हाल उन को मालूम नहीं है। संत मत में यह ताक़त सुरत चेतन के अभ्यास कराने से जगाई जाती है। विद्या भी कई बरस में अभ्यास करने से कुछ हासिल होती है तो सुरत की ताक़त भी जो आला दर्जे की ताक़त है और जिस का हासिल करना आसान बात नहीं है बरसों बल्कि कई जनम में पूरी पूरी हासिल होगी।

सवाल—बाज़ वक़्त निहायत तड़प पैदा होती है और यह दिल चाहता है कि किसी तरह जल्दी हासिल हो जावे।

जवाब—जिस किसी के मन में ऐसी विरह और तड़प पैदा हो उस के लिये गरम घर (Hot house) भी अंदर में बनाया जाता है जैसे कि यहाँ कोई फल बग़ैर मौसम ख़ास के नहीं पक सक्ता मगर गरम घर (Hot house) में मामूल से ज़ियादा गर्मी पहुँचाकर और निगहबानी ज़ियादा करके जल्दी दरख़्त से फल पैदा कर लिया जा सक्ता है और जैसे मदारी एक दम बीज बो कर दरख़्त खड़ा कर देता है इसी तरह संत भी किसी किसी हालत में जल्दी कारज बनाते हैं मगर यह

ख़ास २ जीवों का हाल है आम तौर पर तो क़ायदे के मुवाफ़िक़ चार जनम में काम पूरा होगा।

सवाल—हुज़ूर महाराज के वक़्त में जो सतसंगी कि सिर्फ़ प्रसाद और चरनामृत लेना परमार्थ जानते थे और मिस्ल छोटे बालक के हुज़ूर उन की निगहबानी फ़रमाते थे तब तक उन को अन्तर में कुछ मदद नहीं मिली थी अब हुज़ूर महाराज के गुप्त होने पर वह क्या करें अभी मिस्ल छोटे बच्चों के उन को ज़ियादा बाहरी मदद दरकार है, आप फ़र्माते हैं कि अन्तर में लगें मगर जो बालक कि सिर्फ़ दूध पीता है उस को अगर रोटी दी जावे तो वह किस तरह खा सक्ता है?

जवाब—अन्तर में शब्द क्षीर पिये, और अगर बच्चे ने ज़ियादा दूध पी लिया है तो बाप या माँ उसको थोड़ी देर दूध नहीं देते हैं ताकि पहला दूध हज़म हो जावे, और आहिस्ता २ अङ्ग को बढ़ने देते हैं अगर एक दम उसके अङ्ग ज़ियादा बढ़ जावें तो वह बालक राक्षस कहलाता है, इसी तरह जब मुनासिब होगा फिर बाहर की सब कार्रवाई जारी हो जावेगी।

॥ बचन १४ ॥

जो कोई कि बिजली की कल पर बैठा है उस को ख़ुद अपने मैं बिजली समाती हुई नहीं मालूम होती रात को उस के बाल दूसरौं को रौशन मालूम होते हैं और जो उँगली उस के पास की जावे तो चिनगारी भी निकलती है, इसी तरह बाज़ वक़्त जहाज़ मैं जब कि हवा मैं या बादलौं मैं बिजली का असर ज़ियादा हो तो जहाज़ के कंगूरौं पर या उन लोगौं को जो जहाज़ पर हैं रोशनी चलती हुई नज़र आती है ऐसे ही जो अभ्यास रूहानी करते हैं उन को बराबर फ़ायदा होता जाता है और मालिक की दया समाती जाती है मगर उन को मालूम नहीं होता लेकिन जब कभी ज़ियादा दया होती है तो अन्तर मैं शब्द यकायक झनकारता है या स्वरूप का दरशन मिल जाता है और यह बात जब चित्त एकाग्र होता है तब अक्सर होती है जैसे कि बिजली की कल थामने वाले को एक स्टूल पर जिस के चारौं पाये शीशे के होते हैं (और इस का फ़ायदा यह है कि जो बिजली बदन मैं हो कर आती है वह बवजह शीशे के पायौं के कि शीशा बिजली को रोकता है निकलने नहीं

पाती है) खड़ा किया जाता है इसी तरह अभ्यासी को एक स्टूल पर बिठाया जाता है कि जिस के चार पाये दोनों आँखें और दोनों कान हैं यानी जब यह बन्द किये गये तो शब्द दया का सुनाई देता है—मतलब यह कि अभ्यास से फ़ायदा बराबर होता है और दया और मेहर मालिक की बराबर जारी है गोकि अभ्यासी को कभी कभी मालूम न हो ॥

॥ बचन १५ ॥

अव्वल दर्जे की दया यह है कि जीव को सतसंग में हर्ष पैदा हो और संसार से तबियत उदास हो और हटती जावे और बार बार सतसंग की हाज़िरी का शौक़ हो और सतसंग के बचन निरनय मत के या रचना के सुनकर तबीयत मगन हो और यह ख़ाहिश हो कि और बचन हों और ख़ूब मत का निरनय हो और इस मत को मैं ख़ूब समझ लूँ और राधास्वामी दयाल के दरशनों का तेज़ शौक़ पैदा हो और जो अभ्यास बताया जावे उस में ख़ूब रस आवे और यह ख़ाहिश हो कि जहाँ तक फ़ुरसत मिले अभ्यास और सतसंग करूँ। यह हालत अव्वल बड़ी दया की है।

दूसरे दर्जे की दया यह है कि सतसंग में उस को ख़ुशी मालूम हो और संसार से भी चित्त कुछ हट गया हो और सतसंग के बचन उस को प्यारे लगें और मत को समझने की ख़्वाहिश हो और परमार्थ की क़दर चित्त में अच्छी तरह आजावे लेकिन अभी अभ्यास में जैसी चाहिये तबीयत न लगती हो लेकिन इस बात की ख्वाहिश हो कि अंतर में रस आवे और राधास्वामी दयाल के दरशन प्राप्त हों। जिस की ऐसी हालत है वह दया पात्र है। ग़रज़ कि ख़्वाहिश परमार्थ की दिल में पैदा होना यही दया है और समझना चाहिये कि जड़ जम गई किसी वक़्त में ज़रूर कुला फूटेगा और शाख़ें और पत्ते और फूल व फल नमूदार होंगे। जिस पर पहले दरजे की दया है कि जिस का बयान ऊपर हुआ है उस को समझना चाहिये कि कुला फूट कर निकला और शाख़ और पत्तों की तैयारी है। अगर परमार्थ की क़दर दिल में समा गई है और कभी कभी ऐसी ख़्वाहिश भी दिल में पैदा होती है कि अभ्यास ख़ूब करें तो भी जड़ पुख़्ता जम गई है और ज़रूर एक दिन कुला फूटेगा और शाख़ और पत्ते निकलेंगे॥

॥ बचन १६ ॥

सतगुरू के गुप्त होने में भी मसलहत है-सतसंगी होके भी नाजायज़ कार्रवाई करना या करम भरम में अटकना निहायत अफ़सोस की बात है

राधास्वामी मत का भेद जिस तौर से कहा गया है निहायत साफ़ है जैसे मगर मदरसे के लड़के नोट लिखते हैं और कोई बात उस्ताद की नहीं समझते हैं तो क्लास से जब उठते हैं आपस में बात चीत करके निरनय करते हैं वैसे ही अभ्यासी डर और अदब से जो गुरू से कोई २ बात नहीं दरयाफ़्त कर सकते हैं तो फिर जब आपस में मिलते हैं तब बहस मुबाहसा करके अपने शक शुबहे दूर कर लेते हैं—अभ्यासी गोया शागिर्द है और सतगुरु उस्ताद हैं और जहाँ लड़के आपस में मिलते हैं वह बोर्डिङ्ग हौस है। लड़कों की बात लड़के समझते हैं उन के बीच में अगर कोई दाढ़ी वाला आकर बैठे तो वह डर के सबब से भाग जायँगे और जैसे लड़कों को आपस में बात चीत करने का मौक़ा देने के लिये मास्टर आप ही बाहर

निकल जाता है तो लड़के खुलकर आपस में बातचीत करते हैं वैसे ही जब ज़रूरत समझते हैं सतगुरु भी गुप्त हो जाते हैं। सतगुरु के सामने सतसंगियों को हिजाब होता है इस लिये जब वह गुप्त होते हैं तब सतसंगी आपस में मिलकर जो जो बारीक बातें हैं उन की चरचा करके हल करते हैं—यह साध संग कहलाता है। जो बात कि इस तौर से निरनय नहीं होती वह इलहाम यानी अनुभव से हल होती है क्योंकि राधास्वामी दयाल घट घट में मौजूद हैं और अंतर में निज रूप से मदद दे रहे हैं जब मौज होती है तब प्रगट रूप से कार्रवाई करते हैं। जैसे मास्टर फिर दर्जे में आता है और जो कोई उस की ग़ैर हाज़री में शरारत करता है उस को बेंच पर खड़ा कर देता है या बेत लगाता है वैसे ही जो कि सतगुरु के गुप्त होने के बाद मत को छोड़ देते हैं या फ़ज़ूल शक शुबहा उठाते हैं उन को राधास्वामी दयाल ताड़ मार और कूटा पीटी करते हैं, जैसे लड़के आपस में मास्टर के पीठ पीछे एक दूसरे को फटकारते हैं कि तुम पढ़ते नहीं हो अपने बाप से मुफ़्त रुपिया वग़ैरह लेते हो वैसेही सतसंगी भी आपस में एक दूसरे को समझौती देते हैं।

२—राधास्वामी मत की समझ बूझ आजावे फिर भी करनी न करे यह निहायत अफ़सोस की बात है।

यहाँ कोई घर बार नहीं छुड़ाया जाता है—ख़ुशी से गृहस्थ आश्रम मैं रहो, अपना मामूली कारोबार भी करो और परमार्थी कार्रवाई भी करते रहो, सिर्फ़ दो बातौं की मुमानिअत है एक नशा दूसरे गोश्त, और इन ६ बातौं से परहेज़ करना चाहिये—

॥ साखी ॥

जूआ, चोरी, मुख़विरी, व्याज, घूस, परनार।
जो चाहे दीदार को एती वस्तु निवार॥

और सतसंगी होके फिर भी ऐसे काम करना जिस से संसारी भी नफ़रत करते हैं बड़े शर्म की बात है।

३—कितने सतसंगी जो हजूर साहब के सनमुख नाचते थे और चरनामृत परशादी का सहारा रखते थे कहते हैं कि हजूर साहब गुप्त हो गये अब हमारी तरक़्क़ी बन्द हो गई उन की समझ ग़लत है, गुप्त होने मैं मौज थी और उस मैं फ़ायदा था अगर गुप्त न होते तो सतसंगी कैसे आपस मैं मिलते और कैसे बारीक बातैं मसलन राधास्वामी नाम और रूप वग़ैरह के नुक्ते हल होते। जीव निहायत बहिरमुख हो रहे थे ख़ास चरनामृत और परशादी मैं अटक गये थे इस लिये उन को अंतर मैं लगाने की मौज थी। अब उन से पूछो कि पहले जब तुम संसार मैं सिर

तब वहाँ से तुम को खैंचा और सम्हाला और चरनौं मैं लगाया तो फिर कैसे छोड़ेंगे ।

४—सतसंग मैं शामिल होने के बाद भी पुरानी लीकैं नहीं छोड़ते हो तो फिर रङ्ग कैसे चढ़ेगा अलबत्ता जो ज़रूरी काम हैं मसलन ग़मी शादी वग़ैरह उन मैं शामिल होना तो मना नहीं है मगर जिस काम मैं न तो बिरादरी का डर है न कोई देखनेवाला है और न परमार्थी फ़ायदा है उस मैं भी अटकना और उलझना, जैसे एकादशी बर्त रखना तिथि त्योहार मानना और सगुन साइत देखना यह नामुनासिब है ।

५—राधास्वामी मत समझ बूझ कर फिर भी करम भरम मैं अटकना बड़े शरम की बात है इन लोगौं से पूछो क्या तुम ने राधास्वामी मत को समझा अगर सच्चा मत है तो उसी के मुवाफ़िक़ करनी करो और जो झूठा है तो छोड़ दो । बाहर मैं कहते हो कि हम राधास्वामी को ही मानते हैं और अंतर मैं देव और देवी को पूजते हो ऐसे जीवौं पर कैसे दया आवेगी और कैसे रंग चढ़ेगा । भला सोचो कि अगर किसी की औरत औरौं से अपने मर्द के सामने लगावट करे तो कैसे उस का ख़सम उस से राज़ी होगा—

॥ साखी ॥

नारि कहावे पीव की, रहे और सँग सोय ।
यार सदा मन में बसे, खसम ख़ुशी क्यों होय ॥

सच कहना ठीक है इस में किसी को बुरा मानना नहीं चाहिये—

॥ साखी ॥

साधू ऐसा चाहिये, साँची कहे बनाय ।
कै टूटे कै फिर जुड़े, बिन कहे भर्म न जाय ॥

॥ बचन १७ ॥

जहाँ आपा यानी ख़याल और चाह है वहाँ मौज की गुंजाइश नहीं है ॥

जिस में जैसा नक़्श और ख़याल है वैसी उस की कार्रवाई होती है और उसी अनुसार उसके संगी साथी होते हैं, मसलन चोर है ख़याल भी उस के चोरी के और संगी साथी भी चोर ही होते हैं । अब परमार्थी का क्या हाल है इस को देखना चाहिये— धार आई तो कार्रवाई कर सकता है नहीं तो सूखा साखा रहता है यानी उस में कोई अपनी चाह नहीं है । संसारी लोगों को जो ख़याल उठा उसी को पकड़

लेते हैं और उस मैं उन का बन्धन होता है पर जो साध महात्मा हैं उन को कोई बन्धन नहीं है वहाँ मौज की धार कार्रवाई करती है और जो उन के साथी हैं उन मैं भी थोड़ी बहुत मौज कारकुन रहती है।

२—जहाँ ख़याल और नक़्श अकड़ा हुआ है, जकड़ा हुआ है, पकड़ा हुआ है और रगड़ा हुआ है वहाँ मौज की गुञ्जाइश भला कहाँ है। जो कि बालदशा है यानी निःकपट निरआपा और निर अहङ्कारी है वहाँ अलबत्ते मौज कारकुन है, उस मैं ख़याल आया और गया कोई बन्धन नहीं है—इस तरह ख़याल और चाह का जानना और नब्ज़ को पहचानना चाहिये। जहाँ रुकावट है वहाँ बिजली रवाँ नहीं होती है तोड़ फोड़ कर देती है इस लिये जिस घट मैं कि ख़यालात और चाहैं भरी हुई हैं वहाँ मौज की धार रवाँ हो नहीं सकती—और तोड़ फोड़ करने की मौज नहीं है—और जो मौज की कार्रवाई है उस मैं कोई रोक टोक नहीं होती।

३—कहने का मुद्दा यह है कि धार की आमद पर सब मुनहसिर है धार आई तो प्यार और ख़ातिरदारी सतसंग मैं होती है और जो सिमट गई तो नहीं होती फिर जब धार आती है तो वही प्यार और ख़ातिरदारी

होने लगती है और जिस बाइस से कि नहीं होती थी उस की वहां याद भी नहीं है क्योंकि पूरे गुरू में न नफ़रत है न रग़बत वहाँ तो महज़ धार की कार्रवाई है, पर जहाँ कि चित्त में बन्धन और चाह है वहाँ नफ़रत और रग़बत है—

॥ कड़ी ॥

चाह दुनिया की करे मन को सियाह ।
गुरु से गुरु को माँग मत कर और चाह ॥ १ ॥
जिस क़दर तुझ को है मालिक से पियार ।
उस से ज़्यादा तुझ से वह करता है प्यार ॥ २ ॥
पर तुझे उस की परख होती नहीं ।
मेहर की उस के ख़बर होती नहीं ॥ ३ ॥

॥ बचन १८ ॥

॥ मौज ॥

जो मालिक की मौज है वही संतों की मौज होती है और उन की मौज की परख पहिचान करना मुहाल है ।

२–क़ुदरती कारख़ाना देखने से मालूम होता है कि जब न कोई बात है न कोई सामान या ख़याल है

अचानक ऐसी हलचल और खलबली मच जाती है कि अचरज मालूम होता है कि कैसा करतार है—मसलन बारिश का न होना, आग का लगना, भूडोल का आना, बीमारी वग़ैरह मुसीबतैं जो नाज़िल होती हैं उन को देख के अक़ल दंग हो जाती है, किसी सूरत से उस करतार की मसलहत समझ मैं नहीं आती इसी तरह साध महात्मा जो कि उस के शरीक हैं उन की कार्रवाई की भी अगर कोई परख पहिचान करना चाहे तो नहीं कर सकता है। बानी मैं लिखा है कि अगर कोई किताबौं से या चाल ढाल से संतौं की परख पहिचान करना चाहे तो हरगिज़ नहीं कर सक्ता है वह जान बूझ कर अपनी रहनी गहनी और चाल ढाल मैं दो चार बातैं ऐसी दिखा देते हैं जिससे दुनिया दार उन से दूर रहैं—जैसे एक सड़ी हुई मछली सारे तालाब मैं बदबू कर देती है वैसे ही सतसंग मैं अगर कोई दुनियादार आके बैठे तो सारा सतसंग गदला कर देगा इस लिये संत जान बूझ कर अपनी निंदा कराते हैं और वही निंदा चौकीदारी का काम करती है—

॥ कड़ी ॥

पर यह बात बड़ी अति झीनी। सन्त करावें निन्दा अपनी ॥ १ ॥

निन्दा चौकीदार बिठाई। कोई जीव धसने नहिं पाई ॥ २ ॥

विरला जीव होय अनुरागी । निन्दा से वह छिन छिन भागी ॥ ३ ॥

निन्दा सुन सुन चित नहिँ धारे । सन्तन की यह जुक्त विचारे ॥ ४ ॥

॥ शैर ॥

मलामत शहनए बाज़ारे इश्क़स्त ।
मलामत सैक़ले ज़ंगारे इश्क़स्त ॥

और भी कहा है—

दरे दरवेश रा दरबाँ न बायद ।
बिबायद ता सगे दुनिया न आयद ॥

किस मसलहत और मौज से मालिक और सन्त कार्रवाई करते हैँ उस की पहिचान कोई नहीं कर सकता है, जब तक कि मन बुद्धि के स्थान पर बैठा हुआ है मौज को समझना नामुमकिन है—

॥ कड़ी १ ॥

भेद मोहिँ गुप्त दिया जब ही । हरे मेरे मन बुद्धी तब ही ॥

॥ कड़ी २ ॥

पहिले जिस ने अपना घर दीना उजाड़ ।
पाई फिर गुरु प्रेम की दौलत अपार ॥

॥ कड़ी ३ ॥

गुरु उलटी बात बताई । मूरखता ख़ूब सिखाई ॥

३—जैसे छोटे बच्चे को बोलना सिखाया जाता है वैसे ही इस को मौज से मुवाफ़िक़त करना सिखलाया जाता है—बच्चा पानी पहिले "मम ,, कहता है पीछे

जब कुछ समझ आती है तब "मानी,, कहता है और बाद इस के "पानी,, कहता है। लेकिन यहाँ तो शुरू मेँ इस को "मम,, कहना भी नहीं आता है सिर्फ़ पुकारता या चिल्लाता है मइया उस की ज़रूरत को समझ लेती है और पानी पिलाती है, ऐसे ही मौज मौज बहुत कहता है गो मौज की इस को ख़बर भी नहीं है।

४—कहने का मुद्दा यह है कि जब तक आपा है और दुख संताप या कर्म के घेरे में हैं तब तक मौज की परख पहिचान और मुवाफ़िक़त करना मुश्किल है—

॥ शब्द ॥

गुरु प्यारे की मौज रहो तुम धार ॥ टेक ॥
वे हरदम तेरी दया विचारेँ, निस दिन रक्षा करेँ सम्हार।
हँगता ममता भूल और भर्मा, मन के निकारेँ सबहि विकार ॥ १ ॥
जिस में तेरी होय भलाई, स्वारथ और परमारथ सार।
वैसी ही करेँ मौज दया से, दोऊ मे हित मानो यार ॥ २ ॥
चाहे मन माने या नाहीँ, मौज गुरू की दया निहार।
जिस विधि राखेँ वहि विधि रहना, शुकर की रखना समझ विचार ॥ ३ ॥
ऐसी समझ धार रहै मन में, सो निरखे गुरु मेहर अपार ॥
राधास्वामी समरथ और न कोई, सरन पकड़ धर प्रेम पियार ॥

॥ भाग सातवाँ ॥

॥ सवाल व जवाब ॥

सवाल—शब्द कैसे प्रगट हुआ और पहिले कहाँ था?

जवाब—भंडार से जब धार रवाँ हुई तब शब्द प्रगट हुआ पहिले उस में गुप्त था ; जहाँ हरकत है वहाँ शब्द प्रगट है—

॥ कड़ी ॥

जस अग्नी तदरूप पखान। तस तदरूपी शब्द अनाम॥

सवाल—चेतन्य शुद्ध है फिर अपवित्र कैसे हुआ है?

जवाब—

॥ कड़ी ॥

जस जल परत भूमि गदलाना। तस जिव माया सँग लिपटाना॥

यानी जैसे पानी ज़मीन पर पड़ने से गदला हो जाता है वैसे ही चेतन्य माया के साथ मिलने से मैला होता है।

सवाल—अनहद शब्द किस को कहते हैं?

जवाब—असल में लफ़्ज़ अनाहत है, जिसका आहत या कारन नहीं है उस को अनहद कहते हैं यानी जो आप से आप हो रहा है—

॥ कड़ी ॥

आदि और अन्त उस का है वेहद । इस सबब से कहें उसे अनहद ॥

चेतन्य शक्ति के इज़हार को धुन्यात्मक शब्द या नाम कहते हैं और शब्द जो लिखने और पढ़ने में आता है उस को वर्णात्मक नाम कहते हैं। जो लीला-धारी का नाम है वह सिफ़ाती है, ज़ाती नहीं है जैसे गिरधारी मुरारी गोपाल वग़ैरह—गिर यानी पहाड़ को कृष्न जी ने उँगली पर उठाया तब गिर-धारी नाम उन का हुआ और मुरा दैत्य को मारा तब मुरारी उन का नाम हुआ और गौओं को पालते थे इस लिये गोपाल नाम हुआ । पातञ्जलि जोग शास्त्र में शब्द की महिमा की है मगर यह नहीं निर्नय किया है कि कौन शब्द खैंचने वाला है और कौन नीचे गिराने वाला है ।

॥ कड़ी ॥

जो निदा खैंचे है ऊँचे को तुझे ।
जान वह धुन आई ऊँचे से तुझे ॥ १ ॥
सुन के जो आवाज़ जागे कामना ।
काल की आवाज़ है घर घालना ॥ २ ॥

सवाल—अनामी पुरुष में विकार कैसे हुआ ।

जवाब—असल में विकार नहीं है वह भी चेतन्य है मगर कमी वेशी का फ़र्क़ है जैसे इस सूरज के सामने

एक चिराग़ जलाकर रख दो तो बिलकुल अँधेरा मालूम होगा या जैसे यह सूरज दूसरे सूरज के सन्मुख जो कि हज़ार गुना विशेष प्रकाशमान है धुँधला मालूम पड़ेगा मगर हैं दोनों प्रकाशमान सिर्फ़ कमी बेशी का फ़र्क़ है ऐसे ही अनामी पुरुष के नीचे और ऊपर के हिस्से का भेद है—चेतन्यता की न्यूनता यानी कमी से ज्ञाता पर जो असर होता है उस को विकार या भरम या माया कहते हैं वह भी चेतन्य है मगर न्यून है जैसे तुम्हारे पैर के तलवे या नाखून में जो चेतन्य है और दिमाग़ का जो चेतन्य है उस में फ़र्क़ है-आलमे सग़ीर और आलमे कबीर कहा है यानी जैसे बाहर रचना है उसी तरह छोटे पैमाने पर पिण्ड की भी रचना हुई है। अगर चेतन्य में दरजात न होते तो रचना न होती। वेदान्ती जो ब्रह्म ब्रह्म कहते फिरते हैं उन्हों ने कमी बेशी का फ़र्क़ नहीं जाना, चेतन्य को यकसाँ समझा, यह उन की ग़लती है—संत कहते हैं कि न्यून देश को छोड़ो परिपूरन देश में चलो—इसी को अद्वैत सिद्धान्त कहते हैं हर तरह के विद्यावाले जो आते हैं उनके लिये ख़याली चरचा की जाती है मसलन सूरज चाँद कैसे हुए, रचना के पेश्तर क्या हालत थी। किस तरह चन्द ताक़तें यहाँ कार्रवाई कर रही हैं-जब तक बमूजिब

इल्म क़ानून .क़ुदरत इन को सबूत नहीं दिया जाता है तब तक क़ायल नहीं होते हैं और जो कि अभ्यासी हैं उनके लिये अमली चर्चा की जाती है पर ख़याली चर्चा करना भी एक क़िस्म की बुनियाद डालना है इस लिये कभी कभी ख़याली चर्चा होने में मुज़ायक़ा नहीं है-हम तो आढ़त का काम करते हैं दया से यह सेवा मिली है जैसा कोई गाहक आता है वैसी उस को चीज़ दिखाते हैं। जौहरी के पास अगर कोई तरकारी लेने जाता है तो वह उस को निकाल बाहर करता है वैसे ही यहाँ कोई करमी भरमी आता है तो पर तवज्जह नहीं की जाती सिर्फ़ सच्चे गाहक के वास्ते सब तरह की चर्चा की जाती है।

सवाल—दयाल के अंस और काल के अंस में क्या भेद है और जिन को काल का अंस कहा है उन का उद्धार होना मुमकिन है या नहीं।

जवाब—जब तक कुछ रचना नहीं हुई थी अनामी पुरुष अपने में आप मगन था और जैसे कि पहाड़ पर बरफ़ जमी होती है उस के ऊपर बादल सा छाया रहता है इसी तरह उस अनामी पुरुष के एक हिस्से पर .ग़ुबार (जो कोई दूसरी चीज़ न थी) किसी क़दर फ़ासले पर छाया था। बहुत अर्से तक इसी तरह रहा मगर प्रकाशवान हिस्सा जो उस के क़रीब था उस

की तरफ़ कशिश उस ग़ुबार की थी और उस ग़ु-
बार के अंदर भी चेतन मौजूद था। फिर जब उस
अनामी सिन्ध से मौज उठी उस ने अगम लोक रचा
और फिर वहाँ से बदस्तूर धार रवाँ हुई और अलख
लोक और फिर सत्त लोक रचा गया। इस के नीचे
ग़ुबार भारी था इस में जो चेतन्य था उस की जब
दौड़ ऊपर को हुई और उस पर से खोल झाड़े गये
चूँकि सत्तलोक में ठहरने के वह क़ाबिल न था इस
लिये नीचे उतारा गया—उसी का नाम निरंजन हुआ।
वह आप रचना नहीं कर सकता था इस लिये ऊपर
से दूसरी धार जो सुरतों का बीज लिये आई उतारी
गई, फिर दोनों ने मिलकर रचना करी। उस निरं-
जन से जो लहर आती है और उस में थोड़ी चेतन्य
की धार भी होती है क्योंकि बग़ैर उस के कोई कार-
वाई नहीं हो सकती वह काल का औतार है और
जिन जीवों का रुख़ बहुत करके बाहरमुख है और
तमोगुन और बिकारी अङ्ग उन में ज़ियादा है वह
काल की अंस कहलाते हैं। अब अगर यह किसी तरह
सन्त सतगुरु के सनमुख आवें तो उनकी विशेष चेतन्य
धार इन की चेतन्य धार को जो बहुत ख़फ़ीफ़ है अपने
में लपेट कर ले जा सक्ती है और उद्धार उन का हो
सक्ता है नहीं तो सिर्फ़ एक दर्जे चढ़ाई होती है जैसे

परलय महा परलय मैं। और काल का औतार भी वहाँ तक ही पहुँचा सक्ता है जहाँ तक उस की रसाई है, काल के जीव संतों के सन्मुख नहीं आते हैं और यही उन की पहिचान है, इस लिये जो जीव राधास्वामी मत मैं शामिल हुआ उस को अपने उद्धार मैं किसी तरह शक नहीं करना चाहिये क्योंकि जिस पर दृष्टि संतों की पड़ी वही पार हुए बल्कि हुज़ूर महाराज ने तो फ़रमाया था कि जहाँ सन्त बिराजते हैं उनके आस पास के बेशुमार जीवों का उद्धार और फ़ायदा होता है और इसी तरह वचन मैं लिखा है कि जिसने कपड़ा पहिनाया तो उस के बनाने मैं जो जो लगे हैं सब का उद्धार होगा, बल्कि त्रिलोकी का भी यानी तीन २ बिभाग का जो एक एक लोक है सुन्न यानी दसवैं द्वार तक एक एक दर्जे का उद्धार होगा; और दयाल की अंस भी बाज़ सत्तलोक मैं और बाज़ उस के समीप द्वीप बनाकर वहाँ रक्खे जावेंगे और बाज़ की सत्तलोक से दूरबीन यानी ऊपर की धार लेकर ऊपर चढ़ाई होगी और यह इब्तिदाई फ़र्क़ के सबब से होगा। मगर जब राधास्वामी दयाल ख़ुद कुल मालिक मिले वह तो धुर तक ही पहुँचावेंगे और धुर पहुँचने का ही इरादा सब को रखना चाहिये। मन जो काल का अंश है सब मैं बैठा है अव्वल यह

मारा जावेगा तब दयाल की अन्श जो सुरत है वह निर्मल होकर ऊपर चढ़ाई जावेगी। काल की अन्श सब मैं मौजूद है जिन मैं इस की विशेषता है वह काल की अन्श कहलाते हैं और उन की रहनी और सुभाव और सूरत मैं भी किसी क़द्र फ़र्क़ होगा मगर जो जीव चाहे वह दयाल की अन्श हों या काल की जो संतों से उन का मेला हो जावे तो उन के उद्धार होने मैं किसी तरह का शक नहीं है।

सवाल—दयाल देश मैं दर्जे किस तरह हुए क्योंकि वहाँ चेतन्य ही चेतन्य है, और अनामी पुरुष का ज़िक्र जो भजन के परचे मैं नहीं है क्या सबब है ?

जवाब—जैसे पानी और भाप और भाप की भी सूक्षम हालत यानी गैस और बरफ़ और ओला सब एक ही चीज़ हैं मगर दर्जे हो गये इसी तरह दयाल देश मैं भी दरजे समझने चाहिएं, और अनामी पुरुष का ज़िक्र तो बड़ी पोथी सार वचन मैं मौजूद है—

॥ कड़ी ॥
मैं तो चकोर चन्द राधास्वामी। नहिं भावे सतनाम अनामी ॥

और रचना का हाल जिस क़दर प्रेम पत्र मैं है उतना ही खोलने की मौज थी आइन्दा मौज होगी तो और खोला जावेगा।

सवाल—(क) वक्त के गुरू की क्या ज़रूरत है ?

(ख) अब जो सतगुरु प्रगट नहीं हैं फिर कौन मदद करता है ?

जवाब—(क) लुक़मान हकीम बहुत ही होशियार था मगर अब तुम्हारी क्या मदद कर सक्ता है, वक़्त का हकीम होना चाहिये, इसी तरह वक़्त के गुरू की ज़रूरत है। जिस का अन्तर में शब्द नहीं खुला है और रूप नहीं प्रगट हुआ है उस को गुरू की ज़रूरत है।

(ख) इस मंडल में राधास्वामी दयाल निज रूप से मौजूद हैं इस लिये सुरत मन सिमटते और खिंचते हैं। यह सबूत मालिक के मौजूद होने का है। बग़ैर समरथ के और किसी की ताक़त सुरत मन समेटने और खींचने की नहीं है। पेश्तर से भी अब विशेष दया और मदद मिलती है। सतगुरु के वक़्त में भी अन्तर में निज रूप ही मदद करता था, फिर जब मौज होगी तब देह स्वरूप से भी प्रगट होंगे।

सवाल—ऐसा सुना है कि सतगुरु जब गुप्त होते हैं तब अपना जानशीन मुक़र्रर कर जाते हैं, और जब तक प्रगट कार्रवाई की मौज नहीं है तब तक गुप्त रहते हैं—तो गुप्त संत की पहिचान क्या है, और वह कब प्रगट होंगे ?

जवाब—गुप्त होते वक़्त किसी में बीजा डाल गये

हौँगे न मालूम कब वह तैयार होगा-अनंत तिरलो-कियाँ हैँ शायद अब भी किसी दूसरी पृथ्वी पर मौ-जूद हौँगे, और यहां से बिशेष सतसंग होता होगा और वहाँ से इस पृथ्वी की भी संभाल करते हौँगे, जैसे हुजूर साहब के वक़्त मैँ और पृथ्वियौँ की सम्हाल होती थी। गुप्त संत की पहिचान की हम को ख़बर नहीँ है, साध की महिमा मैँ कबीर साहब का क़ौल है—

[१]

गाँठा दाम न बाँधई, नहिँ नारी सोँ नेह।
कहै कबीर ता साध की, हम चरनन की खेह॥

[२]

निरवैरी नि कामता, स्वामी सेती नेह।
बिषयन से न्यारा रहै, साधन का मत येह॥

सतगुरु कब प्रगट हौँगे यह कह नहीँ सक्ते हैँ शायद दो सौ बरस के बाद प्रगट होवैँ तो इस मैँ कोई तअज्जुब नहीँ हैँ, संतौँ के बरस और वक़्त भी न्यारे होते हैँ!

सवाल—एक गुरू छोड़ के दूसरा गुरू करना यह गोया दूसरा पति करना है तो फिर जिन संत सतगुरु से उपदेश लिया है उन के गुप्त होने पर उन के जानशीन को गुरू धारन करना कैसे ठीक हो सकता है?

जवाब—दूसरा है कहाँ वही तो एक गुरू है, निज रूप पर निगाह करनी चाहिये, देह रूप पर जब तक नज़र अटकी हुई है तब तक दो नज़राई पड़ते हैं नहीं तो एक ही हैं। अगर किसी का बाप हिन्दुस्तानी है और अंगरेज़ी पोशाक पहिनले तो क्या वह दूसरा हो गया? है तो उसी का बाप, सिर्फ़ ग़िलाफ़ का फ़र्क़ है। या जैसे समुन्दर का पानी पहिले एक दरिया में आता था अब दूसरे में आता है पर समुन्दर तो वही है सिर्फ़ द्वारे का फ़र्क़ है। असल में जो निज रूप है वही गुरू है और जब तक वक्त के गुरू की भक्ति नहीं करेगा काम नहीं होगा।

॥ कड़ी ॥

मारे डरके टेक न छोड़ें। वक्त गुरू में मन नहिं जोड़ें॥
जो अनुरागी विरही भाई। भक्ति गुरु की उन प्रति गाई॥
वक्त गुरू जब लग नहिं मिलई। अनुरागी का काज न सरई॥

सवाल—पूरे गुरू जो अपने को छिपा के बैठें तो क्या किया जावे?

जवाब—उन को ढूँढ़ना चाहिये और जब वह मिल जावें तब उन को पकड़ लेना चाहिये-"जोइन्दा याविन्दा,,। वे समझे बूझे किसी में भाव लाना यह नामुनासिब है।

सवाल—अपने इख़्तियार में तो कुछ नहीं है दया जब हो तब सब कुछ बन सकता है ?

जवाब—बेशक इस के हाथ कुछ नहीं है रत्ती भर नहीं कर सकता है सब दया से होता है ॥

॥ कड़ी ॥

जीव निथल क्या करे विचारा। जब लग राधास्वामी करें न सहाम ॥

अगर भाग है तो गुरू भी आप से आप इस को मिल जाते हैं—

॥ कड़ी १ ॥

भाग जगा मेरा आदि का, मिले सतगुरु आई।
राधास्वामी धाम का, मोहिं भेद जनाई ॥

॥ कड़ी २ ॥

पिरथम दया करी मो पै भारी। अब क्यों हुए कठोर दयाल ॥

असल में कठोरता नहीं है यह हालत भी दया की है मगर यह समझता है कि पहिले दया थी अब नहीं है।

सवाल—कहते हैं कि सतगुरु सूक्ष्म स्वरूप से मौजूद हैं तो जब स्थूल स्वरूप में पृथ्वी पर होंगे तब तो सूक्ष्म में भी मौजूद होंगे ?

जवाब—हाँ ठीक है कहीं तिब्बत में या दूसरी पृथ्वी पर होंगे—जब हुज़ूर साहब और स्वामी जी

महाराज इस पृथ्वी पर थे तब भी तो और पृथ्वियों की सूक्ष्म शरीर से सँभाल होती थी वैसे ही अब भी देह स्वरूप से शायद किसी दूसरी पृथ्वी पर हौंगे और सूक्षम स्वरूप से इस पृथ्वी की सँभाल कर रहे हौंगे, फिर जब मौज होगी तब नर स्वरूप धारन करके इस पृथवी पर तशरीफ़ लावैंगे और दरशन दैंगे और सब को निहाल करैंगे—

॥ कड़ी ॥

नर रूप दिखावैं जब हीं । मन खैंच चढ़ावैं तब ही ॥
दे मदद चढ़ावैं आगे । मन जुग जुग सोया जागे ॥

सवाल—सतगुर सूक्षम स्वरूप से और मालिक शब्द स्वरूप से घट घट मैं किस तरह मौजूद हैं ?

जवाब—सतगुरु के सब पट खुले हुए हैं इस लिये हर एक स्थान (Plane) पर अपने निज रूप यानी सूक्षम रूप से वह मौजूद हैं जिस अभ्यासी का जिस स्थान का द्वारा खुलेगा उस को वहाँ उन के दरशन हो जावैंगे और मालिक शब्द स्वरूप से हर एक स्थान पर मौजूद है यानी जो सत्त धार या चेतन्य धार जिस मैं कि राधास्वामी धुन हो रही है और जो कि मुक़ामी शब्दौं के अन्तरगत है वह हर एक मण्डल के अन्तर के अन्तर मैं मौजूद है जिस का जो द्वारा खुलेगा

वहाँ जो वह अन्तर के अन्तर पैठेगा तो उस का धुन से मेल हो जावेगा।

सवाल—जैसे स्वामी पिता और राधा माता राधा-स्वामी के औतार हुये वैसे फिर भी राधास्वामी माता पिता औतार धरेंगे कि नहीं ?

जवाब—संत सतगुरु राधा यानी माता स्वरूप हैं और निज रूप उन का स्वामी यानी पिता स्वरूप है, पिता के पास माता पहुँचाती है इसी तरह सन्त सतगुरु मालिक के चरनों में पहुँचावेंगे, और अंतर में इन के स्वरूप धार और भण्डार हैं और यह जब तक कि इस लोक का उद्धार नहीं कर लेंगे अवतार धारन करते रहेंगे—

हे राधा तुम गति अति भारी।
हे स्वामी तुम धाम अपारी।
राधास्वामी दोउ मोहिं गोद बिठारी॥

सवाल—साध और संत सतगुरु एक ही वक्त में मौजूद हो सकते हैं या नहीं ?

जवाब—एक ही वक्त में मौजूद हो सक्ते हैं अल-बत्ता उस वक्त में सतगुरु प्रगट कार्रवाई करेंगे और साध गुप्त रहेंगे।

सवाल-सतगुरु किस को कहते हैं ?

जवाब—सत्त पुरुष से धार आकर जिस नर शरीर

मैं कार्रवाई करे और उस के और सत्तपुरुष के बीच मैं कोई परदा हायल न होवे उस को सतगुरु कहते हैं या यह कि मालिक के नूर की धार जो अँधेरे मैं परकाश करे उस को सतगुरु कहते हैं, इस लिये गुरु नाम मालिक का है और किसी को गुरु पदवी धारन करने का इख़्तियार नहीं है।

सवाल—सतगुरु की क्या पहिचान है ?

जवाब—जिस के संग करने से सुरत मन सिमटैं और दुनिया की तरफ़ से नफ़रत और मालिक के चरनौं मैं रग़बत आती जावे और परमार्थी घाट होता जावे और प्रेम पैदा होने लगे और जो आप भी शब्द मैं रत हैं और इस को भी उसी मैं लगावैं वही सत-गुरु हैं; मगर शुरू मैं सतगुरु भाव नहीं लाना चाहिये अपने से बड़ा और परमारथ मैं मददगार और गहरा अभ्यासी उन को समझना चाहिये फिर जिस क़दर तरक़्क़ी होती जायगी उसी मुवाफ़िक़ भाव भी बढ़ता जायगा और एक दिन पूरा भाव सतगुरु का आजा-वेगा शुरू मैं सतगुरु भाव लाना यह सिर्फ़ समझौती है असली नहीं है। और बाहरी पहिचान सतगुरु की यह है कि चरनामृत और परशादी आम तौर पर देते हैं आरती कराते हैं और बचन सुनाते हैं और उन के बचन और दरशन और चरनामृत परशादी मैं असर

होता है यानी थोड़ा बहुत सुरत मन का सिमटाव होता है और जो झूठे हैं उन के दरशन बचन वग़ैरह में इस क़िस्म का असर नहीं होता है।

सवाल—कहीं कहीं ऐसा भी देखने में आया है लोगों को ठगने के लिये बाज़े झूठे अपने को संत और सतगुरु कहते हैं और लोग उन को मानने लगते हैं ?

जवाब—जो कि भोले भाले हैं सिर्फ़ उन को वह ठग सकते हैं मगर जो कि सच्चे भक्तजन और अभ्यासी हैं उन को हरगिज़ नहीं ठग सकते क्योंकि उनकी रूह को जब तक रूहानी ख़ुराक नहीं मिलती तब तक शांती नहीं आती और उन को जो ख़ास तजरबा हासिल है और परचे मिले हैं उन का भेद झूठे गुरू के पास नहीं है इस लिये उन की बातें उन पर असर नहीं करेंगी और वह उन को नहीं ठग सकते और भी झूट बहुत अरसे नहीं चल सकता है जल्द ज़ाहिर हो जाता है।

सवाल—जैसे और मत के लोग वक़्त के गुरू न होने से टेकी हो गये हैं वैसे ही राधास्वामी मत वाले भी सतगुरु के गुप्त होने के बाद टेकी हो जायँगे ?

जवाब—राधास्वामी दयाल की यह मौज नहीं है कि जिन्हों ने उन की सरन ली है वह और मतों के

जीवौं की तरह टेकी हो जावें। अगले महात्मा सिर्फ़ एक दो स्थान का भेद बतलाते थे और गुरू के गुप्त होने के बाद आगे का पता उन को न मिलने से वह टेकी रह गये। राधास्वामी दयाल ने शुरू से ही राधास्वामी धाम का इष्ट बँधवाया और सब भेद मंज़िलौं का खोल कर सुनाया ताकि सतगुरु के गुप्त होने के बाद कहीं नीचे के स्थान पर ठहर कर टेकी न हो जावें और सतगुरु वक़्त की महिमा की और वक़्तन फ़वक़्तन सतगुरु रूप धारन करके सम्हालते हैं और झूठे और सच्चे गुरू की पहचान ख़ूब खोलकर गाई है इस वास्ते राधास्वामी मत वाले टेकी नहीं रह सकते और वह पूरे और सच्चे गुरू का खोज हमेशा करते रहेंगे। अलावा इस के स्वामी जी महा-राज का बचन है कि राजकुल में औतार धारन करेंगे और आम तौर पर राधास्वामी मत जारी किया जायगा। कबीरपंथी और नानक पंथी अब टेकी हो गये हैं क्योंकि उन में कोई भी अभ्यासी नहीं रहा है। जितने कि तारागन नज़र आते हैं वह एक एक सूरज हैं और उन में रचना है और ऐसी पृथ्वियाँ अनंत हैं—फ़िलहाल सतगुरु अगर इस पृथिवी से गुप्त हो गये हैं शायद किसी दूसरी पृथ्वी पर प्रगट होंगे इस में कोई शक नहीं है और उन की दया की धार हर

वक्त जारी है पर उस की परख नहीं है जब दया से प्रेम प्रगट होगा और सुरत मन सिमटने लगेंगे तब पहिचान आवेगी—कहने का मुद्दा यह है कि हमेशा अभ्यासियों के मौजूद होने और सतगुरु के प्रगट होने से राधास्वामी मत हरगिज़ टेकी नहीं होगा।

सवाल—एक सतगुरु के चोला छोड़ने के बाद दूसरे में धार कैसे आ समाती है?

जवाब—सतगुरु की धार तीसरे तिल के नीचे नहीं आती है मगर चूँकि सब जीवों को फ़ैज़ पहुँचाना है और सब का उद्धार करना मंजूर है इस लिये गुरुमुख को गुदा चक्र तक उतारते हैं। जब सतगुरु चोला छोड़ते हैं तब जो गुरुमुख है उस की सुरत को तीसरे तिल में सर्बांग करके पहुँचा देते हैं उस वक्त सब पट उस के खुल जाते हैं तब उस गुरुमुख और सतगुरु में कोई फ़र्क़ बाक़ी नहीं रहता है और चूँकि गुरुमुख से आम फ़ैज़ जीवों को पहुँचाना मंजूर है इस वास्ते उस के यहाँ कुछ अरसे ठहराने के लिये बंधनों का ज़ियादे बोझ उस पर डाला जाता है जैसे ग़ुब्बारे को डोरियों से नीचे बाँध रखते हैं कि कहीं उड़ न जावे॥

सवाल—सतगुरु जब गुप्त होवें तब फिर किस का ध्यान करना चाहिये?

जवाब—वक़्त के सतगुरु का ध्यान करना चाहिये क्योंकि वह कारकुन रूप हैं, सबब यह कि पहिले सतगुरु के रूप का अक्स जो इस मंडल में पड़ा था वह अब कारकुन इस मण्डल में नहीं है जब सतगुरु वक़्त प्रगट होते हैं तब वह अक्स आप हट जाता है और चेतन्य मण्डल में कोई फ़र्क़ रूप में नहीं रहता और सतगुरु प्रत्यक्ष के रूप में सत्त धार का दरशन होता है मगर इस में एक बात समझ लेना चाहिये कि कुछ फ़ायदा न होगा अगर कोई किसी सतसंगी को पकड़ के उस का ध्यान करेगा—चाहे उस में जो उस की भावना है इस लिये कुछ शांती आजावे पर इस से ऐसा नहीं समझना चाहिये कि वह पूरा गुरू है। ऐसे दो एक झूठे गुरु अब भी मौजूद हैं कि जिन को कितनों ने पूरा गुरू समझ कर धारन किया है वे कहते हैं कि हमारी तरक्क़ी होती है और स्वरूप दरसता है मगर हक़ीक़त में उन को असली तरक़्क़ी की ख़बर नहीं है और वह नहीं जानते हैं कि सतगुरु का स्वरूप प्रगट होना सहज नहीं है और जब प्रगट होता है तब क्या सूरत मन और सुरत की होती है—उनकी भावना का भी क्या ठिकाना है असल में उनके कर्म ही ऐसे हैं तब झूठा गुरू मिला है क्योंकि ऐसा गुरू उन के और सच्चे मालिक के बीच में गोया पर्दा है

दुनिया के लोग भी तो ख़ुदा या ईश्वर को सच्चा मालिक समझ कर बैठे हैँ बाइस यह है कि उन के कर्म ऐसे ओछे हैँ कि अभी वह पूरे गुरू से मिलने के क़ाबिल नहीँ हैँ जैसे एक भेड़ के पीछे और कुल भेड़ जाती हैँ वही हाल लोगोँ का हो रहा है। और सत-गुरु जब गुप्त होते हैँ तब भी वह धार मौजूद है याने उलट नहीँ गई है बल्कि सिमटी हुई है अगर पिंड के ऊपर से उलट जावे तो कार्रवाई बन्द हो जावे—सिमटने से मतलब यह है कि जैसे ज्वार के वक़्त लहर जोश से आती है वैसे नहीँ आती—जैसे हुगली नदी ज्वार के वक़्त बहती है। वैसे तो नदी बहुत हैँ मगर जिस का रुख़ समुन्दर से मिला हुआ है उस की महिमा ज़ियादा है और उस मेँ भी जिसमेँ ज्वार भाटा होता है उस की महिमा बिशेष है इसी तरह जिस रूप मेँ कि धार आकर कार्रवाई करती है उस की महिमा भारी है—धार तो एक ही है पहले गोया हु-गली मेँ आती थी अब दूसरी नदी मेँ आती है मगर समुद्र एक ही है वैसे ही भंडार और धार एक ही है सिर्फ़ द्वारे यानी देही का फ़र्क़ है।

सवाल—कहते हैँ कि बग़ैर गुरुमुख के सतगुरु की कार्रवाई जैसी कि चाहिये वैसी प्रगट नहीँ होती और पूरे तौर से दया नाज़िल नहीँ होती यह ठीक है या नहीँ?

जवाब—पहली नज़ीर देखो कि कबीर साहब के धर्मदास गुरुमुख थे चूरामन उन के बेटे थे उन के पीछे कोई गुरुमुख नहीं हुआ तब कार्रवाई बन्द हो गई। गुरू नानक साहब के भी इसी तरह जब कोई गुरुमुख न रहा तब कार्रवाई गुम हो गई। दादू साहब के गुरुमुख सुन्दरदास थे उन की और जगजीवन साहब की भी गद्दी इसी तरह गुम होगई। लेकिन मुताबिक़ हुक्म राधास्वामी दयाल के जो बराबर गुरुमुख होते आवेंगे तो फिर स्वतः संत कैसे आवेंगे। जब स्वामी जी महाराज और हुजूर महाराज एक दफ़ा बाप और बेटे होकर शाहंशाही खानदान में आवेंगे तो स्वामी जी महाराज स्वतःसंत होकर आवेंगे इस लिये किसी वक्त गुरुमुख का आना भी बन्द हो जावेगा पर दया बराबर जारी रहेगी।

सवाल—स्वतःसंत और गुरुमुख में क्या भेद है ?

जवाब—स्वतःसंत तीसरे तिल के नीचे नहीं उतरते हैं और वहाँ बैठ कर कार्रवाई करते हैं, जैसे ट्रांस यानी बेहोशी की हालत में ऊँचे घाट पर बैठ कर स्थूल शरीर से कार्रवाई की जाती है, और जो गुरुमुख है उस की सुरत नीचे गुदाचक्र तक उतारी जाती है यानी सत्त देश का बीज। यहाँ पिण्ड में इस क़दर नीचे तक उतारा जाता है और इसी से सारी रचना

पवित्र की जाती है यही वजह है कि गुरुमुख की महिमा स्वतःसंत से भी ज़ियादा है क्योंकि उस का फ़ैज़ नीचे तक फैलता है ।

॥ कड़ी ॥

गुरुमुख की गति सब से भारी । गुरुमुख कोटिन जीव उबारी ।
कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ । कोई न जाने किस समझाऊँ ॥

स्वतःसंत वह हैं जो किसी के चेले नहीं हुए हैं और जिन के पठ सब खुले हुए हैं और अपने आप कार्रवाई कर सकते हैं और उन के जो निज अंश यानी गुरुमुख हैं उन को पिण्ड से निकाल कर तीसरे तिल में पहुँचाते हैं फिर स्वतःसंत में और उन में कोई फ़र्क़ नही रहता ।

सवाल—बग़ैर मदद सतगुरु के चढ़ाई हो सकती है या नहीं ?

जवाब—प्रेम पत्र जिल्द ३ बचन ५ सफ़हा १५० में और भी बचन २ सफ़हा २१ में साफ़ लिखा है कि पिण्ड में सफ़ाई और चढ़ाई बग़ैर मदद और ध्यान गुरु स्वरूप के हो सकती है लेकिन पिण्ड के पार चढ़ना बग़ैर मदद और दया संत सतगुरु के मुमकिन नहीं है। गृहस्थ में जो संत होते हैं उन से जीवों का उद्धार होता है जैसे स्वामीजी महाराज हुज़ूर महाराज कबीर साहब

वग़ैरह, तुलसी साहब ग्रहस्थी नहीं थे तब उन की कार्रवाई बंद हो गई यानी उन्हों ने जीवों के उद्धार की कार्रवाई जैसी चाहिये जारी नहीं रक्खी। स्वामी जी महाराज के कोई लड़का नहीं था इस में मौज थी जीवों का ऐसा हाल है कि टेकी हो जाते हैं इसलिये कोई लड़का नहीं हुआ। जब संतों की कार आमद चीज़ का इस क़दर अदब है तो उन का पुत्र जो कि निज अंस और परशादी है उस की किस क़दर न ताज़ीम करना चाहिये मगर लोगों की ऐसी हालत है कि या तो उस को संत करके मानेंगे या उससे झगड़ा करने को तैयार हो जावेंगे यह नामुनासिब है।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के रंग नहीं चढ़ता और जिस क़दर दया होनी चाहिये वैसी नहीं होती ?

जवाब—जब सच्चा ख़ाहिशमंद आता है तब रङ्ग भी चढ़ता है और कार्रवाई भी प्रगट होती है इसलिये जब सच्चा ख़ाहिशमंद आवेगा तब देखा जायगा। जैसे दुकान पर गुमाश्ते और नौकर काम चलाते हैं और जब कोई बड़ा ख़रीदार आता है तब दुकान-दार आप बाहर संदूक़ की कुञ्जी लेकर आता है और सौदा देता है वैसे ही जहाँ कहीं कि सतसंग है सब दुकानें याने शाख़ें हैं जब सच्चा ख़रीदार आवेगा तब दुकानदार भी आकर प्रगट होगा।

सवाल—सतगुरु क्यौं नहीं प्रगट होते हैं ?

जवाब—मन को मारो तन को जारो इन्द्री रोको गुरु चरन में प्रीत करो पिण्ड के पार पहुँचो तो गुरू भी प्रगट होंगे।

सवाल—अगर इस पृथ्वी पर या कहीं और पृथ्वी पर भी सतगुरु मौजूद हों तो जब गुरुमुख आवेगा तब प्रगट कार्रवाई होगी ?

जवाब—ऐसा नहीं है, बग़ैर गुरुमुख के भी कार्रवाई होती है-चरनामृत और परशादी तो आगे ही जारी की जाती है जैसे हुज़ूर साहब के प्रगट होने से पहले ही अन्दर गुप्त तौर पर परशादी और चरनामृत मिलता था मगर पूरे तौर से कार्रवाई जैसी कि चाहिये वैसी तब प्रगट होती है जब कि गुरुमुख आता है।

सवाल—स्वामी जी महाराज और हुज़ूर महाराज मैं धार एक ही थी तो जब दोनौं मौजूद थे तब इन मैं क्या फ़र्क़ था ?

जवाब—जैसे समुन्द्र एक होता है उस मैं से लहरें अनन्त उठती हैं तो जल एकही है इन मैं कोई फ़र्क़ नहीं है वैसे ही भंडार एक ही है और जो धारें निकलती हैं उन मैं भी कोई फ़र्क़ नहीं है अब इस से कोई मतलब नहीं है कि कौन सा जल किस लहर मैं था ज़ात तो एक ही है। या जैसे मुख से आज बोल-

ते हो कल बोल न सको तो रूह एक ही है सिर्फ़ बोलने की कल का फ़र्क़ हो गया, या जैसे बिरती आज एक तरफ़ है कल दूसरी तरफ़, यहाँ बोलनेवाला एक है सिर्फ़ बिरती का फ़र्क़ होता है, तो ख़याल बोलने वाले पर लाना चाहिये न कि बिरती पर।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के क्या कार्रवाई नहीं हो सकती है ?

जवाब—क्यों नहीं हो सकती है—क्या स्वामी जी महाराज फिर नहीं आवेंगे अगर ऐसा हो तो फिर स्वतःसंत का आना बंद हो जायगा शायद अब भी कोई बच्चा स्वतःसंत हो जब मौज होगी तब प्रगट होगा। स्वतःसंत तीसरे तिल के नीचे नहीं आते और वहाँ बैठकर कार्रवाई करते हैं और अपनी निज अंस को गुदाचक्र तक उतार देते हैं उस को गुरुमुख कहते हैं—गुरुमुख से सारी रचना को फ़ैज़ पहुँचता है स्वतःसन्त उस को निकालने के लिये आते हैं और उस की निगरानी करते हैं और जब तीसरे तिल में गुरुमुख की रसाई होती है तब वह स्वतःसन्त से मिल कर एक हो जाता है यानी दोनों का एक रूप हो जाता है या ऐसा समझ लो कि सुरत गुरुमुख है, शब्द गुरू है और असल में दोनों एक ही हैं यानी जहाँ धार ने ठेका लिया वहाँ उस को सुरत कहते हैं

और जो कार्रवाई करनेवाली धार है उस को शब्द कहते हैं ।

सवाल-स्वामी जी महाराज के वक़्त में जब एक अंस थी तब उसी वक़्त दूसरा गुरुमुख भी था गोया तीन धारें एकही वक़्त मौजूद थीं सो यह कैसे हो सकता है ?

जवाब—इस में क्या है दो अंस क्यों चाहे पचास हों इस में कोई बात नहीं है, एक बाप के पाँच सात लड़के नहीं होते हैं ?

सवाल—जो सुरतें दयाल देश में पहुँचती हैं उनमें और सतगुरु में क्या फ़र्क़ होता है ?

जवाब—जो कि पहुँचाई जाती हैं वह हंस होती हैं और जो सन्त हैं वह सत्तपुरुष का अवतार हैं, सन्त गोया बादशाह हैं और हंस रैयत हैं ।

सवाल—जब सतगुरु मौजूद होते हैं तब साध गुरु प्रगट कार्रवाई कर सकते हैं या नहीं ?

जवाब—नहीं, सतगुरु की मौजूदगी में साध गुरु कार्रवाई नहीं करता है ।

सवाल—बूढ़ा गुरुमुख हो सकता है या नहीं वह तो गुरू से पहिले ही मर जायगा ?

जवाब—क्यों नहीं हो सकता है सफ़ेद डाढ़ी पर

नज़र नहीं करनी चाहिये गुरुमुख जब बच्चा है तब भी परमार्थ का ख़याल उस को होता है मगर माया का परदा उस पर डाल देते हैं बल्कि और जीवों से भी ज़ियादा उस को माया में फँसाते हैं और जब बड़ा होता है तब गुरू के सनमुख आने से ही उस के सुरत मन सिमटते हैं और सब भेद उस पर आप से आप खुल जाता है और जो गुरू नहीं भी मिलता है तो भी जब बड़ा होता है आप ही सुरत का खिचाव होता है और अन्तर में चढ़ाई होती है।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के गुरू कैसे हो सकता है?

जवाब—यह ठीक है बग़ैर बच्चे के मा बाप हो नहीं सकते हैं अगर बच्चा ही नहीं है तो वह कैसे मा बाप हो सकेगा।

सवाल—स्वामी जी महाराज ने एक बार फ़र्माया था कि न मालूम मैं गुरू हूँ या राय सालिगराम साहब (हुजूर महाराज) मेरे गुरू हैं इस का क्या मतलब है?

जवाब—धार एक ही है इस में फ़र्क़ नहीं है, अन्स पहिले नीचे उतारी जाती है, वह जब तीसरे तिल में पहुँचती है तब फिर उस में और गुरू में कोई भेद नहीं रहता—ऐसा गुरू और चेला कोई बिरला होता है।

॥ कड़ी ॥

सुरतवन्त अनुरागी सच्चा, ऐसा चेला नाम कहा।
गुरु भी दुर्लभ चेला दुर्लभ, कहीं मौज से मेल मिला॥

सवाल—आज कल चन्द सतसंगी ख़सूस पञ्जाब में बाद गुप्त होने हुज़ूर महाराज के गुरू बन बैठे हैं और बेधड़क प्रसादी देते हैं और कहते हैं कि फ़लाँ मुक़ाम हम को खुल गया है और हम में हुज़ूर प्रगट हुए हैं यह क्या मामला है?

जवाब—यह भी मौज से ही है और इस में भी जीवों की गढ़त है बड़े ग़ुबार लोगों के मनों में भरे थे वह झड़ रहे हैं हुज़ूर महाराज का चुपचाप गुप्त होना बड़ी मसलहत से था, जिन लोगों से कि हुज़ूर महाराज के वक़्त में कुछ अभ्यास नहीं बनता था और सिर्फ़ प्रसादी और चरनामृत वग़ैरह को ही परमार्थ समझते थे अब वह किसी न किसी को पकड़ कर गुड्डा बना कर बिठाते हैं और उस से प्रसादी लेते हैं मगर जो सच्चे परमार्थी हैं उन को भी अगरचि चाह इस क़िसम की है कि संत सतगुरु फिर प्रगट हों और सब कार्रवाई बदस्तूर जारी हो जावे मगर वह जानते हैं कि किसी के बनाने या कहने से सन्त नहीं बन सकते जब उनकी मौज होगी आप प्रगट हो जावेंगे। यह चाह उन की ना मुना-

सिव नहीं है मगर समझना चाहिये कि जो मौज ऐसी जल्दी प्रगट होने की होती तो गुप्त ही क्यों होते जब उन्हों ने देखा कि लोग बाहरी नाच कूद में जो कि आसान बात है बहुत लग रहे हैं और अन्तर अभ्यास में ढीलम ढाल हैं तो दया करके ऐसी मौज फ़रमाई ताकि तड़प लोगों के दिलों में दर्शनों की हो और अन्तर अभ्यास दुरुस्ती से बन आवे सो ना-दान जीव इस बात को नहीं समझते हैं आप गुरू बन बैठते हैं मगर कुछ हरज नहीं है वह भी दुरुस्त किये जावेंगे और झकोले खाकर सतसंग में लाये जावेंगे ॥

सवाल—मालिक की मौज से जो तरंग पैदा हो और मन की तरंग में किस तरह तमीज़ हो सक्ती है ?

जवाब—जो सत्त की धार से तरंग पैदा हो वह मौज मालिक की समझना चाहिये और जो तरंग कि भोग विलास की काल पुरुष से पैदा हो वह मन की तरंग है। मौज से तरंग होती है उस में हमेशा पर-मार्थी फ़ायदा होता है और मन की तरंग हमेशा सं-सार की तरफ़ झुकाती है। अब अगर सत चेतन की धार से मेला हो तो पहिचान हो सकती है मगर चूँकि वह धार बहुत अन्तर में पोशीदा है और वह भी मन के मुक़ाम पर हो कर आती है और जीव की

बैठक बहुत नीची है इस लिये पहिचान मुशकिल है, अलबत्ते कुछ निशानियों से पहिचान हो सक्ती है—अव्वल तो कार्रवाई का नतीजा देखना चाहिये यानी अगर किसी काम का नतीजा ऐसा हो कि उस में तरक़्क़ी परमार्थ की हो तो वह तरंग मौज की समझना चाहिये और जिस तरंग से संसारी भोग बिलास या मान बड़ाई की चाह या और कोई नतीजा ख़िलाफ़ परमार्थ के ज़ाहिर हो वह मन की तरंग है। दोयम अगर किसी काम के असबाब ख़ुद बख़ुद इकट्ठा हो जावें और फ़ौरन हिलोर थोड़ी उठ कर सहज सुभाव उस काम को किया जावे तो वह मौज से है बशरते कि वह काम नाजाइज़ और ख़िलाफ़ परमार्थ के नहीं है लेकिन बाज़ वक़्त नाजाइज़ तरंग से भी कुछ परमार्थी फ़ायदा निकलता है जैसे हुज़ूर महाराज एक चेले का ज़िक्र फ़रमाते थे कि उस के गुरू पूरे महात्मा थे मगर उस चेले में काम अंग बिशेष था उन्हों ने एक रोज़ कुछ रुपया देकर उस को कहीं रवाने किया, हरचन्द उस ने उज़्र किया और कहा कि मुझ में यह अंग बिशेष है मगर महात्माजी ने कहा कि कुछ परवाह नहीं गुरू सँभालेंगे, आख़िरकार उस को एक बेश्या मिली, चेले ने अपने मन को बहुत कुछ रोका मगर तरंग ऐसी ज़बर थी कि वह

उस के घर गया और रुपया दिया मगर ऐन ख़राबी के वक्त. गुरू महाराज ने उस को दरशन दिये और वह उन के पाँव पर गिरा और दोनौं महात्मा के सामने आये और दोनौं का परमार्थी लाभ भारी हुआ। मगर यह ख़ास तौर पर है आम तौर पर जिस तरंग से परमार्थी लाभ हो वह मौज से है नहीं तो मन की तरंग है और जो जतन उस से बचने के लिये सन्तौं ने बताये हैं उन के मुवाफ़िक़ अमल करके अपना बचाव करना मुनासिब है। सब काम सन्तौं की सरन लेकर और दया के आसरे करना चाहिये ताकि उस मैं बन्धन न होने पावे। जानना चाहिये कि वैसे तो सब जीव सरन मैं हैं क्यौंकि बग़ैर शामिल होने चैतन्य धार के कोई कार्रवाई नहीं हो सकती है, मगर असल सरन मैं आना यह है कि चैतन्य धार से मेला हो और उस की ओट मैं आ जावै।

सवाल—यहाँ रचना जब हुई जब कि आद्या सुरतौं का बीजा लिये हुए सत्तलोक से उतारी गई तो यहाँ जो सुरतैं हैं वह सत्तलोक से आई हैं वह राधास्वामी धाम मैं कैसे पहुँचाई जा सकती हैं, जिस देश से आई हैं वहाँ तक ही संत पहुँचा सकते हैं?

जवाब—दूरबीन देकर हुज़ूर राधास्वामी दयाल जो समर्थ हैं उन को राधास्वामी धाम मैं पहुँचावैंगे।

सवाल—सत्तलोक मैँ संत जब कि जल मछली की तरह रहते हैँ तो बेशुमार संत होँगे ?

जवाब—बेशक अनंत हैँ और वह सब सत्तपुरुष के अंग हैँ।

सवाल—कबीर साहब और धरमदास दोनौँ संत थे फिर धरमदास पर क्योँ माया का परदा छाया रहा?

जवाब—मौज से चंद रोज़ के वास्ते दिखाना था कि माया का कैसा ज़बर हिसाब है जैसे सूरज की रोशनी भी बहुत से परदे डालने से किसी क़दर मंदी पड़ जाती है, और हुज़ूर साहब ने फ़रमाया है कि वक़्त मुक़र्रर पर संत प्रगट होते हैँ, उन का निज आपा हमेशा रौशन और चेतन्य रहता है, नीचे उतर कर जीवौँ की तरह बरतने हैँ, मगर और जीवौँ की धार मैँ और उन की धार में बड़ा फ़र्क़ है और रौ-शनी उन की बराबर जारी रहती है जैसे सूरज जब छिप जाता है तौभी देर तक उस की रोशनी का असर क़ायम रहता है।

सवाल—जीव और सुरत मैँ क्य फ़र्क़ है ?

जवाब—सुरत मन के घाट पर उतर कर जीव कह-लाती है।

सवाल—सेवा बानी की अख़ीर कड़ी मैँ "जो गावे यह सेवा बानी,, गाने से क्या मतलब है ?

जवाब—हर तरह की सेवा प्रेम और उमंग से जो कोई करके अपनी अंदर की ख़ुशी का जो सेवा करने से हासिल होती है दूसरौं पर इज़हार करे इस का नाम गाना है जैसे कहा है—

॥ कड़ी ॥

राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे।
कल कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुख हरै॥

तो गाने से मतलब यही है कि इस तरह राधास्वामी नाम को प्यार और शौक़ के साथ सुमिरै कि वह अन्तर मैं दरस जावै तो ज़रूर उसके कल कलेश सब नाश हो जावैंगे जैसे कोई शाइर कि उस के अंदर कोई मज़मून दरस जाता है गाकर दूसरौं को सुनाता है।

सवाल—ऐसा कहा है कि सतगुरु के सनमुख जो कोई जाता है तो वह उस की उस की समझ माफ़िक़ जवाब देते हैं इस का क्या सबब है?

जवाब—सतगुरु षटमुखी आईना हैं यानी उन के पिण्ड के चक्र साफ़ हैं उन मैं कोई मलीनता नहीं है जिस तरह आईने मैं जैसा रूप निकट आता है वैसा नज़राई पड़ता है वैसे ही सतगुरु के सनमुख जो कोई जैसी भावना लेकर जाता है वैसा ही उस को नज़राई पड़ता है—

॥ कड़ी ॥

जा की रही भावना जैसी । हरि मूरत देखी तिन तैसी ॥

जैसे (thought-reading) अन्तरयामता या मेसमेरिज़्म (mesmerism) मैं दूसरे के अन्तर की कैफ़ियत मालूम कर लेते हैं वैसे ही सतगुरु के सनमुख जो कोई जाता है तो उस का अक्स सतगुरु रूपी आईने पर पड़ता है । आईना किस को कहते हैं जिस मैं किसी चीज़ का अक्स पड़े, इन्द्रियाँ गोया आईना हैं उन मैं भी ख़ास करके आँख कान और जिव्हा इन्द्री आईने के तौर पर कार्रवाई करती हैं मगर जो आँख का आईना है वह सिर्फ़ देखने का काम करता है और कान का सिर्फ़ सुनने का और ज़बान का सिर्फ़ बोलने या चखने का । कहने का मुद्दा यह है कि सतगुरु के सन-मुख जो कोई आता है तो उस की छाया उलट-कर उन पर पड़ती है इस लिये उस की समझ व ख़्वाहिश के माफ़िक़ वह जवाब देते हैं । हुज़ूर साहब के पास अगर कोई आकर इधर उधर की बातैं झूठी सच्ची बनाता था तो आप भी उस से बिलकुल रल मिल जाते थे यानी उसी के माफ़िक़ बोलते थे मगर कुछ झूठ नहीं बोलते थे उसी का परछावाँ था ।

सवाल—बारहमासे मैं जो विभाग किये हैं वे किस उसूल पर रक्खे हैं ?

जवाब—परमार्थी की भक्ति के चाल के अनुसार दरजे रक्खे हैं। स्वामी जी महाराज के बारहमासे में जीवों की हालत दुख सुख की बचपन से बुढ़ापे तक का बयान है और स्थानों का भेद और चढ़ाई का ज़िक्र है; अलावा इस के चितावना जीवों को कि कर्म धर्म से उद्धार नहीं होगा, आशक्ती जीवों की मन इन्द्रियों के भोगों में और प्रगट होना सत्तपुरुष दयाल का और उपदेश करना सुरत शब्द मारग का और सतगुरु भक्ति और सतसंग की महिमा का और भेद काल मत और दयाल मत का ज़िक्र है और हुज़ूर महाराज के बारहमासे में बिरह और अनुराग, सत-संग, अभ्यास और चढ़ाई वग़ैरह का ज़िक्र है।

सवाल—जब निज नाम और निज स्वरूप का भेद बताया गया है तब दूसरे शब्दों मसलन घंटे और ओं वग़ैरह को सुनने और पकड़ने की क्या ज़रूरत है?

जवाब—यह शब्द बाहरी खोल के हैं पहिले जब बाहर का शब्द सुनेगा तब तो अंतर में धसेगा और असली नाम और रूप से मेला होगा और रूप का हमेशा इस के संग रहना निहायत ही ज़रूरी है—नाम में भी कशिश है मगर रूप में उस से विशेष कशिश है और इस को खैंचकर शब्द में लगाता है और संसार रूपी सागर से खेय कर पार उतारता है। और जैसे बाहर

सतगुरु बाहरी बन्धनों और बासनाओं से चित्त को हटाकर अपनी तरफ़ खैंचते हैं वैसे ही अन्तर में जो रचना है उस से हटाकर रूप अपनी तरफ़ खैंचता और सूक्ष्म माया से बचाता है। रूप का दरशन हमेशा नहीं होता है दया से जब पंकज यानी कँवल खिलता है तब रूप दरसता है नहीं तो नाम रूपी खड़ग यानी शमशेर से काल करम का सिर काटा जाता है—

॥ कड़ी ॥

नाम खड़ग ले जूझत मन से काल का सीस कटा री।

गुरु रूप का दरशन त्रिकुटी में होता है—

॥ कड़ी ॥

गुरु मूरत अजब दिखाई। शोभा कुछ कही न जाई॥
नर रूप दिखावें जब ही। मन खैंच चढ़ावें तब ही॥
वे मदद बढ़ावें आगे। मन जुग जुग सोया जागे॥
चढ़ बंक चले त्रिकुटी में। फिर सुन तके सरवर में॥
जहँ शोभा हंसन भारी। वह भूमि लगे अति प्यारी॥
धुन किंगरी बजे करारी। सुन सूरत हुई मतवारी॥
फिर लगा महासुन तारी। जहँ दीप अचिन्त सम्हारी॥

दसवें द्वार में जब पहुँचेगा तब इस की साधगति होगी तब बग़ैर गुरू के इस की चढ़ाइ हो सक्ती है मगर महासुन्न में गुरू की फिर ज़रूरत होती है वहाँ

अन्ध घोर मैँ शब्द भी गुम हो जाता है। जैसे मकड़ी अपने ही मैँ से आप तार निकाल के चढ़ती है वैसे ही सुरत भी अपनी धार को पकड़के चलती है और अपने मैँ से शब्द प्रगट करती है। सुरत-शब्द अभ्यास भी दसवेँ द्वार से शुरू होता है वहाँ सुरत का निज रूप है, और त्रिकुटी तक जो कार्रवाई की जाती है वह करम मैँ दाख़िल है। बाद इस के भक्ति यानी उपासना शुरू होती है।

सवाल—संत जीवौँ के करम अपने ऊपर किस तरह लेते हैँ ?

जवाब—जैसे दो शख़्स हैँ कि उन की आपस मैँ मुहब्बत है, एक बीमार होता है तो दूसरा जब उसके सनमुख बैठता है तब आपस मैँ उन की धारैँ रवाँ होती हैँ यानी बीमार को अपना दोस्त देखकर तसल्ली आती है और दूसरे को अपना दोस्त बीमार देखकर दुख होता है वैसे ही सतगुरु का ध्यान करने से जीवौँ की जो बीमारी है वह सतगुरु किसी क़दर ग्रहन कर लेते हैँ और सतगुरु की चेतन्यता जीवौँ मैँ आती है- इस तरह सतगुरु जीव के करम बड़ी जल्दी और तेज़ी से काटते हैँ यानी हवा की तरह उड़ा देते हैँ और कोई इच्छा उस मैँ बाक़ी नहीँ रहती है—

॥ कड़ी ॥

सुपने इच्छा ना उठे गुरु आन तुम्हारी हो।

सवाल—पुन्य और पाप मैँ क्या फ़र्क़ है ?

जवाब—चेतन्य देश मैँ सुरत की चढ़ाई को पुन्न कहते हैँ ; माया देश मैँ सुरत के तनज़ुल को पाप कहते हैँ।

सवाल—दुख और सुख की तारीफ़ क्या है ?

जवाब—रूह की धार का मन या माया के घाट से जहाँ कि वह रवाँ हैँ ज़बरदस्ती थोड़ा या बहुत हट जाना इस के ज्ञान को दुख कहते हैँ।

रूह की धार का मन या माया के घाट पर जहाँ कि वह मौजूद है थोड़ा या बहुत सिमटाव होना इस के ज्ञान को सुख कहते हैँ।

Perception by a spirit entity of forcible ejectment of spiritual current, whether partial or total, from a mental or material plane which it is occupying, constitutes the sensation of pain.

Perception ny a spirit entity of concentration of spiritual current, whether partial or total, in a mental or material plane which it is occupying, constitutes the sensation of pleasure.

सवाल—संकल्प विकल्प और अनुभव मैँ क्या फ़र्क़ है ?

जवाब—माया के तम मैँ ग़िलाफ़ या अन्धकार से जो फुरना होती है उस को संकल्प विकल्प कहते हैँ।

चेतन्य के प्रकाश से जो ज्ञान होता है उस को अनुभव कहते हैं।

सवाल—कोई कहते हैं कि वेद ब्रह्मा का बचन नहीं है और लोगों ने लिख लिया है क्या यह सही है ?

जवाब—नहीं, वेद और किसी का लिखा हुआ नहीं है। ब्रह्मा के चार मुख हैं उन चारों में से जो धुन निकली उन का इज़हार चारो वेद है—किसी में दवाओं का ज़िक्र है किसी में रोज़गार और गृहस्थ आश्रम का बयान है, यानी बहुत करके प्रवृत्ति और थोड़ी सी निरवृत्ति की चर्चा है। ब्रह्मा बिश्नु महेश तीनों निरंजन के बेटे हैं और चौथी जोति प्रधान हुई वह उन की मा है। चारों ने मिल के तीन लोक की रचना की और आप निरंजन न्यारे हो गये, सत्त पुरुष का भेद थोड़ा सा जो निरंजन को मालूम था वह उस ने छिपा रक्खा और अपने बेटों को भी नहीं बताया क्योंकि उन से रचना करने का काम लेना था जैसे इस सूरज का थोड़ा सा हाल लोगों को मालूम है वैसे ही सत्तपुरुष का ज़रा सा हाल निरंजन को मालूम था उस को गुप्त रक्खा और न्यारे होके आप सत्तपुरुष के ध्यान में मसरूफ़ हुआ और जब २ ज़रूरत हुई तब अवतार धारन करके इस लोक में आया। कृष्न का अवतार सोलह कला का संपूरन था, राम

का अवतार बारह कला धारी था, और परसराम का आठ कला धारी था। निरंजन को नारायन भी कहते हैं।

॥ दोहा ॥

जोति निरंजन दोउ कला, मिलकर उतपति कीन।
पाँच तत्व और चार खान, रच लीने गुन तीन॥
गुन तीनों मिल जक्त का, किया बहुत बिस्तार।
ऋषी मुनी नर देव अदेव रच बाढ़ा हंकार॥

॥सोरठा ॥

ब्रह्मा बिश्नु महेश और चौथी जोती मिली।
भर्म जाल की फाँस, जीव न पावैं निज गली॥

॥ चौपाई ॥

आप निरंजन हुए नियारे। भार सृष्टि सब इन पर डारे॥
दीप रचा इक अपना न्यारा। तामें कीना बहु बिस्तारा॥
पालँग आठ दीप परमाना। जोग आरम्भ कीन बिधि नाना॥
स्वाँस खैंच निज सुन्न चढ़ाये। धुन प्रगटी और वेद उपाये॥
बेद मिले ब्रह्मा को आये। देख वेद ब्रह्मा हरखाये॥
मुख चारो से धुन उच्चारी। ताते बेद भये पुनि चारी॥
ऋषि मुनि मिल फिर किया पसारा। कर्म धर्म और भर्म सम्हारा॥
सिमरित शास्तर बहु बिधि रचे। कर्म धर्म में सब मिल पचे॥
खोज निरंजन किनहुँ न पाया। वेद हु नेत नेत गोहराया॥

सवाल—मुहम्मद ने चाँद के दो टुकड़े कैसे किये ?

जवाब—चाँद से मतलब इस चन्द्रमा से नहीं है

यह तो उपग्रह है, छठे चक्र का चन्द्रमा जो कि दसवें द्वारे से मुताबिक़त रखता है यानी उस की छाया है उस से मतलब है। मुहम्मद ने इस को दो टुकड़े किया यानी उस स्थान को चीर कर पैठे। बानी में भी कहा है—

पाँच रंग तत निरखे सारा। चमक बीजली चन्द्र निहारा।
फोड़ा तिल का द्वारा हो।

मुहम्मद की रसाई सहसदलकँवल के नीचे तक थी उन को दूर ही से घंटे की आवाज़ सुनाई दी और जोत का दरशन परदे में हुआ और बुराक़ यानी बिजली की धार पर सवार होकर मेराज हुआ।

सवाल—प्राणों का अभ्यास किस तरह करते हैं?

जवाब—प्राणायाम की कई एक क्रिया हैं मसलन पूरक कुंभक रेचक यानी प्राणों को खैंचना ठहराना और उतारना—इस अभ्यास में स्वाँसों के रोकने का ख़ास जतन करते हैं, मगर आज कल दुरुस्ती से किसी से नहीं बनता है पागल हो जाते हैं या चोला छूट जाता है क्योंकि इस के संजम बड़े ख़तरनाक हैं। प्राण जड़ हैं, सुरत की ताक़त से चेतन्य हो रहे हैं। छठे चक्र के नीचे ही प्राणों की धार रह जाती है और प्रणव तक उस की हद है। प्राणायाम ऐसा है जैसे किसी को लाठी मार के बेहोश करना इससे तो

क्लोरोफ़ार्म सूँघने से जल्दी और विशेष सुगमता से बेहोशी आती है।

सवाल—गुरू की परख पहिचान किस तरह हो सकती है ?

जवाब—जिस का संसकार है बाहर दरशन करते ही उस के सुरत मन का सिमटाव और खिंचाव होना है और अन्तर में दरशन मिलता है, दूसरों के लिये समझौती है यानी सतसंग और बचन बानी सुनने से परख पहिचान होती है, और तीसरे जो कि भोले भाले हैं दया से अंतर में उन को परचे और दरशन मिलने से परख पहिचान मिलती है।

सवाल-चित्त तो यही चाहता है कि जलदी से काम हो जावे ?

जवाब—चार जनम में काम बनता है, यह कोई देर नहीं है, अगले ज़माने में लोग कितनी काष्टा उठाते थे कई जुग तपस्या करते थे तब किसी बिरले की जोगी गति होती थी और आज कल ऐसी दया है कि घर बैठे हुए जो कोई चित्त से तन मन धन की न्यौछावर करे तो काम उस का फ़िलफ़ौर बनता है।

सवाल—बीमारी से भक्ति में क्या हरज नहीं होता ?

जवाब—बीमारी में भक्त जन के सुरत मन और

ज़ियादा सिमटते और चढ़ते हैं इस में दया है हरज नहीं है।

सवाल—किस हालत में झूठ बोलना जाइज़ है ?

जवाब—"दरोग़ मसलहत आमेज़ बेह अज़ रास्ती फ़ितना-अंगेज़"—मसलन किसी के घर में चोर घुसने वाले हैं या कोई किसी को मारने का इरादा करता है तो उन को झूठ बोलकर बहका देना यह कोई गुनाह नहीं है बल्कि सच से बेहतर है, यानी जिस में किसी दूसरे का हरज नुक़सान न हो और अपनी नीयत साफ़ है तो वह झूठ नहीं है। अगर कोई फ़ुज़ूल बकता रहे कि मेरे बाप दादा ऐसे थे वैसे थे और कहे कि इस में किसी का हर्ज नहीं है इसलिये झूठ नहीं है तो यह नादानी है और ऐसा शख़्स ज़रूर धोका खायगा।

सवाल—चार जनम किस तरह रक्खे गये हैं ?

जवाब—एक एक जनम में तीन २ चक्र तै होते हैं—गुदा इन्द्री नाभी पहिला जनम समझना चाहिये, यहाँ अभी यह नर पशु है, हिरदय चक्र में नर होता है। हिरदय कंठ छठा चक्र दूसरा जनम है, यहाँ देवगति होती है। सहसदलकँवल त्रिकुटी सुन्न में तीसरा जनम होता है, यहाँ हंस गति हासिल होती है। महासुन्न भँवरगुफा सत्तलोक में पहुँच कर चौथा जनम होता

है, यहाँ परमहंस गति को प्राप्त होता है। जो कि संसकारी हैं वह एकही जनम में दो जनम की कार्रवाई कर लेते हैं, फिर दूसरे जनम में इन का तीसरा जनम शुरू होता है—बहुतेरे ऐसे मौजूद हैं। मरने के बाद तो सतसंगी सहसदलकँवल और उस के ऊपर पहुँचाये जाते हैं वहाँ भक्ति कराके फिर यहाँ लाये जाते हैं फिर अभ्यास करके जब चढ़ाई करते हैं तब उन का वह स्थान पक्का होता है। अगर कोई उपदेश लेके छोड़ देता है और अभी भक्ति नहीं की है या किसी ने सिर्फ़ दरशन किया है तो उस पर अभी गोया बीजा पड़ा है, दूसरे जनम में उस का पहिला जनम शुरू होगा।

सवाल—क़ौमी करम किस को कहते हैं ?

जवाब—किसी गाँव या शहर के लोगों के नाक़िस करमों का जब एक ही वक़्त में आकाश मंडल में मजमूआ होता है तब उन का सूक्षम असर मरी अकाल या और कोई मुसीबत का रूप लेकर नाज़िल होता है—इसको क़ौमी (national) करम कहते हैं। जो और देश के लोग वहाँ आकर मरते हैं उन का भी ज़रूर कोई न कोई सम्बंध है तब वहाँ जाकर उनके हिसाब में शामिल हुये।

सवाल—लोग कहते हैं कि सतसंग में कोई जादू है

जो कोई जाता है वह फँस जाता है, ऐसे ही और अनेक तरह की निन्दा करते हैं ?

जवाब—जो सचाई है वही जादू है यानी जिस को कि मालूम होता है कि सच्चा भेद क्या है वह फ़ौरन लग जाता है और जिन को ख़बर नहीं है वे समझते हैं कि जादू है। जो कि निन्दक हैं उन पर बड़ी दया राधास्वामी दयाल की है, वे गोया हर वक़्त सुमिरन करते हैं, उन के चित्त में ऐसा बिरोध होता है कि नाम सुनते ही अन्तर में उन के जलन पैदा होती है गोया माया जलती है। दूसरे जनम में ऐसे जीव बड़े बिरही होते हैं॥

सवाल—अगर किसी को ऐसी मुलाज़िमत है कि कचहरी में उस से किसी को सज़ा देने के लिये राय पूछी जावे और वह ऐसी राय दे जिस से उस को सज़ा मिले तो यह गुनाह है या क्या ?

जवाब—अगर तुम्हारी समझ में ऐसा ही आता है तो उस के कहने में कोई दोष नहीं है क्योंकि अगर कोई बदमाश है जिस के सबब से बहुत से लोगों को तकलीफ़ पहुँचती है वह अगर सज़ायाब होवे तो कुछ हरज नहीं है। मतलब यह है कि जैसा जिस की समझ में आवे उस के कहने में कोई बुराई नहीं है, राय आप से तो कोई नहीं देता है जब पूछा जाता है

तब जो राय हो देने मैं क्या दोष हो सक्ता है। कोई सतसंगी जज है तो उस को फ़ैसला करना पड़ता है, अगर वह मुजरिम को अपनी समझ अनुसार फाँसी भी देदे तो कोई दोष नहीं है, पर जिस पर मालिक की दया है उस को ऐसे झगड़ौं मैं ही नहीं रखता है जिस से कि बृत्ती ख़राब होवे। हम जब हुज़ूर साहब के चरन मैं नहीं आये थे तब हमारे लिये डिपटी मजिस्टे्ट होने का बिलकुल बन्दोबस्त था, मौज ऐसी हुई कि बच गये। और भी दूसरी दफ़े जब हम हुज़ूर साहब के चरनौं मैं आये थे तब तजवीज़ हुई वह भी मौज से टल गई। मतलब यह है कि जिस पर मालिक की दया है उस को ऐसे कामौं मैं नहीं फँसाता है॥

जितने महकमे हैं उन सब में दफ़्तर का काम अच्छा है इस मैं कोई तरद्दुद नहीं है, और पुलिस का काम बहुत ख़राब है। महकमे तालीम भी अच्छा है मगर इस मैं लड़कौं का अफ़सर बनना पड़ता है और गुरुआई का अहङ्कार होता है॥

सवाल—तन की मोटाई परमार्थ मैं मुज़िर है या नहीं ?

जवाब—यह बात नहीं है कि जिन का तन मोटा है उन का मन भी मोटा हो, बहुतेरे ऐसे हैं जिनका

तन बहुत दुबला है तौ भी मन अपनी नटखटी नहीं छोड़ता, पर जो निहायत मोटा तन है वह अच्छा नहीं है।

सवाल—काम (कर्म) की तारीफ़ क्या है?

जवाब—काम (कर्म) चेतन्य का ज़हूरा है।

सवाल—सतसंग का कर्म क्या है?

जवाब—सतसंग में चित्त लगाकर बानी और बचन का श्रवन करना, मन इन्द्रियों के भोगों में न बरतना सुमिरन ध्यान और भजन बिला नाग़ा करना और जब पूरे गुरु मिल जावें तब तन मन धन से उन की सेवा करना और मन की तरंगों को रोकना यही सतसंग का कर्म है।

सवाल—हमारा तो सतसंग में चित्त लगता ही नहीं है इस का क्या इलाज करें?

जवाब—इधर उधर घूम घाम कर आओ तब मन लगेगा अगर सच्ची चाह होगी तो पछताकर फिर तेज़ी से लगेगा क्योंकि मन का स्वभाव है कि जब तक तकलीफ़ उठाकर आप नहीं देख लेता है तब तक किसी का कहना हरगिज़ नहीं मानता है। मालिक देखता है अगर किसी के अभी करम ज़ियादा हैं तो उस को छोड़ देता है जब सौज होती है तब फिर सतसंग और अभ्यास कराके दुरुस्त करता है।

सवाल—सतसंग में रहने पर भी हालत नहीं बदलती और मन सीधा नहीं चलता इस का क्या इलाज करें ?

जवाब—खाना आधा कम करो छः महीने में देखो तो हालत बदलती है कि नहीं पर ऐसा न होवे कि एक ही वक़्त नाक तक भर कर ख़ाना और फिर कहना कि हम तो एकही वक़्त खाना खाते हैं—जहाँ खाना सामने आया बस बैल के माफ़िक़ लग गये पूरन वृत्ति खाने में आ गई, खाने का रूप हो गये और फिर पशुओं के माफ़िक़ सो गये—ऐसे तो साँप भी एकही वक़्त खाकर पड़ा रहता है और बहुतेरे संसारी लोग हैं, मसलन ब्राह्मन, कि एक ही वक़्त डेढ़ सेर आटा खाकर और दो लोटे पानी के चढ़ा कर पड़े रहते हैं। अगर इसी तरह कोई एक वक़्त खाना खायगा तो कुछ फ़ायदा नहीं होगा। इतना तो है कि खाना कम खाने से क्रोध कुछ बढ़ेगा पर दूसरे बिकारी अंग सब ढीले हो जायेंगे और स्थूल अंग सब झड़ जायँगे। अगर ज़ियादा शौक़ीन परमारथ का है तो खाने की मौताद आधी करनी चाहिये।

स्वामी जी महाराज का बचन है कि जो शब्द का रस चाहे तो मुनासिब है कि एक वक़्त खाना खावे

और जो हर रोज़ दो या तीन बार खाना खायगा उस को शब्द का रस हरगिज़ नहीं आवेगा। हुज़ूर साहब को देखा था कई रोज़ बिलकुल खाना छोड़ देते थे और बहुत ही कम खाते थे। जो कि संसकारी है उस को तो सिर्फ़ इशारा काफ़ी है और जो बैल है उस को बहुतेरा समझाओ कुछ भी असर नहीं होता है। खाना जो खाते हैं उस के सूक्षम अंग से मन का मसाला बनता है अगर खाना कम किया जायगा तो बिकारी अंग ज़रूर दुबले पड़ जायँगे।

सवाल—यों तो खाना नहीं घटता दया होवे तो कोई बीमारी हो जावे।

जवाब—बीमारी से खाना छोड़ना इस से यह बेहतर है कि आप से आप कम हो जावे, अगर खाना कम खावे तो बीमारी भी कम होवे। कोई न कोई संसकार ज़रूर है जिस से यह जीव सतसंग में आता है अगर पड़ा रहेगा तो आहिस्ता आहिस्ता एक रोज़ ज़रूर सफ़ाई हो जायगी। बाहर के पत्थर से फिर भी पानी में का पत्थर बेहतर है क्योंकि थोड़ी बहुत शीतलता उस के अन्दर ज़रूर रहती है—

॥ शब्द ॥

पड़ा रह सन्त के द्वारे, बनत बनत बन जाय ॥ टेक ॥

तन मन धन सब अरपन करके, धकै धनी के खाय ॥ १ ॥

खान विर्त आवे सोइ खावे, रहे चरन लौलाय ॥ २ ॥
मुरदा होय टरे नहिँ टारे, लाख कहो समझाय ॥ ३ ॥
पलटूदास काम बन जावे, इतने पर ठहराय ॥ ४ ॥

सवाल—क़र्ज़ जो लिया जाता है उस के बक़ाया को क्या दूसरे जनम में भी देना पड़ता है ?

जवाब—चार जनम तक अदा करना पड़ता है अगर सीधे तौर पर इस जनम में न दिया तो आइंदा किसी जनम मेँ देनदार साहूकार बनता है और लेनदार गुमाश्ता होता है और गुमाश्ता उस का माल हज़म कर लेता है ! ग़रज़ कि लेनदार कभी न कभी किसी सूरत से लेकर छोड़ता है और इस तरह देनदार का कर्म बोझ हलका होता है ।

सवाल—स्वामी जी महाराज के जीवन चरित्र में लिखा हुआ है कि मेरा मत सत्तनाम अनामी का है और राधास्वामी मत हुज़ूर साहब का चलाया हुआ है इस को भी चलने देना इस का क्या मतलब है ?

जवाब—जैसे कि संत जो कहा करते हैँ कि हम संत नहीँ हैँ उन का फ़रमाना ठीक है क्योँकि सन्त कभी झूठ नहीँ बोलते हैँ, इस का मतलब यह है कि संतोँ का निज रूप दयाल देस मेँ है और हिरदय का मुक़ाम दसवाँ द्वार है, जैसे कि जीवोँ का सुरत रूप छठे चक्र मेँ है और हिरदय कौड़ी का मुक़ाम है—

और स्वामी जी महाराज परमसन्त कुल मालिक राधास्वामी दयाल के अवतार थे, उन के हिरदय का स्थान सत्तनाम अनामी था और निज रूप उन का धुरपद राधास्वामी में। यहाँ जो बोलता है वह हिरदय के स्थान पर बैठ कर बोलता है जो कि मुक़ाम मन का है, पस जो जीव कि कहे कि मैं सुरत नहीं हूँ ठीक है, इसी तरह सन्तों का कहना कि हम संत नहीं हैं बजा और दुरुस्त है—ऐसे ही जो कुछ कि स्वामी जी महाराज ने फ़रमाया था दुरुस्त और सही था।

सवाल—सतगुरु सत्तपुरुष के औतार हैं और उन की धार दयाल देश से आकर स्थूल शरीर में कार्रवाई करती है यानी जो जो संत कि आते हैं उन सब की धार एक ही होती है लेकिन बाहरी रूप उन के जुदा जुदा नज़र आते हैं इस की क्या वजह है-जब कि सत्त धार ही रूप धारन करती है तो बाहर का स्वरूप एक सा सब का क्यों नहीं होता है?

जवाब—सतगुरु जिस मंडल में कि रूप धारन करते हैं वह रूप उसी मंडल के मसाले का होता है, ऐसे ही जब इस देश में अवतार लेते हैं तब रूप उनका मा बाप और जिस कुटुम्ब में कि औतार होता है उस के और भी रिश्तेदारों और फ़िरक़े और उस

वक्त की रचना के मसाले और हालत के अनुसार होता है, पर उन के मा बाप के स्थूल शरीर में चेतन्यता विशेष होती है और वह ज़ियादे साफ़ और पवित्र होते हैं। सतगुरु की देह अलबत्ता यहाँ के मसाले की होती है और उस पर रिश्तेदारों वग़ैरह का असर होता है पर सुरत पर किसी का असर नहीं होता है। अब देखिये खत्रियों का रंग गोरा होता है और कायस्थों का कनक रंग, तो मालूम हुआ कि ज़ाति का भी स्थूल शरीर पर असर होता है। बाहर में संतों का सिर्फ़ चेहरा किसी क़दर एक सा होता है और उस में भी ख़ास करके आँख और पेशानी। अगर ग़ौर करके हुज़ूर महाराज और स्वामी जी महाराज की तसवीर देखो तो आँख और पेशानी में कोई फ़र्क़ नज़र नहीं आता—

साध का निरखो आँख और माथा।
सत का नूर रहे जिस साथा॥
यह चिन्ह देख करैं पहिचान।
गुरु पद का जिन हिरदे ज्ञान॥

और मग़ज़ संतों का एक सा होता है ग़रज़ कि ब्रह्मांड तक अलबत्ता थोड़ा फ़र्क़ है पर सत्तलोक में रत्ती भर भी फ़रक़ नहीं है-त्रिकुटी में गुरू का रूप पूरा और साफ़ तौर पर नज़राई पड़ता है। कहनेका

मुद्दा यह है कि अन्तरी स्वरूप सब संत सतगुरौं का एक ही है, बाहरी स्वरूप जिस कुटुम्ब मैं कि पैदा होते हैं उसी की हालत के बमूजिब होता है।

सवाल–सन्तौं की सत्ता या हस्ती (Entity) और व्यक्ति या अहदीयत (Individuality) मैं क्या फ़र्क़ है ?

जवाब–ज़ात मैं फ़र्क़ नहीं है पर द्वारौं के जुदा २ होने से उन की व्यक्ति क़ायम होती है यानी जिस द्वारे से जो संत सुरत आती है वही उस की व्यक्ति है, जैसे समुन्दर मैं से पचास नदी निकल कर अलग २ बह रही हैं तो जल मैं कोई फ़र्क़ नहीं है, द्वारौं के होने से उन मैं फ़र्क़ नज़र आई पड़ता है—द्वारे के बाहर संत गोया जल मैं मछली रूप जुदा जुदा सूरतौं मैं दिखलाई देते हैं पर द्वारे के अन्दर जल में जल रूप हैं।

सवाल–परलै किस को कहते हैं ?

जवाब–जब माया मुंजमिद हालत से परमानु हालत मैं तबदील हो जावे तो उस का नाम परलै है।

सवाल–जो बच्चा कि पैदा होते ही मर जाता है उस की सुरत को नर देही यानी इस जनम का क्या फ़ायदा हुआ ?

जवाब–उस जीव के प्रारब्ध कर्म में इतनी ही देर नर देही मिलना था इस मैं उस जीव का फ़ायदा

और कमबख़्ती दोनौं हो सक्ती हैं, अगर किसी ऊँचे स्थान की सुरत है और किसी ख़ास प्रारब्ध कर्म की वजह से उस को इतनी देर के लिये नर देह मिलना ज़रूर था तो वह इस के बाद अपने ऊँचे स्थान पर चली जाती है इस में उसका फ़ायदा हुआ, और अगर कोई नापाक सुरत है तो इतनी देर नर देह पाकर फिर किसी नीची जोन मैं चली जाती है इस मैं गोया उस की कमबख़्ती है, असल मैं तो जीव अपने प्रारब्ध कर्म के फल की वजह से जन्म लेता है लेकिन कुछ मा बाप का भी लेन देन होता है मगर बहुत कम।

सवाल—जो जीव कि अभ्यास करके ऊँचे लोक तक पहुँच गये फिर उन को नर देही मैं लाने की क्या ज़रूरत है क्या वहाँ से चढ़ाई नहीं हो सकती है?

ज़वाब—ऊँचे लोकौं मैं चढ़ाई का अभ्यास नहीं हो सक्ता क्योंकि अभ्यास उस शरीर से हो सक्ता है कि जिस मैं कुल रचना का नमूना ठीक तौर पर हो यानी तीनौं दरजौं के कुल चक्र कँवल और पदम मय अपनी ताक़त के यानी तरक्क़ी करने की ताक़त के साथ मौजूद हौं, यह बात ऊपर के लोकौं के शरीरौं मैं नहीं है वहाँ कुछ चक्र ठीक हैं और कुछ बराय नाम सिर्फ़ लाइन यानी निशान के तौर पर हैं और उन

मैं तरक़्क़ी की ताक़त नहीं है इस लिये वहाँ चढ़ाई का अभ्यास नहीं हो सक्ता, जिस तरह कि इस रचना मैं सिवाय मनुष्य के और जीवौं जैसे जानवर वग़ैरह मैं हालाँकि दिमाग़ मौजूद है लेकिन उस मैं सोच व बिचार नहीं और इस लिये वह अभ्यास के नाक़ाबिल हैं। मनुष्य मन के स्थान पर जो कि हिरदे चक्र है उस मैं बैठने वाला है, सिर्फ़ वही अभ्यास कर सक्ता है क्यौंकि उस मैं कुल रचना का सिलसिलेवार नमूना ठीक तौर पर मौजूद है, इसी वास्ते कहा है कि ख़ुदा ने आदमी को अपनी ही सूरत पर बनाया है। इस पृथ्वी की चोटी हिरदे चक्र तक है और इस लिये उस मैं या और पृथ्वियौं मैं जो इस के मुक़ाबिले मैं हैं जो मनुष्य हैं उन मैं छः चक्र नीचे के सिलसिलेवार मौजूद हैं और फिर ऊपर के चक्र भी कि जिन के यह खंट चक्र अक्स हैं सिलसिलेवार मौजूद हैं, अब अगर किसी लोक मैं जीव की जो कंठ चक्र मैं ही मिसाल ली जावे तो उस के शरीर मैं कंठ चक्र से तीन नीचे के स्थान यानी हिरदय और नाभी और इन्द्री चक्र तो ठीक हौंगे मगर चौथा यानी गुदा चक्र बिल-कुल बराय नाम लकीर के मुवाफ़िक़ होगा पूरा चक्र न होगा इसी वास्ते उस का बिम्ब यानी वह स्थान कि जिस का गुदा चक्र प्रतिबिम्ब है ठीक न होगा,

इस लिये कुल रचना का नमूना ऐसे शरीर में ठीक तौर पर नहीं हो सक्ता और इसी वास्ते उस शरीर में अभयास चढ़ाई का नहीं हो सक्ता क्योंकि जब पैंदा ग़ायब है तो उस पर इमारत कैसे दुरुस्त बन सकती है और इस मिसाल के ही मुवाफ़िक़ ऊपर के लोकों का हाल समझना चाहिये । चढ़ाई के अभ्यास के लिये ज़रूर नरदेह में आना पड़ेगा और इस बात से तसदीक़ मुसलमानों के इस क़ौल की कि फ़रिश्तों के गुदाचक्र नहीं होता होती है, और मनुष्य कि उस में खट चक्र ठीक तौर पर मौजूद हैं गो उस के कोई अंग भी भंग हों यानी लँगड़ा लूला या अन्धा हो अभ्यास करने के क़ाबिल है—अगर कोई चक्र न होगा तो वह इस देह में ठहर नहीं सकता और जैसे जब तक डोरी नीचे बाँधी न जावे पतंग उड़ नहीं सक्ती इसी तरह अभ्यास के लिये पैंदा यानी तलहटी की ज़रूरत है । यहाँ जो अभ्यास कराया जाता है तो एक डोरी नीचे लगी रहती है ताकि उस के ज़रिये से उतर आवै और फिर चढ़ जावे और इस लिये सिवाय इस देश के और कहीं षट चक्र में या ऊपर के देश में अभ्यास बनना मुमकिन नहीं अलबत्ता वहाँ समझ बूझ माया सूक्ष्म होने से ज़ियादा है सो सन्त बचन सुनाते और प्रीत प्रतीत दृढ़ कराते रहते हैं अभ्यास के लिये फिर यहाँ ही लाना होता है ।

सवाल—भजन में गुनावन ज़ियादा उठती हैं इस का क्या सबब है ?

जवाब—संचित कर्म के जो नक़्श अन्तर में पड़े हुए हैं शब्द धार के प्रगट होने से वह जाग उठते हैं और गुनावन रूप हो कर ख़ारिज किये जाते हैं।

अगर भजन में मन न लगे तो नेम के मुवाफ़िक़ थोड़ी देर भजन करके सुमिरन ध्यान ज़ियादा करना चाहिये ग़रज़ कि जिस काम में मन ज़ियादा लगे उस को ज़ियादा और दूसरे को नेम के मुवाफ़िक़ करे। ध्यान में प्रेम की धार जागती है और वह उन नक़-शों को ढक देती है। मतलब यह है कि जिस में मन और सुरत का सिमटाव हो वही काम ज़िया-दा करे॥

सवाल-मालिक तो अरूप और सर्व व्यापक है उस के ध्यान करने में यह दिक़्क़त पेश आती है कि ध्यान बग़ैर किसी स्वरूप के नहीं हो सकता तो जब मालिक को अरूप कहा है तो कैसे ध्यान किया जा सक्ता क्योंकि सर्व व्यापक किस तरह एक सूरत में मुक़इयद हो सकता है ?

जवाब—जीवों के अन्दर ऊपर के मुक़ामात के सब पट बन्द हैं सिर्फ़ एक ख़फ़ीफ़ धार ऊपर से टपकती है जैसे नदी का पानी बन्द से छन कर ज़रा ज़रा

निकले। अब जो कोई कि अभ्यास करके उन पटौं को खोले या दिमाग़ की सोती हुई ताक़तौं को जगावे और उस की रसाई अंतर मैं निर्मल चेतन्य के भंडार तक हो जावे या उस भंडार से ही कोई लहर उमँड कर इस लोक मैं आवे जो स्वतःसंत कहलाते हैं और उन के अन्तर मैं सब पट खुले होते हैं यह दोनौं मालिक का औतार समझना चाहिये। अब जानना चाहिये कि ध्यान के मानी सिलसिला क़ायम करने के हैं तो जो शब्द कि अंतर मैं हो रहा है उस का सुनना यह अरूपी ध्यान मालिक का है क्यौंकि वह शब्द भी अरूप है और उस के सुनने से सिल-सिला मालिक के साथ क़ायम हो सक्ता है और जो औतार मालिक ने सन्त सतगुरु रूप मैं धरा उस रूप का ध्यान करना यह मालिक का स्वरूपी ध्यान करना है। जैसे मेसमेरिज़म मैं मामूल को कोई चीज़ मिस्ल नाखून बाल या इस्तेमाल की हुई चीज़ किसी शख़्स की छुवा दें तो वह उस शख़्स का हाल बता सकता है और उस के साथ सिलसिला क़ायम हो जाता है। इसी तरह संत सतगुरु के ध्यान के वसीले से कुल मालिक के साथ सिलसिला क़ायम हो जाता है। उन के जिस्म का मसाला भी निहायत सूक्ष्म और महा पवित्र है और जो चीज़ मसलन वस्त्र वग़ैरह उन के

इस्तेमाल मेँ आया हो वह भी पवित्र है क्योँकि उस का उस चेतन्य धार ऊँचे मुक़ाम की से जो सीधी निर्मल चेतन्य के भंडार से संत सतगुरु के अंदर आ रही है संजोग होता है इस वास्ते ऐसी परशादी का मिलना बड़भागता का बाइस है और इसी लिये संत सतगुरु की तसवीर के साथ निहायत ताज़ीम और अदब के साथ बर्ताव करना मुनासिब है और ऐसा बर्ताव अदब और प्यार का निशान है न कि तसवीर से मुक्ती की आस रखना है। जैसे जब कि लार्ड रावर्ट्स ने किसी लड़ाई मेँ फ़तह पाई तो कलकत्ते मेँ उन की तसवीर पर हज़ारोँ हार चढ़ाये गये यह गोया अदब और प्यार का बर्ताव था इसी तरह सतगुरु की तसवीर पर हार चढ़ाना मत्था टेकना अदब और ताज़ीम और मोहब्बत का इज़हार है। सब जीव मिस्ल अंधोँ के हैँ सो अन्धे यहाँ अपना रास्ता टटोल लेते हैँ पर अंतर का मारग और भेद बिना सन्त सतगुरु के बतलाये कोई नहीँ जान सकता है इस वास्ते सन्त सतगुरु के सतसङ्ग और उनके स्वरूप के ध्यान की महिमा भारी है, उन्हीँ के ज़रिये से अरूपी स्वरूप मालिक से मेला होगा।

सवाल—सन्तोँ ने जो चार जनम मुक्ती के लिये मुक़र्रर किये हैँ इस का कोई बाहरी प्रमान भी है या महज़ संतोँ का वचन है इस लिये यक़ीन करना चाहिये ?

जवाब—बाहरी प्रमान तो कोई नहीं है अलबत्ता चार लोक जो बयान किये हैं तो एक एक जन्म में एक एक लोक का हिसाब है। जीवों की चढ़ाई का हाल सन्तों को ही मालूम रहेगा जीवों को कुछ न मालूम होगा, अलबत्ता दूसरे जनम में ख़फ़ीफ़ सा और तीसरे जन्म में ज़ियादातर मालूम होगा। अभी तो यह नर-पशु है फिर नर होगा यानी एक जन्म में गुरु भक्ती पूरन करके सहसदलकँवल को प्राप्त होगा फिर दूसरे जन्म में अभ्यास करके नाम-पद यानी त्रिकुटी में पहुँचेगा उस के बाद तीसरे जन्म में मुक्ति पद यानी दसवाँ द्वार खुलेगा और चौथे जन्म में निज धाम यानी सत्तलोक में रसाई होगी।

आदमियों की मौत छठे चक्र के आगे जो तीसरा तिल यानी श्याम द्वारा है उस में गुज़र कर होती है और चौपायों और दीगर मख़लूक़ की मौत हिरदे चक्र को पार करने पर होती है। इनसान में तो सुरत की ताक़त अव्वल मन आकाश में आती है और फिर मन आकाश से इन्द्रियों में पहुँच कर बाहर की कार्रवाई करती है गोया छठे चक्र से जहाँ कि सुरत की बैठक जिस्म में है वहाँ से बराबर ताक़त आ रही है इस वास्ते इनसान छठे चक्र को पार करके मरता है लेकिन जानवरों में मन आकाश से

ही काम होता है और वहाँ तक खिंचाव होने पर मौत होजाती है यानी जानवर वह है जिस मैं हिरदे चक्र की चेतन्य की ताक़त काम कर रही है।

तीन तीन चक्र के आगे एक एक मैदान बतौर हद्द फ़ासिल के हैं। चिदाकाश जो दरमियान सहसदल-कँवल व छठे चक्र के वाक़े है उस मैं ब्रह्मा बिश्नु और महेश के स्थान उसी तरह हैं जैसे महासुन्न मैं कुछ स्थान कहे गये हैं।

प्रलय या महाप्रलय मैं जीवों के कर्म का ख़याल नहीं होता है आदि कर्म रचना का ख़याल होता है॥

सवाल—अभ्यास के वक़्त जो गुनावन का चक्कर आता और कभी नींद का ग़लबा हो जाता है, और सतसंग मैं भी नींद आ जाती है इस का क्या बाइस है और कैसे दूर हो?

जवाब—इन सब बातों का असली सबब मलीनता है और यह सतसंग और अभ्यास की मदद से रफ़्ते रफ़्ते दूर होगी और इस के लिये इलाज भी है मस-लन जब नींद आवै तो मुँह धोकर टहलना या सत-संग मैं अपने पास वाले से कह देना कि जब नींद आवे तो चुटकी भर ले और या ज़बान को दाँत से दबाकर काटना, और गुनावन के लिये सुमिरन ज़ोर से करना या किसी शब्द की कड़ी का पाठ करना

वग़ैरह २ मगर असली फ़ायदा जब ही होगा जब मन की मलीनता दूर होगी सो नेम के साथ अपना अभ्यास और सतसंग किये जाय और जल्दबाज़ी न करे बल्कि मौज पर इस काम को छोड़ दे क्योंकि जो जल्दी करेगा और ज़ियादा ज़ोर लगावेगा तो कुछ ऊपरी फ़ायदा थोड़ी देर के लिये होना मुमकिन है मगर असली फ़ायदा न होगा—जैसे कि अगर मल पेट में ख़ुश्क हो गया है तो पिचकारी वग़ैरह यानी पानी ज़ोर से छोड़ने से कुछ सफ़ाई और तसकीन हो सक्ती है पर पूरी सफ़ाई जब होगी जब मैल को फुलाने की दवा दी जावे और फिर साफ़ करने की। सतगुरु मौज से इसी तरह सफ़ाई करते हैं यानी इस को पहिले कुछ अर्से तक मुलइयन दवा देंगे कि जिसमें अंतर का मैल फूले और फिर एक दम सफ़ाई कर देंगे। संतों को सफ़ाई की जुगती ख़ूब आती है, मौज से सतसंग में भी दो चार ऐसे शख़्स रहते हैं जो दूसरों की गढ़त करते रहें और मन को भिंचा रक्खें और ऐसे शख़्स हमेशा सतसंग में रक्खे जावेंगे क्योंकि जहाँ गुलाब का फूल होता है उस की हिफ़ाज़त के लिये काँटे ज़रूर होते हैं और जहाँ शहद होता है वो मक्खियाँ ज़रूर होती हैं इससे परख भी साधों की होती है क्योंकि जो गुलाब लेना चाहता है वह काँटों की परवाह नहीं करेगा।

सवाल—महात्माओं के वचन में आया है कि एकांत में बड़ा फ़ायदा है बशर्ते कि सिवाय मालिक के दूसरे का ख़याल न आवे और जो बाहर से एकान्त हुआ और अंतर में ख़याल उठते रहे तो वह शैतान और मन का संग है तो भजन में जो गुनावन उठती हैं वह भी मन का और शैतान का संग हुआ या नहीं?

जवाब—थोड़ा बहुत तो मन का संग बेशक हुआ और उस की हद भी बहुत दूर तक है लेकिन संचित कर्म की वजह से गुनावन उठती हैं और वह करम अभ्यास के वक़्त काटे जाते हैं, जो गुनावनों का साथ न दे और दुनियवी चाह भजन के वक़्त अपनी तरफ़ से न उठावे तो यह मन का मुक़ाबला और लड़ाई करना है न कि संग करना और जो भजन में बैठ कर दुनियवी चाह में मशग़ूल हो जावे तो बेशक शैतान का संग है ॥

सवाल—अगर किसी को सतगुरु का सतसंग हासिल नहीं है तो वह फिर क्या करे ?

जवाब—जो कि सरन में आये हैं उन सब को देर सवेर सतसंग अन्तर और बाहर एक रोज़ ज़रूर मिलेगा। अगर कोई कहे कि जब पचास साठ हज़ार सतसंगी होंगे तब उन को सतसंग कैसे हासिल होगा तो उस का जवाब यह है कि जैसे सतलोक में अनंत

सुरतौं को जब बिना कल्ली पहुँचाया जायगा तब अनंत दीप रचे जायँगे और वहाँ उन सुरतौं का क़याम होगा, पुरुष का दर्शन बिलास और अमीं का अहार मिलता रहेगा, सिर्फ़ फ़ासले का फ़र्क़ होगा यानी दूरी या नज़दीकी होगी वैसे ही यहाँ भी ऐसी कलैं ईजाद की जावेंगी कि जहाँ जहाँ सतसंगी हौंगे वहाँ वहाँ बटन दबाने से पूरे गुरू का दरशन (वह कहीं बिराजमान हौं) मिलेगा, और बचन बिलास सब सुनाई देंगे और देखने मैं आवैंगे, सिर्फ़ दूरी और नज़दीकी का फ़र्क़ होगा।

सवाल–अगर कोई मुअज्जिज़ सतसंगी किसी हाकिम या प्रेमी जन के पास दूसरे सतसंगी की शिकायत करे और उस ने कोई क़ुसूर नहीं किया है तो भी उस पर इलज़ाम आवे तो उस के पिछले कर्म का फल समझना चाहिये या क्या ?

जवाब–अगर क़ुसूर नहीं किया है और पकड़ा जावे तो समझना चाहियें कि पिछले कर्म फल का भोग है॥

सवाल–माया कहाँ से प्रगट हुई ?

जवाब–त्रिकुटी से।

सवाल–दुनियादार जो मरते हैं उन को शब्द सुनाई देता है कि नहीं ?

जवाब–वह ऐसे कुटते पिटते जाते हैं कि शब्द नहीं सुनाई देता, और तीसरे तिल में तो हो कर जाते हैं और जोत का दरशन भी पाते हैं मगर फुरना उठ कर तुरत उन को नीचे गिरा देती है और सुरतें रास्ते में जो तलवार की धार के मुवाफ़िक़ है कट कट कर गिरती हैं, मगर राधास्वामी मत वालों का यह हाल नहीं होता है उन को शब्द साफ़ सुनाई देता है। जिस ने राधास्वामी नाम बाहर से भी सुना है उस का भी बचाव हो जाता है ॥

सवाल–सुरत का जागना किस को कहते हैं ?

जवाब–जिस क़दर जिस का परदा दूर हुआ है उसी क़दर गोया उस की सुरत जागी हुई है ॥

सवाल–मुरदों के नाम पर जो खिलाया जावे तो उनकी रूह को कुछ फ़ायदा हो सक्ता है या नहीं ?

जवाब–हाँ होता है चुनांचि कई मुआमले ऐसे हुए कि मुर्दे के नाम पर जो खिलाया तो उस की रूह ने ख़्वाब में खिलाने वाले से अपनी ख़ुशी ज़ाहिर की और कहा कि अब मैं आराम से हूँ और तकलीफ़ जो पहिले थी अब नहीं है, और जिनको कि खिलाया जाता है जिस दरजे की उनकी रूहानियत है उसी दर्जे का फ़ायदा खिलाने वाले को होता है यानी जहाँ तक रसाई खाने वाले की रूह की है वहाँ तक उस का

असर पहुँचता है और वहां के भंडार से बरषा होती है। फिर जो कोई संतौं को खिलावे और वह खाना उन की देह के पालन मैं काम आवे तो धुर की दया की बरषा उस पर होवे। साधौं के खिलाने का भी कमोबेश यही फ़ायदा है और जब कि खिलाने वाला दूसरे के निमित्त खिलाता है तो सिलसिला उस की रूह का ख़ाह वह कहीं हो क़ायम हो जाता है और उस को फ़ायदा पहुँचता है।

सवाल—खटमल आदिक कीड़ौं के मारने मैं दोष है या नहीं?

जवाब—जहाँ तक हो सके उन को दूर करे मगर चूँकि आदमी का चोला सब से उत्तम है जो इस को नुक़सान पहुँचता हो तो इन को मारने मैं कोई दोष नहीं है।

सवाल—संतौं ने जो हिन्दुस्तान मैं औतार लिया तो और विलायतौं के लोगौं को क्या फ़ायदा हो सक्ता है?

जवाब—संतौं के अवतार लेने से एक दरजे का फ़ायदा तो सिर्फ़ दूसरी विलायतौं को नहीं बल्कि तमाम लोकौं मैं होगा और जो दूसरी विलायतौं मैं अच्छी करनी वाला कोई होगा उस का सिलसिला सतसंग से लग जावेगा॥

———

जीवों की तरह टेकी हो जावें। अगले महात्मा सिर्फ़ एक दो स्थान का भेद बतलाते थे और गुरू के गुप्त होने के बाद आगे का पता उन को न मिलने से वह टेकी रह गये। राधास्वामी दयाल ने शुरू से ही राधास्वामी धाम का इष्ट बँधवाया और सब भेद मंज़िलों का खोल कर सुनाया ताकि सतगुरु के गुप्त होने के बाद कहीं नीचे के स्थान पर ठहर कर टेकी न हो जावें और सतगुरु वक़्त की महिमा की और वक़्तन फ़वक़्तन सतगुरु रूप धारन करके सम्हालते हैं और झूठे और सच्चे गुरू की पहचान ख़ूब खोलकर गाई है इस वास्ते राधास्वामी मत वाले टेकी नहीं रह सकते और वह पूरे और सच्चे गुरू का खोज हमेशा करते रहेंगे। अलावा इस के स्वामी जी महाराज का बचन है कि राजकुल में औतार धारन करेंगे और आम तौर पर राधास्वामी मत जारी किया जायगा। कबीरपंथी और नानक पंथी अब टेकी हो गये हैं क्योंकि उन में कोई भी अभ्यासी नहीं रहा है। जितने कि तारागन नज़र आते हैं वह एक एक सूरज हैं और उन में रचना है और ऐसी पृथ्वियाँ अनंत हैं—फ़िलहाल सतगुरु अगर इस पृथिवी से गुप्त हो गये हैं शायद किसी दूसरी पृथ्वी पर प्रगट होंगे इस में कोई शक नहीं है और उन की दया की धार हर

वक़्त जारी है पर उस की परख नहीं है जब दया से प्रेम प्रगट होगा और सुरत मन सिमटने लगेंगे तब पहिचान आवेगी—कहने का मुद्दा यह है कि हमेशा अभ्यासियों के मौजूद होने और सतगुरु के प्रगट होने से राधास्वामी मत हरगिज़ टेकी नहीं होगा।

सवाल—एक सतगुरु के चोला छोड़ने के बाद दूसरे में धार कैसे आ समाती है ?

जवाब—सतगुरु की धार तीसरे तिल के नीचे नहीं आती है मगर चूँकि सब जीवों को फ़ैज़ पहुँचाना है और सब का उद्धार करना मंजूर है इस लिये गुरुमुख को गुदा चक्र तक उतारते हैं। जब सतगुरु चोला छोड़ते हैं तब जो गुरुमुख है उस की सुरत को तीसरे तिल में सर्बांग करके पहुँचा देते हैं उस वक़्त सब पट उस के खुल जाते हैं तब उस गुरुमुख और सतगुरु में कोई फ़र्क़ बाक़ी नहीं रहता है और चूँकि गुरुमुख से आम फ़ैज़ जीवों को पहुँचाना मंजूर है इस वास्ते उस के यहाँ कुछ अरसे ठहराने के लिये बंधनों का ज़ियादे बोझ उस पर डाला जाता है जैसे ग़ुब्बारे को डोरियों से नीचे बाँध रखते हैं कि कहीं उड़ न जावे॥

सवाल—सतगुरु जब गुप्त होवें तब फिर किस का ध्यान करना चाहिये ?

जवाब—वक़्त के सतगुरु का ध्यान करना चाहिये क्योंकि वह कारकुन रूप हैं, सबब यह कि पहिले सतगुरु के रूप का अक्स जो इस मंडल में पड़ा था वह अब कारकुन इस मण्डल में नहीं है जब सतगुरु वक़्त प्रगट होते हैं तब वह अक्स आप हट जाता है और चेतन्य मण्डल में कोई फ़र्क़ रूप में नहीं रहता और सतगुरु प्रत्यक्ष के रूप में सत्त धार का दरशन होता है मगर इस में एक बात समझ लेना चाहिये कि कुछ फ़ायदा न होगा अगर कोई किसी सतसंगी को पकड़ के उस का ध्यान करेगा—चाहे उस में जो उस की भावना है इस लिये कुछ शांती आजावे पर इस से ऐसा नहीं समझना चाहिये कि वह पूरा गुरू है। ऐसे दो एक झूठे गुरु अब भी मौजूद हैं कि जिन को कितनों ने पूरा गुरू समझ कर धारन किया है वे कहते हैं कि हमारी तरक्क़ी होती है और स्वरूप दरसता है मगर हक़ीक़त में उन को असली तरक़्क़ी की ख़बर नहीं है और वह नहीं जानते हैं कि सतगुरु का स्वरूप प्रगट होना सहज नहीं है और जब प्रगट होता है तब क्या सूरत मन और सुरत की होती है—उनकी भावना का भी क्या ठिकाना है असल में उनके कर्म ही ऐसे हैं तब झूठा गुरू मिला है क्योंकि ऐसा गुरू उन के और सच्चे मालिक के बीच में गोया पर्दा है

दुनिया के लोग भी तो ख़ुदा या ईश्वर को सच्चा मालिक समझ कर बैठे हैं बाइस यह है कि उन के कर्म ऐसे ओछे हैं कि अभी वह पूरे गुरू से मिलने के क़ाबिल नहीं हैं जैसे एक भेड़ के पीछे और कुल भेड़ जाती हैं वही हाल लोगों का हो रहा है। और सत-गुरु जब गुप्त होते हैं तब भी वह धार मौजूद है याने उलट नहीं गई है बल्कि सिमटी हुई है अगर पिंड के ऊपर से उलट जावे तो कार्रवाई बन्द हो जावे—सिमटने से मतलब यह है कि जैसे ज्वार के वक़्त लहर जोश से आती है वैसे नहीं आती—जैसे हुगली नदी ज्वार के वक़्त बहती है। वैसे तो नदी बहुत हैं मगर जिस का रुख़ समुन्दर से मिला हुआ है उस की महिमा ज़ियादा है और उस में भी जिसमें ज्वार भाटा होता है उस की महिमा बिशेष है इसी तरह जिस रूप में कि धार आकर कार्रवाई करती है उस की महिमा भारी है—धार तो एक ही है पहले गोया हु-ग़ली में आती थी अब दूसरी नदी में आती है मगर समुद्र एक ही है वैसे ही भंडार और धार एक ही है सिर्फ़ द्वारे यानी देही का फ़र्क़ है।

सवाल—कहते हैं कि बग़ैर गुरुमुख के सतगुरु की कार्रवाई जैसी कि चाहिये वैसी प्रगट नहीं होती और पूरे तौर से दया नाज़िल नहीं होती यह ठीक है या नहीं?

जवाब—पहली नज़ीर देखो कि कबीर साहब के धर्मदास गुरुमुख थे चूरामन उन के बेटे थे उन के पीछे कोई गुरुमुख नहीं हुआ तब कार्रवाई बन्द हो गई। गुरू नानक साहब के भी इसी तरह जब कोई गुरुमुख न रहा तब कार्रवाई गुम हो गई। दादू साहब के गुरुमुख सुन्दरदास थे उन की और जगजीवन साहब की भी गद्दी इसी तरह गुम होगई। लेकिन मुताबिक़ हुक्म राधास्वामी दयाल के जो बराबर गुरुमुख होते आवेंगे तो फिर स्वतः संत कैसे आवेंगे। जब स्वामी जी महाराज और हुज़ूर महाराज एक दफ़ा बाप और बेटे होकर शाहंशाही ख़ानदान में आवेंगे तो स्वामी जी महाराज स्वतःसंत होकर आवेंगे इस लिये किसी वक़्त गुरुमुख का आना भी बन्द हो जावेगा पर दया बराबर जारी रहेगी।

सवाल—स्वतःसंत और गुरुमुख में क्या भेद है?

जवाब—स्वतःसंत तीसरे तिल के नीचे नहीं उतरते हैं और वहाँ बैठ कर कार्रवाई करते हैं, जैसे ट्रांस यानी बेहोशी की हालत में ऊँचे घाट पर बैठ कर स्थूल शरीर से कार्रवाई की जाती है, और जो गुरुमुख है उस की सुरत नीचे गुदाचक्र तक उतारी जाती है यानी सत्त देश का बीज। यहाँ पिण्ड में इस क़दर नीचे तक उतारा जाता है और इसी से सारी रचना

पवित्र की जाती है यही वजह है कि गुरुमुख की महिमा स्वतःसंत से भी ज़ियादा है क्योंकि उस का फ़ैज़ नीचे तक फैलता है।

॥ कड़ी ॥

गुरुमुख की गति सब से भारी। गुरुमुख कोटिन जीव उबारी।
कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ। कोई न जाने किस समझाऊँ॥

स्वतःसंत वह हैं जो किसी के चेले नहीं हुए हैं और जिन के पट सब खुले हुए हैं और अपने आप कार्रवाई कर सकते हैं और उन के जो निज अंश यानी गुरुमुख हैं उन को पिण्ड से निकाल कर तीसरे तिल में पहुँचाते हैं फिर स्वतःसंत में और उन में कोई फ़र्क़ नही रहता।

सवाल—बग़ैर मदद सतगुरु के चढ़ाई हो सकती है या नहीं ?

जवाब—प्रेम पत्र जिल्द ३ बचन ५ सफ़हा १५० में और भी बचन २ सफ़हा २१ में साफ़ लिखा है कि पिण्ड में सफ़ाई और चढ़ाई बग़ैर मदद और ध्यान गुरु स्वरूप के हो सक्ती है लेकिन पिण्ड के पार चढ़ना बग़ैर मदद और दया संत सतगुरु के मुमकिन नहीं है। गृहस्थ में जो संत होते हैं उन से जीवों का उद्धार होता है जैसे स्वामीजी महाराज हुज़ूर महाराज कबीर साहब

वग़ैरह, तुलसी साहब ग्रहस्थी नहीं थे तब उन की कार्रवाई बंद हो गई यानी उन्हों ने जीवों के उद्धार की कार्रवाई जैसी चाहिये जारी नहीं रक्खी। स्वामी जी महाराज के कोई लड़का नहीं था इस में मौज थी जीवों का ऐसा हाल है कि टेकी हो जाते हैं इसलिये कोई लड़का नहीं हुआ। जब संतों की कार आमद चीज़ का इस क़दर अदब है तो उन का पुत्र जो कि निज अंस और परशादी है उस की किस क़दर न ताज़ीम करना चाहिये मगर लोगों की ऐसी हालत है कि या तो उस को संत करके मानेंगे या उससे झगड़ा करने को तैयार हो जावेंगे यह नामुनासिब है।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के रंग नहीं चढ़ता और जिस क़दर दया होनी चाहिये वैसी नहीं होती ?

जवाब—जब सच्चा ख़ाहिशमंद आता है तब रङ्ग भी चढ़ता है और कार्रवाई भी प्रगट होती है इसलिये जब सच्चा ख़ाहिशमंद आवेगा तब देखा जायगा। जैसे दुकान पर गुमाश्ते और नौकर काम चलाते हैं और जब कोई बड़ा ख़रीदार आता है तब दुकान-दार आप बाहर संदूक़ की कुञ्जी लेकर आता है और सौदा देता है वैसे ही जहाँ कहीं कि सतसंग है सब दुकानें याने शाख़ें हैं जब सच्चा ख़रीदार आवेगा तब दुकानदार भी आकर प्रगट होगा।

सवाल—सतगुरु क्यौँ नहीँ प्रगट होते हैँ ?

जवाब—मन को मारो तन को जारो इन्द्री रोको गुरु चरन मेँ प्रीत करो पिण्ड के पार पहुँचो तो गुरू भी प्रगट होँगे।

सवाल—अगर इस पृथ्वी पर या कहीं और पृथ्वी पर भी सतगुरु मौजूद होँ तो जब गुरुमुख आवेगा तब प्रगट कार्रवाई होगी ?

जवाब—ऐसा नहीँ है, बग़ैर गुरुमुख के भी कार्रवाई होती है-चरनामृत और परशादी तो आगे ही जारी की जाती है जैसे हुज़ूर साहब के प्रगट होने से पहले ही अन्दर गुप्त तौर पर परशादी और चरनामृत मिलता था मगर पूरे तौर से कार्रवाई जैसी कि चाहिये वैसी तब प्रगट होती है जब कि गुरुमुख आता है।

सवाल—स्वामी जी महाराज और हुज़ूर महाराज मैँ धार एक ही थी तो जब दोनौँ मौजूद थे तब इन मैँ क्या फ़र्क़ था ?

जवाब—जैसे समुन्द्र एक होता है उस मैँ से लहरैँ अनन्त उठती हैँ तो जल एकही है इन मैँ कोई फ़र्क़ नहीँ है वैसे ही भंडार एक ही है और जो धारैँ निकलती हैँ उन मैँ भी कोई फ़र्क़ नहीँ है अब इस से कोई मतलब नहीँ है कि कौन सा जल किस लहर मैँ था ज़ात तो एक ही है। या जैसे मुख से आज बोल-

ते हो कल बोल न सको तो रूह एक ही है सिर्फ़ बोलने की कल का फ़र्क़ हो गया, या जैसे बिरती आज एक तरफ़ है कल दूसरी तरफ़, यहाँ बोलनेवाला एक है सिर्फ़ बिरती का फ़र्क़ होता है, तो ख़याल बोलने वाले पर लाना चाहिये न कि बिरती पर।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के क्या कार्रवाई नहीं हो सकती है ?

जवाब—क्यों नहीं हो सकती है—क्या स्वामी जी महाराज फिर नहीं आवेंगे अगर ऐसा हो तो फिर स्वतःसंत का आना बंद हो जायगा शायद अब भी कोई बच्चा स्वतःसंत हो जब मौज होगी तब प्रगट होगा। स्वतःसंत तीसरे तिल के नीचे नहीं आते और वहाँ बैठकर कार्रवाई करते हैं और अपनी निज अंस को गुदाचक्र तक उतार देते हैं उस को गुरुमुख कहते हैं—गुरुमुख से सारी रचना को फ़ैज़ पहुँचता है स्वतःसन्त उस को निकालने के लिये आते हैं और उस की निगरानी करते हैं और जब तीसरे तिल में गुरुमुख की रसाई होती है तब वह स्वतःसन्त से मिल कर एक हो जाता है यानी दोनों का एक रूप हो जाता है या ऐसा समझ लो कि सुरत गुरुमुख है, शब्द गुरू है और असल में दोनों एक ही हैं यानी जहाँ धार ने ठेका लिया वहाँ उस को सुरत कहते हैं

और जो कार्रवाई करनेवाली धार है उस को शब्द कहते हैं ।

सवाल-स्वामी जी महाराज के वक़्त में जब एक अंस थी तब उसी वक़्त दूसरा गुरुमुख भी था गोया तीन धारें एकही वक़्त मौजूद थीं सो यह कैसे हो सकता है ?

जवाब—इस में क्या है दो अंस क्यों चाहे पचास हों इस में कोई बात नहीं है, एक बाप के पाँच सात लड़के नहीं होते हैं ?

सवाल—जो सुरतें दयाल देश में पहुँचती हैं उन में और सतगुरु में क्या फ़र्क होता है ?

जवाब—जो कि पहुँचाई जाती हैं वह हंस होती हैं और जो सन्त हैं वह सत्तपुरुष का अवतार हैं, सन्त गोया बादशाह हैं और हंस रैयत हैं ।

सवाल—जब सतगुरु मौजूद होते हैं तब साध गुरु प्रगट कार्रवाई कर सकते हैं या नहीं ?

जवाब—नहीं, सतगुरु की मौजूदगी में साध गुरु कार्रवाई नहीं करता है ।

सवाल—बूढ़ा गुरुमुख हो सकता है या नहीं वह तो गुरू से पहिले ही मर जायगा ?

जवाब—क्यों नहीं हो सकता है सफ़ेद डाढ़ी पर

नज़र नहीं करनी चाहिये गुरुमुख जब बच्चा है तब भी परमार्थ का ख़याल उस को होता है मगर माया का परदा उस पर डाल देते हैं बल्कि और जीवों से भी ज़ियादा उस को माया में फँसाते हैं और जब बड़ा होता है तब गुरू के सनमुख आने से ही उस के सुरत मन सिमटते हैं और सब भेद उस पर आप से आप खुल जाता है और जो गुरू नहीं भी मिलता है तो भी जब बड़ा होता है आप ही सुरत का खिंचाव होता है और अन्तर में चढ़ाई होती है।

सवाल—बग़ैर गुरुमुख के गुरू कैसे हो सकता है?

जवाब—यह ठीक है बग़ैर बच्चे के मा बाप हो नहीं सकते हैं अगर बच्चा ही नहीं है तो वह कैसे मा बाप हो सकेगा।

सवाल—स्वामी जी महाराज ने एक बार फ़र्माया था कि न मालूम मैं गुरू हूँ या राय सालिगराम साहब (हुज़ूर महाराज) मेरे गुरू हैं इस का क्या मतलब है?

जवाब—धार एक ही है इस में फ़र्क़ नहीं है, अन्स पहिले नीचे उतारी जाती है, वह जब तीसरे तिल में पहुँचती है तब फिर उस में और गुरू में कोई भेद नहीं रहता—ऐसा गुरू और चेला कोई बिरला होता है।

॥ कड़ी ॥

सुरतवन्त अनुरागी सच्चा, ऐसा चेला नाम कहा।
गुरु भी दुर्लभ चेला दुर्लभ, कहीं मौज से मेल मिला॥

सवाल—आज कल चन्द सतसंगी ख़सूस पञ्जाब में बाद गुप्त होने हुज़ूर महाराज के गुरू बन बैठे हैं और बेधड़क प्रसादी देते हैं और कहते हैं कि फ़लाँ मुक़ाम हम को खुल गया है और हम में हुज़ूर प्रगट हुए हैं यह क्या मामला है?

जवाब—यह भी मौज से ही है और इस में भी जीवों की गढ़त है बड़े ग़ुबार लोगों के मनों में भरे थे वह झड़ रहे हैं हुज़ूर महाराज का चुपचाप गुप्त होना बड़ी मसलहत से था, जिन लोगों से कि हुज़ूर महाराज के वक़्त में कुछ अभ्यास नहीं बनता था और सिर्फ़ प्रसादी और चरनामृत वग़ैरह को ही परमार्थ समझते थे अब वह किसी न किसी को पकड़ कर गुड्डा बना कर बिठाते हैं और उस से प्रसादी लेते हैं मगर जो सच्चे परमार्थी हैं उन को भी अगरचि चाह इस क़िसम की है कि संत सतगुरु फिर प्रगट हों और सब कार्रवाई बदस्तूर जारी हो जावे मगर वह जानते हैं कि किसी के बनाने या कहने से सन्त नहीं बन सकते जब उनकी मौज होगी आप प्रगट हो जावेंगे। यह चाह उन की ना मुना-

सिव नहीं है मगर समझना चाहिये कि जो मौज ऐसी जल्दी प्रगट होने की होती तो गुप्त ही क्यों होते जब उन्हों ने देखा कि लोग बाहरी नाच कूद में जो कि आसान बात है बहुत लग रहे हैं और अन्तर अभ्यास में ढीलम ढाल हैं तो दया करके ऐसी मौज फ़रमाई ताकि तड़प लोगों के दिलों में दर्शनों की हो और अन्तर अभ्यास दुरुस्ती से बन आवे सो नादान जीव इस बात को नहीं समझते हैं आप गुरू बन बैठते हैं मगर कुछ हरज नहीं है वह भी दुरुस्त किये जावेंगे और झकोले खाकर सतसंग में लाये जावेंगे ॥

सवाल—मालिक की मौज से जो तरंग पैदा हो और मन की तरंग में किस तरह तमीज़ हो सक्ती है ?

जवाब—जो सत्त की धार से तरंग पैदा हो वह मौज मालिक की समझना चाहिये और जो तरंग कि भोग बिलास की काल पुरुष से पैदा हो वह मन की तरंग है । मौज से तरंग होती है उस में हमेशा परमार्थी फ़ायदा होता है और मन की तरंग हमेशा संसार की तरफ़ झुकाती है । अब अगर सत चेतन की धार से मेला हो तो पहिचान हो सकती है मगर चूंकि वह धार बहुत अन्तर में पोशीदा है और वह भी मन के मुक़ाम पर हो कर आती है और जीव की

बैठक बहुत नीची है इस लिये पहिचान मुश्किल है, अलबत्ते कुछ निशानियों से पहिचान हो सक्ती है—अव्वल तो कार्रवाई का नतीजा देखना चाहिये यानी अगर किसी काम का नतीजा ऐसा हो कि उस में तरक़्क़ी परमार्थ की हो तो वह तरंग मौज की समझना चाहिये और जिस तरंग से संसारी भोग बिलास या मान बड़ाई की चाह या और कोई नतीजा ख़िलाफ़ परमार्थ के ज़ाहिर हो वह मन की तरंग है। दोयम अगर किसी काम के असबाब ख़ुद बख़ुद इकट्ठा हो जावें और फ़ौरन हिलोर थोड़ी उठ कर सहज सुभाव उस काम को किया जावे तो वह मौज से है बशर्ते कि वह काम नाजाइज़ और ख़िलाफ़ परमार्थ के नहीं है लेकिन बाज़ वक़्त नाजाइज़ तरंग से भी कुछ परमार्थी फ़ायदा निकलता है जैसे हुज़ूर महाराज एक चेले का ज़िक्र फ़रमाते थे कि उस के गुरू पूरे महात्मा थे मगर उस चेले में काम अंग विशेष था उन्हों ने एक रोज़ कुछ रुपया देकर उस को कहीं रवाने किया, हरचन्द उस ने उज़्र किया और कहा कि मुझ में यह अंग विशेष है मगर महात्माजी ने कहा कि कुछ परवाह नहीं गुरू सँभालेंगे, आख़िरकार उस को एक बेश्या मिली, चेले ने अपने मन को बहुत कुछ रोका मगर तरंग ऐसी ज़बर थी कि वह

उस के घर गया और रुपया दिया मगर ऐन ख़राबी के वक्त, गुरू महाराज ने उस को दरशन दिये और वह उन के पाँव पर गिरा और दोनों महात्मा के सामने आये और दोनों का परमार्थी लाभ भारी हुआ। मगर यह ख़ास तौर पर है आम तौर पर जिस तरंग से परमार्थी लाभ हो वह मौज से है नहीं तो मन की तरंग है और जो जतन उस से बचने के लिये सन्तों ने बताये हैं उन के मुवाफ़िक़ अमल करके अपना बचाव करना मुनासिब है। सब काम सन्तों की सरन लेकर और दया के आसरे करना चाहिये ताकि उस में बन्धन न होने पावे। जानना चाहिये कि वैसे तो सब जीव सरन में हैं क्योंकि बग़ैर शामिल होने चैतन्य धार के कोई कार्रवाई नहीं हो सकती है, मगर असल सरन में आना यह है कि चैतन्य धार से मेला हो और उस की ओट में आ जावे।

सवाल—यहाँ रचना जब हुई जब कि आद्या सुरतों का बीजा लिये हुए सत्तलोक से उतारी गई तो यहाँ जो सुरतें हैं वह सत्तलोक से आई हैं वह राधास्वामी धाम में कैसे पहुँचाई जा सकती हैं, जिस देश से आई हैं वहाँ तक ही संत पहुँचा सकते हैं?

जवाब—दूरबीन देकर हुजूर राधास्वामी दयाल जो समर्थ हैं उन को राधास्वामी धाम में पहुँचावेंगे।

सवाल—सत्तलोक मैं संत जब कि जल मछली की तरह रहते हैं तो बेशुमार संत होंगे ?

जवाब—बेशक अनंत हैं और वह सब सत्तपुरुष के अंग हैं।

सवाल—कबीर साहब और धरमदास दोनौं संत थे फिर धरमदास पर क्यौं माया का परदा छाया रहा ?

जवाब—मौज से चंद रोज़ के वास्ते दिखाना था कि माया का कैसा ज़बर हिसाब है जैसे सूरज की रोशनी भी बहुत से परदे डालने से किसी क़दर मंदी पड़ जाती है, और हुज़ूर साहब ने फ़रमाया है कि वक़्त मुक़र्रर पर संत प्रगट होते हैं, उन का निज आपा हमेशा रौशन और चेतन्य रहता है, नीचे उतर कर जीवौं की तरह बरतने हैं, मगर और जीवौं की धार मैं और उन की धार में बड़ा फ़र्क़ है और रौ-शनी उन की बराबर जारी रहती है जैसे सूरज जब छिप जाता है तौभी देर तक उस की रोशनी का असर क़ायम रहता है।

सवाल—जीव और सुरत मैं क्य फ़र्क़ है ?

जवाब—सुरत मन के घाट पर उतर कर जीव कह-लाती है।

सवाल—सेवा बानी की अख़ीर कड़ी मैं " जो गावे यह सेवा बानी,, गाने से क्या मतलब है ?

जवाब—हर तरह की सेवा प्रेम और उमंग से जो कोई करके अपनी अंदर की ख़ुशी का जो सेवा करने से हासिल होती है दूसरों पर इज़हार करे इस का नाम गाना है जैसे कहा है—

॥ कड़ी ॥

राधास्वामी, नाम, जो गावे सोई तरे।
कल कलेश सब नाश, सुख पावै सब दुख हरै॥

तो गाने से मतलब यही है कि इस तरह राधा-स्वामी नाम को प्यार और शौक़ के साथ सुमिरै कि वह अन्तर में दरस जावै तो ज़रूर उसके कल कलेश सब नाश हो जावेंगे जैसे कोई शाइर कि उस के अंदर कोई मज़मून दरस जाता है गाकर दूसरों को सुनाता है।

सवाल—ऐसा कहा है कि सतगुरु के सनमुख जो कोई जाता है तो वह उस की उस की समझ माफ़िक़ जवाब देते हैं इस का क्या सबब है ?

जवाब—सतगुरु षटमुखी आईना हैं यानी उन के पिण्ड के चक्र साफ़ हैं उन में कोई मलीनता नहीं है जिस तरह आईने में जैसा रूप निकट आता है वैसा नज़राई पड़ता है वैसे ही सतगुरु के सनमुख जो कोई जैसी भावना लेकर जाता है वैसा ही उस को नज़-राई पड़ता है—

॥ कड़ी ॥

जा की रही भावना जैसी। हरि मूरत देखी तिन तैसी॥

जैसे (thought-reading) अन्तरयामता या मेसमेरिज़्म (mesmerism) मैं दूसरे के अन्तर की कैफ़ियत मालूम कर लेते हैं वैसे ही सतगुरु के सनमुख जो कोई जाता है तो उस का अक्स सतगुरु रूपी आईने पर पड़ता है। आईना किस को कहते हैं जिस मैं किसी चीज़ का अक्स पड़े, इन्द्रियाँ गोया आईना हैं उन मैं भी ख़ास करके आँख कान और जिव्हा इन्द्री आईने के तौर पर कार्रवाई करती हैं मगर जो आँख का आईना है वह सिर्फ़ देखने का काम करता है और कान का सिर्फ़ सुनने का और ज़बान का सिर्फ़ बोलने या चखने का। कहने का मुद्दा यह है कि सतगुरु के सनमुख जो कोई आता है तो उस की छाया उलट कर उन पर पड़ती है इस लिये उस की समझ व ख़ाहिश के माफ़िक़ वह जवाब देते हैं। हुज़ूर साहब के पास अगर कोई आकर इधर उधर की बातैं झूठी सच्ची बनाता था तो आप भी उस से बिलकुल रल मिल जाते थे यानी उसी के माफ़िक़ बोलते थे मगर कुछ झूठ नहीं बोलते थे उसी का परछावाँ था।

सवाल—बारहमासे मैं जो विभाग किये हैं वे किस उसूल पर रक्खे हैं?

जवाब—परमार्थी की भक्ति के चाल के अनुसार दरजे रक्खे हैं। स्वामी जी महाराज के बारहमासे में जीवों की हालत दुख सुख की बचपन से बुढ़ापे तक का बयान है और स्थानों का भेद और चढ़ाई का ज़िक्र है; अलावा इस के चितावना जीवों को कि कर्म धर्म से उद्धार नहीं होगा, आशक्ती जीवों की मन इन्द्रियों के भोगों में और प्रगट होना सत्तपुरुष दयाल का और उपदेश करना सुरत शब्द मारग का और सतगुरु भक्ति और सतसंग की महिमा का और भेद काल मत और दयाल मत का ज़िक्र है और हुज़ूर महाराज के बारहमासे में बिरह और अनुराग, सतसंग, अभ्यास और चढ़ाई वग़ैरह का ज़िक्र है।

सवाल—जब निज नाम और निज स्वरूप का भेद बताया गया है तब दूसरे शब्दों मसलन घंटे और शंख वग़ैरह को सुनने और पकड़ने की क्या ज़रूरत है ?

जवाब—यह शब्द बाहरी खोल के हैं पहिले जब बाहर का शब्द सुनेगा तब तो अंतर में धसेगा और असली नाम और रूप से मेला होगा और रूप का हमेशा इस के संग रहना निहायत ही ज़रूरी है—नाम में भी कशिश है मगर रूप में उस से विशेष कशिश है और इस को खैंचकर शब्द में लगाता है और संसार रूपी सागर से खेय कर पार उतारता है। और जैसे बाहर

सतगुरु बाहरी बन्धनों और बासनाओं से चित्त को हटाकर अपनी तरफ़ खैंचते हैं वैसे ही अन्तर में जो रचना है उस से हटाकर रूप अपनी तरफ़ खैंचता और सूक्ष्म माया से बचाता है। रूप का दरशन हमेशा नहीं होता है दया से जब पंकज यानी कँवल खिलता है तब रूप दरसता है नहीं तो नाम रूपी खड़ग यानी शमशेर से काल करम का सिर काटा जाता है—

॥ कड़ी ॥

नाम खड़ग ले जूझत मन से काल का सीस कटा री।

गुरु रूप का दरशन त्रिकुटी में होता है—

॥ कड़ी ॥

गुरु मूरत अजब दिखाई। शोभा कुछ कही न जाई॥
नर रूप दिखावें जब ही। मन खैंच चढ़ावें तब ही॥
वे मदद बढ़ावें आगे। मन जुग जुग सोया जागे॥
चढ़ बंक चले त्रिकुटी में। फिर सुन तके सरवर में॥
जहँ शोभा हंसन भारी। वह भूमि लगे अति प्यारी॥
धुन किंगरी वजे करारी। सुन सूरत हुइ मतवारी॥
फिर लगा महासुन तारी। जहँ दीप अचिन्त सम्हारी॥

दसवें द्वार में जब पहुँचेगा तब इस की साधगति होगी तब बग़ैर गुरू के इस की चढ़ाइ हो सक्ती है मगर महासुन्न में गुरू की फिर ज़रूरत होती है वहाँ

अन्ध घोर मैं शब्द भी गुम हो जाता है। जैसे मकड़ी अपने ही मैं से आप तार निकाल के चढ़ती है वैसे ही सुरत भी अपनी धार को पकड़के चलती है और अपने मैं से शब्द प्रगट करती है। सुरत-शब्द अभ्यास भी दसवें द्वार से शुरू होता है वहाँ सुरत का निज रूप है, और त्रिकुटी तक जो कार्रवाई की जाती है वह करम मैं दाख़िल है। बाद इस के भक्ति यानी उपासना शुरू होती है।

सवाल—संत जीवौं के करम अपने ऊपर किस तरह लेते हैं ?

जवाब—जैसे दो शख़्स हैं कि उन की आपस मैं मुहब्बत है, एक बीमार होता है तो दूसरा जब उसके सनमुख बैठता है तब आपस मैं उन की धारैं रवाँ होती हैं यानी बीमार को अपना दोस्त देखकर तसल्ली आती है और दूसरे को अपना दोस्त बीमार देखकर दुख होता है वैसे ही सतगुरु का ध्यान करने से जीवौं की जो बीमारी है वह सतगुरु किसी क़दर ग्रहन कर लेते हैं और सतगुरु की चेतन्यता जीवौं मैं आती है- इस तरह सतगुरु जीव के करम बड़ी जल्दी और तेज़ी से काटते हैं यानी हवा की तरह उड़ा देते हैं और कोई इच्छा उस मैं बाक़ी नहीं रहती है—

॥ कड़ी ॥

सुपने इच्छा ना उठे गुरु आन तुम्हारी हो।

सवाल—पुन्य और पाप मेँ क्या फ़र्क़ है ?

जवाब—चेतन्य देश मेँ सुरत की चढ़ाई को पुन्न कहते हैँ ; माया देश मेँ सुरत के तनज़ूज़ुल को पाप कहते हैँ।

सवाल—दुख और सुख की तारीफ़ क्या है ?

जवाब—रूह की धार का मन या माया के घाट से जहाँ कि वह रवाँ हैं ज़बरदस्ती थोड़ा या बहुत हट जाना इस के ज्ञान को दुख कहते हैँ।

रूह की धार का मन या माया के घाट पर जहाँ कि वह मौजूद है थोड़ा या बहुत सिमटाव होना इस के ज्ञान को सुख कहते हैँ।

Perception by a spirit entity of forcible ejectment of spiritual current, whether partial or total, from a mental or material plane which it is occupying, constitutes the sensation of pain.

Perception ny a spirit entity of concentration of spiritual current, whether partial or total, in a mental or material plane which it is occupying, constitutes the sensation of pleasure.

सवाल—संकल्प विकल्प और अनुभव मेँ क्या फ़र्क़ है ?

जवाब—माया के तम मेँ ग़िलाफ़ या अन्धकार से जो फुरना होती है उस को संकल्प विकल्प कहते हैँ।

चेतन्य के प्रकाश से जो ज्ञान होता है उस को अनुभव कहते हैं।

सवाल—कोई कहते हैं कि वेद ब्रह्मा का बचन नहीं है और लोगों ने लिख लिया है क्या यह सही है?

जवाब—नहीं, वेद और किसी का लिखा हुआ नहीं है। ब्रह्मा के चार मुख हैं उन चारों में से जो धुन निकली उन का इज़हार चारो वेद है—किसी में दवा-ओं का ज़िक्र है किसी में रोज़गार और गृहस्थ आ-श्रम का बयान है, यानी बहुत करके प्रवृत्ति और थोड़ी सी निरवृत्ति की चर्चा है। ब्रह्मा बिश्नु महेश तीनों निरंजन के बेटे हैं और चौथी जोति प्रधान हुई वह उन की मा है। चारों ने मिल के तीन लोक की रचना की और आप निरंजन न्यारे हो गये, सत्त पुरुष का भेद थोड़ा सा जो निरंजन को मालूम था वह उस ने छिपा रक्खा और अपने बेटों को भी नहीं बताया क्योंकि उन से रचना करने का काम लेना था जैसे इस सूरज का थोड़ा सा हाल लोगों को मालूम है वैसे ही सत्तपुरुष का ज़रा सा हाल निरंजन को मालूम था उस को गुप्त रक्खा और न्यारे होके आप सत्तपुरुष के ध्यान में मसरूफ़ हुआ और जब २ ज़रूरत हुई तब अवतार धारन करके इस लोक में आया। कृष्न का अवतार सोलह कला का संपूरन था, राम

का अवतार बारह कला धारी था, और परसराम का आठ कला धारी था। निरंजन को नारायन भी कहते हैं।

॥ दोहा ॥

जोति निरंजन सोड कला, मिलकर उतपति कीन।
पाँच तत्व और चार खान, रच लीने गुन तीन॥
गुन तीनों मिल जक्त का, किया बहुत बिस्तार।
ऋषी मुनी नर देव अदेव रच बाढ़ा हंकार॥

॥सोरठा ॥

ब्रह्मा विश्नु महेश और चौथी जोती मिली।
भर्म जाल की फाँस, जीव न पावैं निज गली॥

॥ चौपाई ॥

आप निरंजन हुए नियारे। भार सृष्टि सब इन पर डारे॥
दीप रचा इक अपना न्यारा। तामें कीना बहु बिस्तारा॥
पालँग आठ दीप परमाना। जोग आरम्भ कीन विधि नाना॥
स्वाँस खैंच निज सुन्न चढ़ाये। धुन प्रगटी और वेद उपाये॥
बेद मिले ब्रह्मा को आये। देख वेद ब्रह्मा हरखाये॥
मुख चारों से धुन उच्चारी। ताते बेद भये पुनि चारी॥
ऋषि मुनि मिल फिर किया पसारा। कर्म धर्म और भर्म सम्हारा॥
सिमरित शास्तर बहु बिधि रचे। कर्म धर्म में सब मिल पचे॥
खोज निरंजन किनहुँ न पाया। वेद हु नेत नेत गोहराया॥

सवाल—मुहम्मद ने चाँद के दो टुकड़े कैसे किये ?

जवाब—चाँद से मतलब इस चन्द्रमा से नहीं है

यह तो उपग्रह है, छठे चक्र का चन्द्रमा जो कि दसवें द्वारे से मुताबिक़त रखता है यानी उस की छाया है उस से मतलब है। मुहम्मद ने इस को दो टुकड़े किया यानी उस स्थान को चीर कर पैठे। बानी में भी कहा है—

पाँच रंग तत निरखे सारा। चमक बीजली चन्द्र निहारा।
फोड़ा तिल का द्वारा हो।

मुहम्मद की रसाई सहसदलकँवल के नीचे तक थी उन को दूर ही से घंटे की आवाज़ सुनाई दी और जोत का दरशन परदे में हुआ और बुराक़ यानी बिजली की धार पर सवार होकर मेराज हुआ।

सवाल—प्राणों का अभ्यास किस तरह करते हैं?

जवाब—प्राणायाम की कई एक क्रिया हैं मसलन पूरक कुंभक रेचक यानी प्राणों को खैंचना ठहराना और उतारना—इस अभ्यास में स्वाँसों के रोकने का ख़ास जतन करते हैं, मगर आज कल दुरुस्ती से किसी से नहीं बनता है पागल हो जाते हैं या चोला छूट जाता है क्योंकि इस के संजम बड़े ख़तरनाक हैं। प्राण जड़ हैं, सुरत की ताक़त से चेतन्य हो रहे हैं। छठे चक्र के नीचे ही प्राणों की धार रह जाती है और प्रणव तक उस की हद है। प्राणायाम ऐसा है जैसे किसी को लाठी मार के बेहोश करना इससे तो

क्लोरोफ़ार्म सूँघने से जल्दी और विशेष सुगमता से बेहोशी आती है।

सवाल—गुरू की परख पहिचान किस तरह हो सकती है ?

जवाब—जिस का संसकार है बाहर दरशन करते ही उस के सुरत मन का सिमटाव और खिंचाव होना है और अन्तर मेँ दरशन मिलता है, दूसरोँ के लिये समझौती है यानी सतसंग और बचन बानी सुनने से परख पहिचान होती है, और तीसरे जो कि भोले भाले हैँ दया से अंतर मेँ उन को परचे और दरशन मिलने से परख पहिचान मिलती है।

सवाल-चित्त तो यही चाहता है कि जलदी से काम हो जावे ?

जवाब—चार जनम मेँ काम बनता है, यह कोई देर नहीँ है, अगले ज़माने मेँ लोग कितनी काष्ठा उठाते थे कई जुग तपस्या करते थे तब किसी बिरले की जोगी गति होती थी और आज कल ऐसी दया है कि घर बैठे हुए जो कोई चित्त से तन मन धन की न्यौछावर करे तो काम उस का फ़िलफ़ौर बनता है।

सवाल—बीमारी से भक्ति मेँ क्या हरज नहीँ होता ?

जवाब—बीमारी मेँ भक्त जन के सुरत मन और

ज़ियादा सिमटते और चढ़ते हैँ इस मैँ दया है हरज नहीँ है।

सवाल—किस हालत मैँ झूठ बोलना जाइज़ है ?

जवाब—"दरोग़ मसलहत आमेज़ बेह अज़ रास्ती फ़ितना-अंगेज़"—मसलन किसी के घर मैँ चोर घुसने वाले हैँ या कोई किसी को मारने का इरादा करता है तो उन को झूठ बोलकर बहका देना यह कोई गुनाह नहीँ है बल्कि सच से बेहतर है, यानी जिस मैँ किसी दूसरे का हरज नुक़सान न हो और अपनी नीयत साफ़ है तो वह झूठ नहीँ है। अगर कोई फ़ुज़ूल बकता रहे कि मेरे बाप दादा ऐसे थे वैसे थे और कहे कि इस मैँ किसी का हर्ज नहीँ है इसलिये झूठ नहीँ है तो यह नादानी है और ऐसा शख़्स ज़रूर धोका खायगा।

सवाल—चार जनम किस तरह रक्खे गये हैँ ?

जवाब—एक एक जनम मैँ तीन २ चक्र तै होते हैँ—गुदा इन्द्री नाभी पहिला जनम समझना चाहिये, यहाँ अभी यह नर पशु है, हिरदय चक्र मैँ नर होता है। हिरदय कंठ छठा चक्र दूसरा जनम है, यहाँ देवगति होती है। सहसदलकँवल त्रिकुटी सुन्न मैँ तीसरा जनम होता है, यहाँ हंस गति हासिल होती है। महासुन्न भँवरगुफा सत्तलोक मैँ पहुँच कर चौथा जनम होता

है, यहाँ परमहंस गति को प्राप्त होता है। जो कि संसकारी हैँ वह एकही जनम मैँ दो जनम की कार्रवाई कर लेते हैँ, फिर दूसरे जनम मैँ इन का तीसरा जनम शुरू होता है—बहुतेरे ऐसे मौजूद हैँ। मरने के बाद तो सतसंगी सहसदलकँवल और उस के ऊपर पहुँचाये जाते हैँ वहाँ भक्ति कराके फिर यहाँ लाये जाते हैँ फिर अभ्यास करके जब चढ़ाई करते हैँ तब उन का वह स्थान पक्का होता है। अगर कोई उपदेश लेके छोड़ देता है और अभी भक्ति नहीँ की है या किसी ने सिर्फ़ दरशन किया है तो उस पर अभी गोया बीजा पड़ा है, दूसरे जनम मैँ उस का पहिला जनम शुरू होगा।

सवाल—क़ौमी करम किस को कहते हैँ ?

जवाब—किसी गाँव या शहर के लोगोँ के नाक़िस करमोँ का जब एक ही वक्त मैँ आकाश मंडल मैँ मजमूआ होता है तब उन का सूक्षम असर मरी अकाल या और कोई मुसीबत का रूप लेकर नाज़िल होता है—इसको क़ौमी (national) करम कहते हैँ। जो और देश के लोग वहाँ आकर मरते हैँ उन का भी ज़रूर कोई न कोई सम्बंध है तब वहाँ जाकर उनके हिसाब मैँ शामिल हुये।

सवाल—लोग कहते हैँ कि सतसंग मैँ कोई जादू है

जो कोई जाता है वह फँस जाता है, ऐसे ही और अनेक तरह की निन्दा करते हैं ?

जवाब—जो सचाई है वही जादू है यानी जिस को कि मालूम होता है कि सच्चा भेद क्या है वह फ़ौरन लग जाता है और जिन को ख़बर नहीं है वे समझते हैं कि जादू है। जो कि निन्दक हैं उन पर बड़ी दया राधास्वामी दयाल की है, वे गोया हर वक्त सुमिरन करते हैं, उन के चित्त में ऐसा बिरोध होता है कि नाम सुनते ही अन्तर में उन के जलन पैदा होती है गोया माया जलती है। दूसरे जनम में ऐसे जीव बड़े बिरही होते हैं॥

सवाल—अगर किसी की ऐसी मुलाज़िमत है कि कचहरी में उस से किसी को सज़ा देने के लिये राय पूछी जावै और वह ऐसी राय दे जिस से उस को सज़ा मिले तो यह गुनाह है या क्या ?

जवाब—अगर तुम्हारी समझ में ऐसा ही आता है तो उस के कहने में कोई दोष नहीं है क्योंकि अगर कोई बदमाश है जिस के सबब से बहुत से लोगों को तकलीफ़ पहुँचती है वह अगर सज़ायाब होवे तो कुछ हरज नहीं है। मतलब यह है कि जैसा जिस की समझ में आवै उस के कहने में कोई बुराई नहीं है, राय आप से तो कोई नहीं देता है जब पूछा जाता है

तब जो राय हो देने मैं क्या दोष हो सक्ता है। कोई सतसंगी जज है तो उस को फ़ैसला करना पड़ता है, अगर वह मुजरिम को अपनी समझ अनुसार फाँसी भी देदे तो कोई दोष नहीं है, पर जिस पर मालिक की दया है उस को ऐसे झगड़ौँ मैं ही नहीं रखता है जिस से कि वृत्ती ख़राब होवे। हम जब हुज़ूर साहब के चरन मैं नहीं आये थे तब हमारे लिये डिप्टी मजिस्ट्रेट होने का बिलकुल बन्दोबस्त था, मौज ऐसी हुई कि बच गये। और भी दूसरी दफ़े जब हम हुज़ूर साहब के चरनौं मैं आये थे तब तजवीज़ हुई वह भी मौज से टल गई। मतलब यह है कि जिस पर मालिक की दया है उस को ऐसे कामौं मैं नहीं फँसाता है॥

जितने महकमे हैं उन सब मैं दफ़्तर का काम अच्छा है इस मैं कोई तरद्दुद नहीं है, और पुलिस का काम बहुत ख़राब है। महकमे तालीम भी अच्छा है मगर इस मैं लड़कौं का अफ़सर बनना पड़ता है और गुरुआई का अहङ्कार होता है॥

सवाल—तन की मोटाई परमार्थ मैं मुज़िर है या नहीं ?

जवाब—यह बात नहीं है कि जिन का तन मोटा है उन का मन भी मोटा हो, बहुतेरे ऐसे हैं जिनका

तन बहुत दुबला है तौ भी मन अपनी नटखटी नहीं छोड़ता, पर जो निहायत मोटा तन है वह अच्छा नहीं है।

सवाल—काम (कर्म) की तारीफ़ क्या है ?

जवाब—काम (कर्म) चेतन्य का ज़हूरा है।

सवाल—सतसंग का कर्म क्या है ?

जवाब—सतसंग में चित्त लगाकर बानी और वचन का श्रवन करना, मन इन्द्रियों के भोगों में न बरतना सुमिरन ध्यान और भजन बिला नाग़ा करना और जब पूरे गुरु मिल जावें तब तन मन धन से उन की सेवा करना और मन की तरंगों को रोकना यही सतसंग का कर्म है।

सवाल—हमारा तो सतसंग में चित्त लगता ही नहीं है इस का क्या इलाज करें ?

जवाब—इधर उधर घूम घाम कर आओ तब मन लगेगा अगर सच्ची चाह होगी तो पछताकर फिर तेज़ी से लगेगा क्योंकि मन का स्वभाव है कि जब तक तकलीफ़ उठाकर आप नहीं देख लेता है तब तक किसी का कहना हरगिज़ नहीं मानता है। मालिक देखता है अगर किसी के अभी करम ज़ियादा हैं तो उस को छोड़ देता है जब मौज होती है तब फिर सतसंग और अभ्यास कराके दुरुस्त करता है।

सवाल—सतसंग में रहने पर भी हालत नहीं बदलती और मन सीधा नहीं चलता इस का क्या इलाज करें ?

जवाब—खाना आधा कम करो छः महीने में देखो तो हालत बदलती है कि नहीं पर ऐसा न होवे कि एक ही वक़्त नाक तक भर कर खाना और फिर कहना कि हम तो एकही वक़्त खाना खाते हैं—जहाँ खाना सामने आया बस बैल के माफ़िक़ लग गये पूरन बृत्ति खाने में आ गई, खाने का रूप हो गये और फिर पशुओं के माफ़िक़ सो गये—ऐसे तो साँप भी एकही वक़्त खाकर पड़ा रहता है और बहुतेरे संसारी लोग हैं, मसलन ब्राह्मन, कि एक ही वक़्त डेढ़ सेर आटा खाकर और दो लोटे पानी के चढ़ा कर पड़े रहते हैं। अगर इसी तरह कोई एक वक़्त खाना खायगा तो कुछ फ़ायदा नहीं होगा। इतना तो है कि खाना कम खाने से क्रोध कुछ बढ़ेगा पर दूसरे बिकारी अंग सब ढीले हो जायेंगे और स्थूल अंग सब झड़ जायँगे। अगर ज़ियादा शौक़ीन परमारथ का है तो खाने की मौताद आधी करनी चाहिये।

स्वामी जी महाराज का बचन है कि जो शब्द का रस चाहे तो मुनासिब है कि एक वक़्त खाना खावे

और जो हर रोज़ दो या तीन बार खाना खायगा उस को शब्द का रस हरगिज़ नहीं आवेगा। हुज़ूर साहब को देखा था कई रोज़ बिलकुल खाना छोड़ देते थे और बहुत ही कम खाते थे। जो कि संसकारी है उस को तो सिर्फ़ इशारा काफ़ी है और जो बैल है उस को बहुतेरा समझाओ कुछ भी असर नहीं होता है। खाना जो खाते हैं उस के सूक्षम अंग से मन का मसाला बनता है अगर खाना कम किया जायगा तो बिकारी अंग ज़रूर दुबले पड़ जायँगे।

सवाल—यों तो खाना नहीं घटता दया होवे तो कोई बीमारी हो जावे।

जवाब—बीमारी से खाना छोड़ना इस से यह बेहतर है कि आप से आप कम हो जावे, अगर खाना कम खावे तो बीमारी भी कम होवे। कोई न कोई संसकार ज़रूर है जिस से यह जीव सतसंग में आता है अगर पड़ा रहेगा तो आहिस्ता आहिस्ता एक रोज़ ज़रूर सफ़ाई हो जायगी। बाहर के पत्थर से फिर भी पानी में का पत्थर बेहतर है क्योंकि थोड़ी बहुत शीतलता उस के अन्दर ज़रूर रहती है—

॥ शब्द ॥

पड़ा रह सन्त के द्वारे, बनत बनत बन जाय ॥ टेक ॥

तन मन धन सब अरपन करके, धर्के धनी के खाय ॥ १ ॥

स्वान व्रिर्त आवे सोइ खावे, रहे चरन लौलाय ॥ २ ॥
मुरदा होय टरे नहिं टारे, लाख कहो समझाय ॥ ३ ॥
पलटूदास काम बन जावे, इतने पर ठहराय ॥ ४ ॥

सवाल—क़र्ज़ जो लिया जाता है उस के बक़ाया को क्या दूसरे जनम में भी देना पड़ता है ?

जवाब—चार जनम तक अदा करना पड़ता है अगर सीधे तौर पर इस जनम में न दिया तो आइंदा किसी जनम में देनदार साहूकार बनता है और लेनदार गुमाश्ता होता है और गुमाश्ता उस का माल हज़म कर लेता है ! ग़रज़ कि लेनदार कभी न कभी किसी सूरत से लेकर छोड़ता है और इस तरह देनदार का कर्म बोझ हलका होता है ।

सवाल—स्वामी जी महाराज के जीवन चरित्र में लिखा हुआ है कि मेरा मत सत्तनाम अनामी का है और राधास्वामी मत हुज़ूर साहब का चलाया हुआ है इस को भी चलने देना इस का क्या मतलब है ?

जवाब—जैसे कि संत जो कहा करते हैं कि हम संत नहीं हैं उन का फ़रमाना ठीक है क्योंकि सन्त कभी झूठ नहीं बोलते हैं, इस का मतलब यह है कि संतों का निज रूप दयाल देस में है और हिरदय का मुक़ाम दसवाँ द्वार है, जैसे कि जीवों का सुरत रूप छठे चक्र में है और हिरदय कौड़ी का मुक़ाम है—

और स्वामी जी महाराज परमसन्त कुल मालिक राधास्वामी दयाल के अवतार थे, उन के हिरदय का स्थान सत्तनाम अनामी था और निज रूप उन का धुरपद राधास्वामी में । यहाँ जो बोलता है वह हिरदय के स्थान पर बैठ कर बोलता है जो कि मुक़ाम मन का है, पस जो जीव कि कहे कि मैं सुरत नहीं हूँ ठीक है, इसी तरह सन्तों का कहना कि हम संत नहीं हैं बजा और दुरुस्त है—ऐसे ही जो कुछ कि स्वामी जी महाराज ने फ़रमाया था दुरुस्त और सही था ।

सवाल—सतगुरु सत्तपुरुष के औतार हैं और उन की धार दयाल देश से आकर स्थूल शरीर में कार्रवाई करती है यानी जो जो संत कि आते हैं उन सब की धार एक ही होती है लेकिन बाहरी रूप उन के जुदा जुदा नज़र आते हैं इस की क्या वजह है-जब कि सत्त धार ही रूप धारन करती है तो बाहर का स्वरूप एक सा सब का क्यों नहीं होता है ?

जवाब—सतगुरु जिस मंडल में कि रूप धारन करते हैं वह रूप उसी मंडल के मसाले का होता है, ऐसे ही जब इस देश में अवतार लेते हैं तब रूप उनका मा बाप और जिस कुटुम्ब में कि औतार होता है उस के और भी रिश्तेदारों और फ़िरक़े और उस

वक्त की रचना के मसाले और हालत के अनुसार होता है, पर उन के मा बाप के स्थूल शरीर में चेतन्यता विशेष होती है और वह ज़ियादे साफ़ और पवित्र होते हैं। सतगुरु की देह अलबत्ता यहाँ के मसाले की होती है और उस पर रिश्तेदारों वग़ैरह का असर होता है पर सुरत पर किसी का असर नहीं होता है। अब देखिये खत्रियों का रंग गोरा होता है और कायस्थों का कनक रंग, तो मालूम हुआ कि ज़ाति का भी स्थूल शरीर पर असर होता है। बाहर में संतों का सिर्फ़ चेहरा किसी क़दर एक सा होता है और उस में भी ख़ास करके आँख और पेशानी। अगर ग़ौर करके हुज़ूर महाराज और स्वामी जी महाराज की तसवीर देखो तो आँख और पेशानी में कोई फ़र्क़ नज़र नहीं आता—

साध का निरखो आँख और माथा।
सत का नूर रहे जिस साथा॥
यह चिन्ह देख करें पहिचान।
गुरु पद का जिन हिरदे ज्ञान॥

और मग़ज़ संतों का एक सा होता है ग़रज़ कि ब्रह्मांड तक अलबत्ता थोड़ा फ़र्क़ है पर सत्तलोक में रत्ती भर भी फ़रक़ नहीं है-त्रिकुटी में गुरू का रूप पूरा और साफ़ तौर पर नज़र आई पड़ता है। कहनेका

मुद्दा यह है कि अन्तरी स्वरूप सब संत सतगुरौं का एक ही है, बाहरी स्वरूप जिस कुटुम्ब मैं कि पैदा होते हैं उसी की हालत के बमूजिब होता है।

सवाल—सन्तौं की सत्ता या हस्ती (Entity) और व्यक्ति या अहदीयत (Individuality) मैं क्या फ़र्क़ है ?

जवाब—ज़ात मैं फ़र्क़ नहीं है पर द्वारौं के जुदा २ होने से उन की व्यक्ति क़ायम होती है यानी जिस द्वारे से जो संत सुरत आती है वही उस की व्यक्ति है, जैसे समुन्दर मैं से पचास नदी निकल कर अलग २ बह रही हैं तो जल मैं कोई फ़र्क़ नहीं है, द्वारौं के होने से उन मैं फ़र्क़ नज़र आई पड़ता है—द्वारे के बाहर संत गोया जल मैं मछली रूप जुदा जुदा सूरतौं मैं दिखलाई देते हैं पर द्वारे के अन्दर जल में जल रूप हैं।

सवाल—परलै किस को कहते हैं ?

जवाब—जब माया मुंजमिद हालत से परमानु हालत मैं तबदील हो जावे तो उस का नाम परलै है।

सवाल—जो बच्चा कि पैदा होते ही मर जाता है उस की सुरत को नर देही यानी इस जनम का क्या फ़ायदा हुआ ?

जवाब—उस जीव के प्रारब्ध कर्म में इतनी ही देर नर देही मिलना था इस मैं उस जीव का फ़ायदा

और कमबख़्ती दोनों हो सक्ती हैं, अगर किसी ऊँचे स्थान की सुरत है और किसी ख़ास प्रारब्ध कर्म की वजह से उस को इतनी देर के लिये नर देह मिलना ज़रूर था तो वह इस के बाद अपने ऊँचे स्थान पर चली जाती है इस में उसका फ़ायदा हुआ, और अगर कोई नापाक सुरत है तो इतनी देर नर देह पाकर फिर किसी नीची जोन में चली जाती है इस में गोया उस की कमबख़्ती है, असल में तो जीव अपने प्रारब्ध कर्म के फल की वजह से जन्म लेता है लेकिन कुछ मा बाप का भी लेन देन होता है मगर बहुत कम।

सवाल—जो जीव कि अभ्यास करके ऊँचे लोक तक पहुँच गये फिर उन को नर देही में लाने की क्या ज़रूरत है क्या वहाँ से चढ़ाई नहीं हो सकती है ?

ज़वाब—ऊँचे लोकों में चढ़ाई का अभ्यास नहीं हो सक्ता क्योंकि अभ्यास उस शरीर से हो सक्ता है कि जिस में कुल रचना का नमूना ठीक तौर पर हो यानी तीनों दरजों के कुल चक्र कँवल और पदम मय अपनी ताक़त के यानी तरक्क़ी करने की ताक़त के साथ मौ-जूद हों, यह बात ऊपर के लोकों के शरीरों में नहीं है वहाँ कुछ चक्र ठीक हैं और कुछ बराय नाम सिर्फ़ लाइन यानी निशान के तौर पर हैं और उन

मैँ तरक़्क़ी की ताक़त नहीँ है इस लिये वहाँ चढ़ाई का अभ्यास नहीँ हो सक्ता, जिस तरह कि इस रचना मैँ सिवाय मनुष्य के और जीवौँ जैसे जानवर वग़ैरह मैँ हालाँकि दिमाग़ मौजूद है लेकिन उस मैँ सोच व बिचार नहीँ और इस लिये वह अभ्यास के नाक़ाबिल हैँ। मनुष्य मन के स्थान पर जो कि हिरदे चक्र है उस मैँ बैठने वाला है, सिर्फ़ वही अभ्यास कर सक्ता है क्यौँकि उस मैँ कुल रचना का सिलसिलेवार नमूना ठीक तौर पर मौजूद है, इसी वास्ते कहा है कि ख़ुदा ने आदमी को अपनी ही सूरत पर बनाया है। इस पृथ्वी की चोटी हिरदे चक्र तक है और इस लिये उस मैँ या और पृथ्वियौँ मैँ जो इस के मुक़ाबिले मैँ हैँ जो मनुष्य हैँ उन मैँ छः चक्र नीचे के सिलसिलेवार मौजूद हैँ और फिर ऊपर के चक्र भी कि जिन के यह खंट चक्र अक्स हैँ सिलसिलेवार मौजूद हैँ, अब अगर किसी लोक मैँ जीव की जो कंठ चक्र मैँ ही मिसाल ली जावै तो उस के शरीर मैँ कंठ चक्र से तीन नीचे के स्थान यानी हिरदय और नाभी और इन्द्री चक्र तो ठीक हौँगे मगर चौथा यानी गुदा चक्र बिलकुल बराय नाम लकीर के मुवाफ़िक़ होगा पूरा चक्र न होगा इसी वास्ते उस का बिम्ब यानी वह स्थान कि जिस का गुदा चक्र प्रतिबिम्ब है ठीक न होगा,

इस लिये कुल रचना का नमूना ऐसे शरीर मेँ ठीक तौर पर नहीँ हो सक्ता और इसी वास्ते उस शरीर मेँ अभ्यास चढ़ाई का नहीँ हो सक्ता क्योँकि जब पैँदा ग़ायब है तो उस पर इमारत कैसे दुरुस्त बन सकती है और इस मिसाल के ही मुवाफ़िक़ ऊपर के लोकोँ का हाल समझना चाहिये। चढ़ाई के अभ्यास के लिये ज़रूर नरदेह मेँ आना पड़ेगा और इस बात से तसदीक़ मुसलमानोँ के इस क़ौल की कि फ़रिश्तोँ के गुदाचक्र नहीँ होता होती है, और मनुष्य कि उस मेँ खट चक्र ठीक तौर पर मौजूद हैँ गो उस के कोई अंग भी भंग होँ यानी लँगड़ा लूला या अन्धा हो अभ्यास करने के क़ाबिल है—अगर कोई चक्र न होगा तो वह इस देह मेँ ठहर नहीँ सकता और जैसे जब तक डोरी नीचे बाँधी न जावे पतंग उड़ नहीँ सक्ती इसी तरह अभ्यास के लिये पैँदा यानी तलहटी की ज़रूरत है। यहाँ जो अभ्यास कराया जाता है तो एक डोरी नीचे लगी रहती है ताकि उस के ज़रिये से उतर आवै और फिर चढ़ जावे और इस लिये सिवाय इस देश के और कहीँ षट चक्र मेँ या ऊपर के देश मेँ अभ्यास बनना मुमकिन नहीँ अलबत्ता वहाँ समझ बूझ माया सूक्ष्म होने से ज़ियादा है सो सन्त बचन सुनाते और प्रीत प्रतीत दृढ़ कराते रहते हैँ अभ्यास के लिये फिर यहाँ ही लाना होता है।

सवाल–भजन में गुनावन ज़ियादा उठती हैं इस का क्या सबब है ?

जवाब–संचित कर्म के जो नक़्श अन्तर में पड़े हुए हैं शब्द धार के प्रगट होने से वह जाग उठते हैं और गुनावन रूप हो कर ख़ारिज किये जाते हैं।

अगर भजन में मन न लगे तो नेम के मुवाफ़िक़ थोड़ी देर भजन करके सुमिरन ध्यान ज़ियादा करना चाहिये ग़रज़ कि जिस काम में मन ज़ियादा लगे उस को ज़ियादा और दूसरे को नेम के मुवाफ़िक़ करे। ध्यान में प्रेम की धार जागती है और वह उन नक़-शों को ढक देती है। मतलब यह है कि जिस में मन और सुरत का सिमटाव हो वही काम ज़िया-दा करे॥

सवाल-मालिक तो अरूप और सर्व व्यापक है उस के ध्यान करने में यह दिक़्क़त पेश आती है कि ध्यान बग़ैर किसी स्वरूप के नहीं हो सकता तो जब मालिक को अरूप कहा है तो कैसे ध्यान किया जा सक्ता क्योंकि सर्व व्यापक किस तरह एक सूरत में मुक़इयद हो सकता है ?

जवाब–जीवों के अन्दर ऊपर के मुक़ामात के सब पट बन्द हैं सिर्फ़ एक ख़फ़ीफ़ धार ऊपर से टपकती है जैसे नदी का पानी बन्द से छन कर ज़रा ज़रा

निकले। अब जो कोई कि अभ्यास करके उन पटौं को खोले या दिमाग़ की सोती हुई ताक़तौं को जगावे और उस की रसाई अंतर मैं निर्मल चेतन्य के भंडार तक हो जावे या उस भंडार से ही कोई लहर उमँड कर इस लोक मैं आवे जो स्वतःसंत कहलाते हैं और उन के अन्तर मैं सब पट खुले होते हैं यह दोनौं मालिक का औतार समझना चाहिये। अब जानना चाहिये कि ध्यान के मानी सिलसिला क़ायम करने के हैं तो जो शब्द कि अंतर मैं हो रहा है उस का सुनना यह अरूपी ध्यान मालिक का है क्यौंकि वह शब्द भी अरूप है और उस के सुनने से सिल-सिला मालिक के साथ क़ायम हो सक्ता है और जो औतार मालिक ने सन्त सतगुरु रूप मैं धरा उस रूप का ध्यान करना यह मालिक का स्वरूपी ध्यान करना है। जैसे मेसमेरिज़म मैं मामूल को कोई चीज़ मिस्ल नाख़ून बाल या इस्तेमाल की हुई चीज़ किसी शख़्स की छुवा दें तो वह उस शख़्स का हाल बता सकता है और उस के साथ सिलसिला क़ायम हो जाता है। इसी तरह संत सतगुरु के ध्यान के वसीले से कुल मालिक के साथ सिलसिला क़ायम हो जाता है। उन के जिस्म का मसाला भी निहायत सूक्ष्म और महा पवित्र है और जो चीज़ मसलन वस्त्र वग़ैरह उन के

इस्तेमाल में आया हो वह भी पवित्र है क्योंकि उस का उस चेतन्य धार ऊँचे मुक़ाम की से जो सीधी निर्मल चेतन्य के भंडार से संत सतगुरु के अंदर आ रही है संजोग होता है इस वास्ते ऐसी परशादी का मिलना बड़भागता का बाइस है और इसी लिये संत सतगुरु की तसवीर के साथ निहायत ताज़ीम और अदब के साथ वर्ताव करना मुनासिब है और ऐसा बर्ताव अदब और प्यार का निशान है न कि तसवीर से मुक्ती की आस रखना है। जैसे जब कि लार्ड राबर्ट्स ने किसी लड़ाई में फ़तह पाई तो कलकत्ते में उन की तसवीर पर हज़ारों हार चढ़ाये गये यह गोया अदब और प्यार का बर्ताव था इसी तरह सतगुरु की तसवीर पर हार चढ़ाना मत्था टेकना अदब और ताज़ीम और मोहब्बत का इज़हार है। सब जीव मिस्ल अंधों के हैं सो अन्धे यहाँ अपना रास्ता टटोल लेते हैं पर अंतर का मारग और भेद बिना सन्त सतगुरु के बतलाये कोई नहीं जान सकता है इस वास्ते सन्त सतगुरु के सतसङ्ग और उनके स्वरूप के ध्यान की महिमा भारी है, उन्हीं के ज़रिये से अरूपी स्वरूप मालिक से मेला होगा।

सवाल—सन्तों ने जो चार जनम मुक्ती के लिये मुक़र्रर किये हैं इस का कोई बाहरी प्रमान भी है या महज़ संतों का वचन है इस लिये यक़ीन करना चाहिये ?

जवाब—बाहरी प्रमान तो कोई नहीं है अलबत्ता चार लोक जो बयान किये हैं तो एक एक जन्म में एक एक लोक का हिसाब है। जीवों की चढ़ाई का हाल सन्तों को ही मालूम रहेगा जीवों को कुछ न मालूम होगा, अलबत्ता दूसरे जनम में ख़फ़ीफ़ सा और तीसरे जन्म में ज़ियादातर मालूम होगा। अभी तो यह नर-पशु है फिर नर होगा यानी एक जन्म में गुरु भक्ती पूरन करके सहसदलकँवल को प्राप्त होगा फिर दूसरे जन्म में अभ्यास करके नाम-पद यानी त्रिकुटी में पहुँचेगा उस के बाद तीसरे जन्म में मुक्ति पद यानी दसवाँ द्वार खुलेगा और चौथे जन्म में निज धाम यानी सत्तलोक में रसाई होगी।

आदमियों की मौत छठे चक्र के आगे जो तीसरा तिल यानी श्याम द्वारा है उस में गुज़र कर होती है और चौपायों और दीगर मख़लूक़ की मौत हिरदे चक्र को पार करने पर होती है। इनसान में तो सुरत की ताक़त अव्वल मन आकाश में आती है और फिर मन आकाश से इन्द्रियों में पहुँच कर बाहर की कार्रवाई करती है गोया छठे चक्र से जहाँ कि सुरत की बैठक जिस्म में है वहाँ से बराबर ताक़त आ रही है इस वास्ते इनसान छठे चक्र को पार करके मरता है लेकिन जानवरों में मन आकाश से

ही काम होता है और वहाँ तक खिंचाव होने पर मौत होजाती है यानी जानवर वह है जिस में हिरदे चक्र की चेतन्य की ताक़त काम कर रही है।

तीन तीन चक्र के आगे एक एक मैदान बतौर हद्द फ़ासिल के हैं। चिदाकाश जो दरमियान सहसदल-कँवल व छठे चक्र के वाक़े है उस में ब्रह्मा बिश्नु और महेश के स्थान उसी तरह हैं जैसे महासुन्न में कुछ स्थान कहे गये हैं।

प्रलय या महाप्रलय में जीवों के कर्म का ख़याल नहीं होता है आदि कर्म रचना का ख़याल होता है॥

सवाल—अभ्यास के वक़्त जो गुनावन का चक्कर आता और कभी नींद का ग़लबा हो जाता है, और सतसंग में भी नींद आ जाती है इस का क्या बाइस है और कैसे दूर हो?

जवाब—इन सब बातों का असली सबब मलीनता है और यह सतसंग और अभ्यास की मदद से रफ़्ते रफ़्ते दूर होगी और इस के लिये इलाज भी है मस-लन जब नींद आवै तो मुँह धोकर टहलना या सत-संग में अपने पास वाले से कह देना कि जब नींद आवे तो चुटकी भर ले और या ज़बान को दाँत से दबाकर काटना, और गुनावन के लिये सुमिरन ज़ोर से करना या किसी शब्द की कड़ी का पाठ करना

वग़ैरह २ मगर असली फ़ायदा जब ही होगा जब मन की मलीनता दूर होगी सो नेम के साथ अपना अभ्यास और सतसंग किये जाय और जल्दबाज़ी न करे बल्कि मौज पर इस काम को छोड़ दे क्योंकि जो जल्दी करेगा और ज़ियादा ज़ोर लगावेगा तो कुछ ऊपरी फ़ायदा थोड़ी देर के लिये होना मुमकिन है मगर असली फ़ायदा न होगा—जैसे कि अगर मल पेट में ख़ुश्क हो गया है तो पिचकारी वग़ैरह यानी पानी ज़ोर से छोड़ने से कुछ सफ़ाई और तसकीन हो सक्ती है पर पूरी सफ़ाई जब होगी जब मैल को फुलाने की दवा दी जावे और फिर साफ़ करने की। सतगुरु मौज से इसी तरह सफ़ाई करते हैं यानी इस को पहिले कुछ अर्से तक मुलइयन दवा देंगे कि जिसमें अंतर का मैल फूले और फिर एक दम सफ़ाई कर देंगे। संतों को सफ़ाई की जुगती ख़ूब आती है, मौज से सतसंग में भी दो चार ऐसे शख़्स रहते हैं जो दूसरों की गढ़त करते रहें और मन को भिंचा रक्खें और ऐसे शख़्स हमेशा सतसंग में रक्खे जावेंगे क्योंकि जहाँ गुलाब का फूल होता है उस की हिफ़ाज़त के लिये काँटे ज़रूर होते हैं और जहाँ शहद होता है सो मक्खियाँ ज़रूर होती हैं इससे परख भी साधों की होती है क्योंकि जो गुलाब लेना चाहता है वह काँटों की परवाह नहीं करेगा।

सवाल—महात्माओं के बचन में आया है कि एकांत में बड़ा फ़ायदा है बशर्ते कि सिवाय मालिक के दूसरे का ख़याल न आवे और जो बाहर से एकान्त हुआ और अंतर में ख़याल उठते रहे तो वह शैतान और मन का संग है तो भजन में जो गुनावन उठती हैं वह भी मन का और शैतान का संग हुआ या नहीं?

जवाब—थोड़ा बहुत तो मन का संग बेशक हुआ और उस की हद भी बहुत दूर तक है लेकिन संचित कर्म की वजह से गुनावन उठती हैं और वह करम अभ्यास के वक़्त काटे जाते हैं, जो गुनावनों का साथ न दे और दुनियवी चाह भजन के वक़्त अपनी तरफ़ से न उठावे तो यह मन का मुक़ाबला और लड़ाई करना है न कि संग करना और जो भजन में बैठ कर दुनियवी चाह में मशग़ूल हो जावे तो बेशक शैतान का संग है ॥

सवाल—अगर किसी को सतगुरु का सतसंग हासिल नहीं है तो वह फिर क्या करे?

जवाब—जो कि सरन में आये हैं उन सब को देर सबेर सतसंग अन्तर और बाहर एक रोज़ ज़रूर मिलेगा। अगर कोई कहे कि जब पचास साठ हज़ार सतसंगी होंगे तब उन को सतसंग कैसे हासिल होगा तो उस का जवाब यह है कि जैसे सतलोक में अनंत

सुरतौं को जब बिना करनी पहुँचाया जायगा तब अनंत दीप रचे जायँगे और वहाँ उन सुरतौं का क़याम होगा, पुरुष का दर्शन बिलास और अमीं का अहार मिलता रहेगा, सिर्फ़ फ़ासले का फ़र्क़ होगा यानी दूरी या नज़दीकी होगी वैसे ही यहाँ भी ऐसी कलैं ईजाद की जावैंगी कि जहाँ जहाँ सतसंगी हौंगे वहाँ वहाँ बटन दबाने से पूरे गुरू का दरशन (वह कहीं बिराजमान हौं) मिलेगा, और बचन बिलास सब सुनाई दैंगे और देखने मैं आवैंगे, सिर्फ़ दूरी और नज़दीकी का फ़र्क़ होगा।

सवाल—अगर कोई मुअज्जिज़ सतसंगी किसी हाकिम या प्रेमी जन के पास दूसरे सतसंगी की शिकायत करे और उस ने कोई .क़ुसूर नहीं किया है तो भी उस पर इलज़ाम आवे तो उस के पिछले कर्म का फल समझना चाहिये या क्या ?

जवाब—अगर .क़ुसूर नहीं किया है और पकड़ा जावे तो समझना चाहियें कि पिछले कर्म फल का भोग है॥

सवाल—माया कहाँ से प्रगट हुई ?

जवाब—त्रिकुटी से।

सवाल—दुनियादार जो मरते हैं उन को शब्द सुनाई देता है कि नहीं ?

जवाब—वह ऐसे कुटते पिटते जाते हैं कि शब्द नहीं सुनाई देता, और तीसरे तिल में तो हो कर जाते हैं और जोत का दरशन भी पाते हैं मगर फुरना उठ कर तुरत उन को नीचे गिरा देती है और सुरतें रास्ते में जो तलवार की धार के मुवाफ़िक़ है कट कट कर गिरती हैं, मगर राधास्वामी मत वालों का यह हाल नहीं होता है उन को शब्द साफ़ सुनाई देता है। जिस ने राधास्वामी नाम बाहर से भी सुना है उस का भी बचाव हो जाता है ॥

सवाल—सुरत का जागना किस को कहते हैं ?

जवाब—जिस क़दर जिस का परदा दूर हुआ है उसी क़दर गोया उस की सुरत जागी हुई है ॥

सवाल—मुरदों के नाम पर जो खिलाया जावे तो उनकी रूह को कुछ फ़ायदा हो सक्ता है या नहीं ?

जवाब—हाँ होता है चुनांचि कई मुआमले ऐसे हुए कि मुर्दे के नाम पर जो खिलाया तो उस की रूह ने ख़्वाब में खिलाने वाले से अपनी ख़ुशी ज़ाहिर की और कहा कि अब मैं आराम से हूँ और तकलीफ़ जो पहिले थी अब नहीं है, और जिनको कि खिलाया जाता है जिस दरजे की उनकी रूहानियत है उसी दर्जे का फ़ायदा खिलाने वाले को होता है यानी जहाँ तक रसोई खाने वाले की रूह की है वहाँ तक उस का

असर पहुँचता है और वहां के भंडार से बरपा होती है। फिर जो कोई संतौं को खिलावे और वह खाना उन की देह के पालन मैं काम आवे तो धुर की दया की बरषा उस पर होवे। साधौं के खिलाने का भी कमोबेश यही फ़ायदा है और जब कि खिलाने वाला दूसरे के निमित्त खिलाता है तो सिलसिला उस की रूह का ख़्वाह वह कहीं हो क़ायम हो जाता है और उस को फ़ायदा पहुँचता है।

सवाल—खटमल आदिक कीड़ौं के मारने मैं दोष है या नहीं?

जवाब—जहाँ तक हो सके उन को दूर करे मगर चूँकि आदमी का चोला सब से उत्तम है जो इस को नुक़सान पहुँचता हो तो इन को मारने मैं कोई दोष नहीं है।

सवाल—संतौं ने जो हिन्दुस्तान मैं औतार लिया तो और विलायतौं के लोगौं को क्या फ़ायदा हो सक्ता है?

जवाब—संतौं के अवतार लेने से एक दरजे का फ़ायदा तो सिर्फ़ दूसरी विलायतौं को नहीं बल्कि तमाम लोकौं मैं होगा और जो दूसरी विलायतौं मैं अच्छी करनी वाला कोई होगा उस का सिलसिला सतसंग से लग जावेगा॥